श्रीकृष्णका उद्धवको गोकुल भेजना, उद्धवका गोकुलमें सत्कार तथा उनका वृन्दावन आदि सभी वनोंकी शोभा देखते हुए राधिकाके पास पहुँचना और राधास्तोत्रद्वारा उनका स्तवन करना

श्रीभगवान्‌ने कहा—तात! कर्मफल-भोगके अनुसार संयोग और उसीसे वियोग भी होता है तथा उसीसे क्षणमात्रमें दर्शन भी प्राप्त हो जाता है। भला, उस कर्मभोगको कौन मिटा सकता है? पिताजी! उद्धव गमनागमनका प्रयोजन बतलायेंगे। मैं उन्हें शीघ्र ही भेजता हूँ। तत्पश्चात् आपको भी सब मालूम हो जायगा। वे गोकुलमें जाकर यशोदा, रोहिणी, गोपिकाओं, ग्वालबालों और उस प्राणप्यारी राधिकाको समझायेंगे—श्रीकृष्ण यों कह ही रहे थे कि वहाँ वसुदेव, देवकी, बलदेव, उद्धव तथा अक्रूर शीघ्र ही आ पहुँचे।

वसुदेवने कहा—नन्दजी! तुम तो बलवान्, ज्ञानी, मेरे सद्बन्धु और सखा हो; अतः मोहको त्याग दो और घरको प्रस्थान करो। यह श्रीकृष्ण जैसे मेरा बच्चा है, उसी तरह तुम्हारा भी है। मित्र! मथुरानगरी गोकुलसे दूर नहीं है; वह तो उसके दरवाजेके समान है। अतः नन्दजी! सदा आनन्द-महोत्सवके अवसरपर तुम्हें यह पुत्र देखनेको मिलेगा।

श्रीदेवकीने कहा—नन्दजी! यह श्रीकृष्ण जैसे हम दोनोंका पुत्र है; उसी तरह आपका भी है—यह निश्चित है; फिर किसलिये आपका शरीर शोकसे मुरझाया हुआ दीख रहा है? श्रीकृष्ण तो बलदेवके साथ आपके महलमें ग्यारह वर्षोंतक सुखपूर्वक रह चुका है, तब आप थोड़े दिनोंके वियोगसे ही शोकग्रस्त कैसे हो जायँगे? (यदि ऐसी बात है तो) कुछ दिनोंतक मथुरामें ही इस पुत्रके साथ आप रहिये और उसके पूर्णिमाके चन्द्रमाके समान कान्तिमान् मुखका अवलोकन कीजिये तथा अपना जन्म सफल कीजिये।

तब श्रीभगवान् बोले—उद्धव! तुम सुख-पूर्वक गोकुल जाओ। भद्र! तुम्हारा कल्याण होगा। तुम हर्षपूर्वक गोकुलमें जाकर मेरेद्वारा दिये गये शोकका विनाश करनेवाले आध्यात्मिक ज्ञानसे माता यशोदा, रोहिणी, ग्वालबाल-समूह, मेरी राधिका और गोपिकाओंको सान्त्वना दो। शोकके कारण नन्दजी मेरी माताकी आज्ञासे अब यहीं रहें। तुम नन्दजीका ठहरना और मेरी विनय यशोदाको बतला देना।—यों कहकर श्रीकृष्ण पिता, माता, बलराम और अक्रूरके साथ तुरंत ही महलके भीतर चले गये। नारद! उद्धव मथुरामें रात बिताकर प्रातःकाल शीघ्र ही रमणीय वृन्दावन नामक वनके लिये प्रस्थित हुए।

श्रीनारायण कहते हैं—नारद! श्रीकृष्णकी प्रेरणासे उद्धव हर्षपूर्वक गणेश्वरको प्रणाम करके नारायण, शम्भु, दुर्गा, लक्ष्मी और सरस्वतीका स्मरण करते हुए मन-ही-मन गङ्गा और उस दिशाके स्वामी महेश्वरका ध्यान करके मङ्गल-सूचक शकुनोंको देखते हुए आगे बढ़े। उन्हें मार्गमें दुन्दुभि और घण्टाका शब्द, शङ्खध्वनि, हरिनाम-संकीर्तन और मङ्गल-ध्वनि सुनायी पड़ी। इस प्रकार वे मार्गमें पति-पुत्रवती साध्वी नारी, प्रज्वलित दीप, माला, दर्पण, जलसे परिपूर्ण घट, दही, लावा, फल, दूर्वाङ्कुर, सफेद धान, चाँदी, सोना, मधु, ब्राह्मणोंका समूह, कृष्णसार मृग, साँड़, घी, गजराज, नरेश्वर, श्वेत रंगका घोड़ा, पताका, नेवला, नीलकण्ठ, श्वेत पुष्प और चन्दन आदि कल्याणमय वस्तुओंको देखते हुए वृन्दावन नामक वनमें जा पहुँचे। वहाँ उन्हें सामने ही भाण्डीर-वट नामक वृक्ष दीख पड़ा; जिसका रंग लाल था तथा जो अविनाशी, कोमल, पुण्यदाता और अभीष्ट तीर्थ है। उसके बाद लाल रंगके गहनोंसे सजे हुए सुन्दर वेषधारी बालकोंको देखा।

वे बाल-कृष्णका नाम ले-लेकर शोकवश रो रहे थे। उन्हें आश्वासन देकर उद्धव आनन्दपूर्वक नगरमें प्रवेश करके कुछ दूर आगे गये। तब उन्हें वह नन्दभवन दिखायी दिया, जिसे विश्वकर्माने बनाया था। उसका निर्माण मणियों और रत्नोंसे हुआ था। उसमें मोती, माणिक्य और हीरे जड़े हुए थे। वह अमूल्य रत्नोंके बने हुए मनोरम कलशोंसे सुशोभित था। नाना प्रकारकी चित्रकारी दरवाजेकी शोभा बढ़ा रही थी। उसे देखकर उद्धव हर्षपूर्वक उसके भीतर प्रविष्ट हुए और उसके आँगनमें पहुँचकर तुरंत ही रथसे उतरकर भूतलपर खड़े हो गये। उन्हें देखकर यशोदा और रोहिणीने तुरंत ही उनका कुशल-समाचार पूछा और आनन्दमग्न हो उन्हें आसन, जल, गौ और मधुपर्क निवेदित किया। तदनन्तर वे पूछने लगीं—'उद्धव! नन्दजी कहाँ हैं? तथा बलराम और श्रीकृष्ण कहाँ हैं? वह सब वृत्तान्त ठीक-ठीक बतलाओ।' तब उद्धवने क्रमशः कहना आरम्भ किया—'यशोदे! सुनो, वे सब सर्वथा सकुशल हैं; नन्दजी आनन्दपूर्वक हैं। वे श्रीकृष्ण और बलरामके साथ कुछ विलम्बसे आयेंगे; क्योंकि वहाँ श्रीकृष्णके उपनयन-संस्कारतक ठहरेंगे। मैं विधिपूर्वक तुम लोगोंका कुशल-समाचार जानकर मथुरा लौट जाऊँगा।' इस मङ्गल-समाचारको सुनकर यशोदा और रोहिणी आनन्दविभोर हो गयीं; उन्होंने ब्राह्मणको बुलाकर रत्न, सुवर्ण और उत्तम वस्त्र प्रदान किया। तत्पश्चात् उद्धवको अमृतोपम मिष्टान्न भोजन कराया तथा उन्हें उत्तम मणि, रत्न और हीरे भेंटमें दिये। फिर नाना प्रकारके माङ्गलिक बाजे बजवाये, मङ्गल-कार्य कराया, ब्राह्मणोंको जिमाया और वेदपाठ करवाया। फिर परमानन्दपूर्वक नाना प्रकारके उपहार, नैवेद्य, पुष्प, धूप, दीप, चन्दन, वस्त्र, ताम्बूल, मधु, गो-दुग्ध, दधि और घृत आदि सामग्रियोंसे ब्राह्मणद्वारा सर्वव्यापी भगवान् शंकरका पूजन सम्पन्न किया। मुने! तदनन्तर षोडशोपचारकी सामग्रियों और अनेक प्रकारकी बलिसे श्रीवृन्दावनकी अधिष्ठात्री देवीकी पूजा की और श्रीकृष्णके कल्याणके लिये तुरंत ही ब्राह्मणोंको सौ सूधी भैंसें, एक हजार बकरियाँ, पंद्रह हजार शुद्ध भेंड़, सौ मोहरें तथा सौ गायें दक्षिणामें दीं। फिर बारंबार आदरसहित उद्धवका सेवा-सत्कार किया।

तत्पश्चात् उद्धव यशोदा, रोहिणी, ग्वालबालों, वृद्धों और सभी गोपियोंको भलीभाँति आश्वासन देकर रासमण्डल देखनेके लिये गये। वहाँ उन्होंने रमणीय रासमण्डलको देखा, जो चन्द्रमण्डलके समान गोलाकार और सैकड़ों केलेके खंभोंसे सुशोभित था। तदनन्तर रासमण्डलकी शोभा, असंख्य गोपी तथा श्रीकृष्ण ही आ गये—इस अनुमानसे असंख्य गोपोंको प्रतीक्षा करते देखा। फिर यमुनाकी प्रदक्षिणा करके उद्धवने चन्दन, चम्पक, यूथिका, केतकी, माधवी, मौलसिरी, अशोक, काञ्चन, कर्णिका आदि वनोंकी प्रदक्षिणा की। फिर आनन्दपूर्ण मनसे नागेश्वर, लवङ्ग, शाल, ताल, हिंताल, पनस, रसाल, मन्दार आदि काननोंको देखते हुए रमणीय कुञ्जवनके दर्शन करके अत्यन्त मधुर रमणीय मधुकाननमें प्रवेश किया। पुनः बदरीवनमें जानेके बाद कदलीवनमें जाकर अति निभृत स्थानमें श्रीराधिकाके आश्रमके दर्शन किये। वहाँकी दिव्य विलक्षण शोभाको देखनेके बाद वे अन्तिम द्वारपर पहुँचे। सखियोंने उनका स्वागत करके उन्हें राधाके पास पहुँचा दिया। उद्धवने आश्चर्यचकित कर देनेवाली राधाको सामने देखा। वे चन्द्रकलाके समान सुन्दरी थीं, उनके नेत्र पूर्णतया खिले हुए कमलके सदृश थे, उन्होंने भूषणोंका त्याग कर दिया था, केवल कानोंमें सुवर्णके रंग-बिरंगे कुण्डल झलमला रहे थे, अत्यन्त क्लेशके कारण उनका मुख लाल हो गया था, वे शोकसे मूर्च्छित हो

भूमिपर पड़ी हुई रो रही थीं, उनकी चेष्टाएँ शान्त थीं, उन्होंने आहारका त्याग कर दिया था, उनके अधर और कण्ठ सूख गये थे, केवल कुछ-कुछ साँस चल रही थी। उन्हें इस अवस्थामें देखकर भक्त उद्धवके सर्वाङ्गमें रोमाञ्च हो आया। वे भक्तिपूर्वक सिर झुकाकर उन्हें प्रणाम करते हुए बोले।

उद्धवने कहा—मैं श्रीराधाके उन चरणकमलोंकी वन्दना करता हूँ, जो ब्रह्मा आदि देवताओंद्वारा वन्दित हैं तथा जिनकी कीर्तिके कीर्तनसे ही तीनों भुवन पवित्र हो जाते हैं। गोकुलमें वास करनेवाली राधिकाको बारंबार नमस्कार। शतशृङ्गपर निवास करनेवाली चन्द्रवतीको नमस्कार-नमस्कार। तुलसीवन तथा वृन्दावनमें बसनेवालीको नमस्कार-नमस्कार। रासमण्डलवासिनी रासेश्वरीको नमस्कार-नमस्कार। विरजाके तटपर वास करनेवाली वृन्दाको नमस्कार-नमस्कार। वृन्दावनविलासिनी कृष्णाको नमस्कार-नमस्कार। कृष्णप्रियाको नमस्कार। शान्ताको पुनः-पुनः नमस्कार। कृष्णके वक्षःस्थलपर स्थित रहनेवाली कृष्णप्रियाको नमस्कार-नमस्कार। वैकुण्ठवासिनीको नमस्कार। महालक्ष्मीको पुनः-पुनः नमस्कार। विद्याकी अधिष्ठात्री देवी सरस्वतीको नमस्कार-नमस्कार। सम्पूर्ण ऐश्वर्योंकी अधिदेवी कमलाको नमस्कार-नमस्कार। पद्मनाभकी प्रियतमा पद्माको बारंबार प्रणाम। जो महाविष्णुकी माता और पराद्या हैं; उन्हें पुनः-पुनः नमस्कार। सिन्धुसुताको नमस्कार। मर्त्यलक्ष्मीको नमस्कार-नमस्कार। नारायणकी प्रिया नारायणीको बारंबार नमस्कार। विष्णुमायाको मेरा नमस्कार प्राप्त हो। वैष्णवीको नमस्कार-नमस्कार। महामायास्वरूपा सम्पदाको पुनः-पुनः-नमस्कार। कल्याणरूपिणीको नमस्कार। शुभाको बारंबार नमस्कार। चारों वेदोंकी माता और सावित्रीको पुनः-पुनः नमस्कार। दुर्गविनाशिनी दुर्गादेवीको बारंबार नमस्कार। पहले सत्ययुगमें जो सम्पूर्ण देवताओंके तेजोंमें अधिष्ठित थीं; उन देवीको तथा प्रकृतिको नमस्कार-नमस्कार। त्रिपुरहारिणीको नमस्कार। त्रिपुराको पुनः-पुनः नमस्कार। सुन्दरियोंमें परम सुन्दरी निर्गुणाको नमस्कार-नमस्कार। निद्रास्वरूपाको नमस्कार और निर्गुणाको बारंबार नमस्कार। दक्षसुताको नमस्कार और सत्याको पुनः-पुनः नमस्कार। शैलसुताको नमस्कार और पार्वतीको बार-बार नमस्कार। तपस्विनीको नमस्कार-नमस्कार और उमाको बारंबार नमस्कार। निराहारस्वरूपा अपर्णाको पुनः-पुनः नमस्कार। गौरीलोकमें विलास करनेवाली गौरीको बारंबार नमस्कार। कैलासवासिनीको नमस्कार और माहेश्वरीको नमस्कार-नमस्कार। निद्रा, दया और श्रद्धाको पुनः-पुनः नमस्कार। धृति, क्षमा और लज्जाको बारंबार नमस्कार। तृष्णा, क्षुत्स्वरूपा और स्थितिकर्त्रीको नमस्कार-नमस्कार। संहाररूपिणीको नमस्कार और महामारीको पुनः-पुनः नमस्कार। भया, अभया और मुक्तिदाको नमस्कार-नमस्कार। स्वधा, स्वाहा, शान्ति और कान्तिको बारंबार नमस्कार। तुष्टि, पुष्टि और दयाको पुनः-पुनः नमस्कार। निद्रास्वरूपाको नमस्कार-नमस्कार। क्षुत्पिपासास्वरूपा और लज्जाको बारंबार नमस्कार।

धृति, चेतना और क्षमाको बारंबार नमस्कार। जो सबकी माता तथा सर्वशक्तिस्वरूपा हैं; उन्हें नमस्कार-नमस्कार। अग्निमें दाहिका-शक्तिके रूपमें विद्यमान रहनेवाली देवी और भद्राको पुनः-पुनः नमस्कार। जो पूर्णिमाके चन्द्रमामें और शरत्कालीन कमलमें शोभारूपसे वर्तमान रहती हैं; उन शोभाको नमस्कार-नमस्कार। देवि! जैसे दूध और उसकी धवलतामें, गन्ध और भूमिमें, जल और शीतलतामें, शब्द और आकाशमें तथा सूर्य और प्रकाशमें कभी भेद नहीं है, वैसे ही लोक, वेद और पुराणमें—कहीं भी राधा और माधवमें भेद नहीं है; अतः कल्याणि! चेत करो। सति! मुझे उत्तर दो। यों कहकर उद्धव वहाँ उनके चरणोंमें पुनः-पुनः प्रणिपात करने लगे। जो मनुष्य भक्तिपूर्वक इस उद्धवकृत स्तोत्रका पाठ करता है; वह इस लोकमें सुख भोगकर अन्तमें वैकुण्ठमें जाता है। उसे बन्धुवियोग तथा अत्यन्त भयंकर रोग और शोक नहीं होते। जिस स्त्रीका पति परदेश गया होता है, वह अपने पतिसे मिल जाती है और भार्यावियोगी अपनी पत्नीको पा जाता है। पुत्रहीनको पुत्र मिल जाते हैं, निर्धनको धन प्राप्त हो जाता है, भूमिहीनको भूमिकी प्राप्ति हो जाती है, प्रजाहीन प्रजाको पा लेता है, रोगी रोगसे विमुक्त हो जाता है, बँधा हुआ बन्धनसे छूट जाता है, भयभीत मनुष्य भयसे मुक्त हो जाता है, आपत्तिग्रस्त आपद्से छुटकारा पा जाता है और अस्पष्ट कीर्तिवाला उत्तम यशस्वी तथा मूर्ख पण्डित हो जाता है*। (अध्याय ९१-९२)

---

* उद्धव उवाच—

वन्दे राधापदाम्भोजं ब्रह्मादिसुरवन्दितम्। यत्कीर्तिकीर्तनेनैव पुनाति भुवनत्रयम्॥
नमो गोलोकवासिन्यै राधिकायै नमो नमः। शतशृङ्गनिवासिन्यै चन्द्रवत्यै नमो नमः॥
तुलसीवनवासिन्यै वृन्दारण्यै नमो नमः। रासमण्डलवासिन्यै रासेश्वर्यै नमो नमः॥
विरजातीरवासिन्यै वृन्दायै च नमो नमः। वृन्दावनविलासिन्यै कृष्णायै च नमो नमः॥
नमः कृष्णप्रियायै च शान्तायै च नमो नमः। कृष्णवक्षःस्थितायै च तत्प्रियायै नमो नमः॥
नमो वैकुण्ठवासिन्यै महालक्ष्म्यै नमो नमः। विद्याधिष्ठातृदेव्यै च सरस्वत्यै नमो नमः॥
सर्वैश्वर्याधिदेव्यै च कमलायै नमो नमः। पद्मनाभप्रियायै च पद्मायै च नमो नमः॥
महाविष्णोश्च मात्रे च पराद्यायै नमो नमः। नमः सिन्धुसुतायै च मर्त्यलक्ष्म्यै नमो नमः॥
नारायणप्रियायै च नारायण्यै नमो नमः। नमोऽस्तु विष्णुमायायै वैष्णव्यै च नमो नमः॥
महामायास्वरूपायै सम्पदायै नमो नमः। नमः कल्याणरूपिण्यै शुभायै च नमो नमः॥
मात्रे चतुर्णां वेदानां सावित्र्यै च नमो नमः। नमो दुर्गविनाशिन्यै दुर्गादेव्यै नमो नमः॥
तेजःसु सर्वदेवानां पुरा कृतयुगे मुदा। अधिष्ठानकृतायै च प्रकृत्यै च नमो नमः॥
नमस्त्रिपुरहारिण्यै त्रिपुरायै नमो नमः। सुन्दरीषु च रम्यायै निर्गुणायै नमो नमः॥
नमो निद्रास्वरूपायै निर्गुणायै नमो नमः। नमो दक्षसुतायै च नमः सत्यै नमो नमः॥
नमः शैलसुतायै च पार्वत्यै च नमो नमः। नमो नमस्तपस्विन्यै ह्युमायै च नमो नमः॥
निराहारस्वरूपायै ह्यपर्णायै नमो नमः। गौरीलोकविलासिन्यै नमो गौर्यै नमो नमः॥
नमः कैलासवासिन्यै माहेश्वर्यै नमो नमः। निद्रायै च दयायै च श्रद्धायै च नमो नमः॥
नमो धृत्यै क्षमायै च लज्जायै च नमो नमः। तृष्णायै क्षुत्स्वरूपायै स्थितिकर्त्र्यै नमो नमः॥
नमः संहाररूपिण्यै महामायै नमो नमः। भयायै चाभयायै च मुक्तिदायै नमो नमः॥
नमः स्वधायै स्वाहायै शान्त्यै कान्त्यै नमो नमः। नमस्तुष्ट्यै च पुष्ट्यै च दयायै च नमो नमः॥
नमो निद्रास्वरूपायै श्रद्धायै च नमो नमः। क्षुत्पिपासास्वरूपायै लज्जायै च नमो नमः॥
नमो धृत्यै क्षमायै च चेतनायै नमो नमः। सर्वशक्तिस्वरूपिण्यै सर्वमात्रे नमो नमः॥

राधा-उद्धव-संवाद

श्रीनारायण कहते हैं—नारद! उद्धवद्वारा किये गये स्तवनको सुनकर राधिकाकी चेतना लौट आयी। तब वे विषादग्रस्त हो उद्धवको श्रीकृष्णके सदृश आकारवाला देखकर बोलीं।

श्रीराधिकाने कहा—वत्स! तुम्हारा क्या नाम है? किसने तुम्हें भेजा है? तुम कहाँसे आये हो? तुम्हारे यहाँ आनेका क्या कारण है? यह सब मुझे बतलाओ। तुम्हारा सर्वाङ्ग श्रीकृष्णकी आकृतिसे मिलता-जुलता है; अतः मैं समझती हूँ कि तुम श्रीकृष्णके पार्षद हो। अब तुम बलदेव और श्रीकृष्णका कुशल-समाचार वर्णन करो। साथ ही यह भी बतलाओ कि नन्दजी किस कारणसे वहीं ठहरे हुए हैं? क्या श्रीकृष्ण इस रमणीय वृन्दावनमें फिर आयेंगे? क्या मैं उनके पूर्णिमाके चन्द्रमाके समान सुन्दर मुखका पुनः दर्शन करूँगी तथा रासमण्डलमें उनके साथ पुनः क्रीड़ा करूँगी? क्या सखियोंके साथ पुनः जल-विहार हो सकेगा? और क्या श्रीनन्दनन्दनके शरीरमें पुनः चन्दन लगा पाऊँगी?

उद्धव बोले—सुमुखि! मैं क्षत्रिय हूँ। मेरा नाम उद्धव है। तुम्हारा शुभ समाचार जाननेके लिये परमात्मा श्रीकृष्णने मुझे भेजा है; इसीलिये मैं तुम्हारे पास आया हूँ। मैं श्रीहरिका पार्षद भी हूँ। इस समय श्रीकृष्ण, बलदेव और नन्दजी कुशलसे हैं।

श्रीराधिकाने कहा—उद्धव! इस समय भी यमुनातट वही है, सुगन्धित मलय-पवन भी वही है, उनके केलि-कदम्बोंका मूल भी वही है, उनका अभीष्ट पुण्यमय रमणीय वृन्दावन भी विद्यमान है। वही पुंस्कोकिलोंकी बोली, चन्दनचर्चित शय्या, चारों प्रकारके भोज्य पदार्थ, सुन्दर मधुपान तथा दुरन्त एवं दुःखद पापात्मा मन्मथ भी वही मौजूद है। रासमण्डलमें वे रत्नप्रदीप अभी भी जलते हैं, उत्तम मणियोंका बना हुआ रतिमन्दिर भी है ही, गोपाङ्गनाओंका समूह भी विद्यमान है, पूर्णिमाका चन्द्रमा भी सुशोभित हो रहा है और सुगन्धित पुष्पोंद्वारा रचित चन्दनचर्चित शय्या भी है। रति-भोगके योग्य कर्पूर आदिसे सुवासित पानका बीड़ा, सुगन्धित मालतीकी मालाएँ, श्वेत चँवर, दर्पण, जिसमें मोती और मणि जड़े हुए हैं ऐसे हीरेके मनोहर हार, अनेकों रमणीय उपकानन, सुन्दर क्रीड़ा-सरोवर, सुगन्धित पुष्पोंकी वाटिका, कमलोंकी मनोहर पंक्ति आदि सभी वैभव विद्यमान हैं (यह सब है); परंतु मेरे प्राणनाथ कहाँ हैं? हा कृष्ण! हा रमानाथ! हा मेरे प्राणवल्लभ! तुम कहाँ हो? मुझ दासीसे कौन-सा अपराध हो गया है? हुआ ही होगा; क्योंकि यह दासी तो पग-पगपर अपराध करनेवाली है।

इतना कहकर राधिका देवी पुनः मूर्च्छित हो गयीं। तब उद्धवने पुनः उन्हें चैतन्य कराया। उनकी उस दशाको देखकर क्षत्रियश्रेष्ठ उद्धवको परम आश्चर्य हुआ। उस समय सात सखियाँ

अग्नौ दाहस्वरूपायै भद्रायै च नमो नमः। शोभायै पूर्णचन्द्रे च शरत्पद्मे नमो नमः॥
नास्ति भेदो यथा देवि दुग्धधावल्ययोः सदा। यथैव गन्धभूम्योश्च यथैव जलशैत्ययोः॥
यथैव शब्दनभसोर्ज्योतिःसूर्यकयोर्यथा। लोके वेदे पुराणे च राधामाधवयोस्तथा॥
चेतनं कुरु कल्याणि देहि मामुत्तरं सति। इत्युक्त्वा चोद्धवस्तत्र प्रणनाम पुनः पुनः॥
इत्युद्धवकृतं स्तोत्रं यः पठेद् भक्तिपूर्वकम्। इह लोके सुखं भुक्त्वा यात्यन्ते हरिमन्दिरम्॥
न भवेद् बन्धुविच्छेदो रोगः शोकः सुदारुणः। प्रोषिता स्त्री लभेत् कान्तं भार्याभेदी लभेत् प्रियाम्॥
अपुत्रो लभते पुत्रान् निर्धनो लभते धनम्। निर्भूमिर्लभते भूमिं प्रजाहीनो लभेत् प्रजाम्॥
रोगाद् विमुच्यते रोगी बद्धो मुच्येत बन्धनात्। भयान्मुच्येत भीतस्तु मुच्येतापन्न आपदः॥
अस्पष्टकीर्तिः सुयशा मूर्खो भवति पण्डितः॥ (९२। ६३—९३)

लगातार श्रीराधापर श्वेत चँवर डुला रही थीं और असंख्य गोपियाँ विविध भाँतिसे उनकी सेवामें व्यस्त थीं। उनको इस अवस्थामें पहुँची हुई देखकर उद्धव डरे हुएकी भाँति पुनः विनयपूर्वक कानोंको अमृतके समान लगनेवाले परम प्रिय वचन बोले।

उद्धवने कहा—देवि! मैं समझ गया। तुम देवाङ्गनाओंकी अधीश्वरी, परम कोमल, सिद्धयोगिनी, सर्वशक्तिस्वरूपा, मूलप्रकृति, ईश्वरी और गोलोककी सुन्दरी हो; श्रीदामके शापसे तुम भूतलपर अवतीर्ण हुई हो। देवि! तुम श्रीकृष्णकी प्राणप्रिया तथा उनके वक्षःस्थलपर निवास करनेवाली हो। देवि! मैं हृदयको स्निग्ध करनेवाली अभीष्ट शुभवार्ताका वर्णन करता हूँ; तुम उसे सखियोंके साथ सुस्थिर चित्तसे श्रवण करो। वह वार्ता दुःखरूपी दावाग्निमें झुलसी हुईके लिये अमृतकी वर्षाके समान तथा विरहव्याधि-ग्रस्ताके लिये उत्तम रसायनके सदृश है। नन्दजी सदा प्रसन्न हैं। उन्हें वसुदेवने निमन्त्रित कर रखा है; अतः वे वहाँ आनन्दपूर्वक श्रीकृष्णके उपनयन-संस्कारतक ठहरेंगे। उस मङ्गल-कार्यके साङ्गोपाङ्ग सम्पन्न हो जानेपर परमानन्द-स्वरूप नन्दजी बलराम और श्रीकृष्णको साथ लेकर हर्षपूर्वक गोकुलको लौटेंगे। उस समय श्रीकृष्ण आकर प्रसन्नताके साथ पुनः माताको प्रणाम करेंगे और रातमें हर्षपूर्वक इस पुण्यमय वृन्दावनमें पधारेंगे। सती राधिके! तुम शीघ्र ही श्रीकृष्णके मुखकमलका दर्शन करोगी। उस समय तुम्हारा सारा विरह-दुःख दूर हो जायगा। अतः मातः! तुम अपने चित्तको स्थिर करो और इस अत्यन्त दारुण शोकको त्याग दो। पुनः प्रसन्नतापूर्वक अग्निमें तपाकर शुद्ध किये हुए रमणीय वस्त्र पहनकर अमूल्य रत्नोंके बने हुए आभूषणोंको धारण कर लो। कस्तूरी और कुंकुमसे युक्त चिकने चन्दनको शरीरपर लगा लो और मालतीकी मालाओंसे विभूषित करके केशोंका शृङ्गार करो। कल्याणि! इस प्रकार सुन्दर वेष बनाकर कपोलोंपर पत्र-भंगी (सौन्दर्यवर्धक विचित्र पत्रावली) कर लो। माँगमें कस्तूरी-चन्दनयुक्त सिन्दूर भर लो और बेंदी लगा लो। पैरोंमें मेंहदी लगाकर उसे महावरसे रँग लो। सति! शोकके साथ-साथ इस कीचड़युक्त कमल-पुष्पोंकी शय्याको त्याग दो और उठो। इस उत्तम रत्नसिंहासनपर बैठो। मन-ही-मन श्रीकृष्णके साथ विशुद्ध एवं मधुर मधुमय पदार्थ खाओ, संस्कारयुक्त स्वच्छ जल पीओ और सुवासित पानका बीड़ा चबाओ। देवेशि! तत्पश्चात् जिसपर अग्नि-शुद्ध वस्त्र बिछा है; जो मालतीकी मालाओंसे सुशोभित, कस्तूरी, जाती, चम्पा और चन्दनकी सुगन्धसे सुवासित, चारों ओरसे मालतीकी मालाओं और हीरोंके हारोंसे विभूषित एवं सुन्दर-सुन्दर मणियों, मोतियों और माणिक्योंसे परिष्कृत है; जिसके उपधान (तकिया)-में पुष्पोंकी मालाएँ लटक रही हैं और जो सब तरहसे मङ्गलके योग्य है; उस अमूल्य रत्नोंद्वारा निर्मित परम मनोहर पलंगपर सदा गोपियोंद्वारा सेवित होती हुई हर्षपूर्वक शयन करो। मनोहरे! तुम्हारी प्रिय सखी एवं भक्त गोपी निरन्तर तुमपर श्वेत चँवर डुलाती रहती है और तुम्हारे चरणकमलोंकी सेवा करती है।

मुने! इतना कहकर तथा ब्रह्मा आदि देवताओंद्वारा वन्दित उनके चरणकमलोंको प्रणाम करके उद्धव चुप हो गये। उद्धवके मधुर वचनोंको सुनते ही सती राधिकाके मुखपर मुस्कराहट छा गयी और उन्होंने उद्धवको अमूल्य दिव्य वस्त्राभूषण, रत्न, हार, भोजन, जल, ताम्बूल आदि देकर आशीर्वाद दिया। फिर, श्रीकृष्णवर्णित ज्ञानका उपदेश किया तथा लक्ष्मी, विद्या, कीर्ति, सिद्धिके साथ ही श्रीहरिके दास्य, श्रीहरिके चरणोंमें निश्चला भक्ति और श्रेष्ठतम पार्षद-पदकी प्राप्तिका वरदान दिया। इस प्रकार

उद्धवको वर-प्रसाद प्रदान करके राधिकाजीने उठकर अग्नि-शुद्ध साड़ी और कञ्चुकी धारण की तथा अमूल्य रत्नोंके आभूषण, हीरोंके हार, मनोहर रत्नमाला, सिन्दूर, कज्जल, पुष्पमाला और सुस्निग्ध चन्दनसे शरीरका शृङ्गार किया। उस समय उनके शरीरका रंग तपाये हुए सुवर्णके समान चमकीला था और कान्ति सैकड़ों चन्द्रमाओंके सदृश उद्दीप्त थी। असंख्य गोपियाँ उन्हें घेरे हुए थीं। तत्पश्चात् वे हर्षपूर्वक रत्नसिंहासनपर विराजमान हर्षमग्न उद्धवकी पूजा करके बोलीं।

श्रीराधिकाने पूछा—उद्धव! कपटरहित हो सच-सच बतलाओ, क्या सचमुच श्रीहरि आयेंगे? तुम भय छोड़कर ठीक-ठीक कहना और इस उत्तम सभामें सत्य ही बोलना। सौ कुएँसे एक बावली श्रेष्ठ है, सौ बावलियोंसे एक यज्ञ श्रेष्ठ है, सौ यज्ञोंसे एक पुत्र श्रेष्ठ है और सौ पुत्रोंसे बढ़कर सत्य है। सत्यसे बढ़कर दूसरा धर्म नहीं है और झूठसे बढ़कर दूसरा पाप नहीं है*।

उद्धवने कहा—सुन्दरि! सचमुच ही श्रीहरि आयेंगे और तुम उनका दर्शन करोगी—यह भी सत्य है। उस समय श्रीहरिके चन्द्रमुखका अवलोकन करके निश्चय ही तुम्हारा संताप दूर हो जायगा। महाभागे! तुम्हारा विरह-ताप तो मेरे दर्शनसे ही नष्ट हो गया; अब तुम इस दुस्तर चिन्ताको छोड़ो और नाना प्रकारके भोगजनित सुखका उपभोग करो। मैं मथुरा जाकर श्रीहरिको समझा-बुझाकर यहाँ भेजूँगा। वे अन्य सभी कार्य पूर्ण करेंगे। मातः! अब मुझे बिदा दो। मैं श्रीहरिके संनिकट जाऊँगा और यह सारा वृत्तान्त यथोचितरूपसे उन्हें सुनाऊँगा।

तब श्रीराधिकाजी बोलीं—वत्स! जब तुम परम मनोहर मथुरापुरीको जा रहे हो; तो कुछ समय और ठहरो और स्थिरतापूर्वक मेरे पास बैठो। जरा, मेरी कुछ दुःख-कहानी तो सुनते जाओ। बेटा! विरह-तापसे कातर हुई मुझको तुम भूल न जाना। तुम निश्चय ही मेरे प्रियतमको भेजोगे, इसीसे मैं तुमसे कुछ कह रही हूँ; अन्यथा स्त्रियोंके मनकी बात भला, कौन विद्वान् जानता है? विद्वान् तो शास्त्रानुसार कुछ-कुछ ही निरूपण कर सकता है। जब वेद उसका वर्णन करनेमें समर्थ नहीं हैं तब शास्त्र बेचारे क्या कह सकते हैं? परंतु पुत्र! तुम जाकर श्रीकृष्णसे मेरी बात कहोगे; मैं तुम्हें सब कुछ बतला रही हूँ। उद्धव! मुझे घर और वनमें कोई भेद नहीं प्रतीत होता। मेरे लिये जैसे पशु आदि हैं, वैसे ही मनुष्य भी हैं। क्या जल है और क्या स्थल है, मैं यह भी नहीं समझ पाती। मुझे रात-दिनका ज्ञान नहीं रहता और न मैं अपने-आपको तथा सूर्य-चन्द्रमाके उदयको ही जान पाती हूँ। इस समय श्रीहरिका समाचार पाकर क्षणभरके लिये मुझे चेतनता आ गयी है। अब मैं श्रीकृष्णके स्वरूपका दर्शन कर रही हूँ, मुरलीकी ध्वनि सुन रही हूँ तथा कुल, लज्जा और भयका त्याग करके श्रीहरिके चरणका ध्यान कर रही हूँ। जो समस्त लोकोंके ईश्वर तथा प्रकृतिसे परे हैं, उन श्रीहरिको पाकर भी मायाके वशीभूत होनेके कारण उनको गोपपति समझकर मैं उन्हें यथार्थरूपसे जान न सकी। वेद और ब्रह्मा आदि देवता जिनके चरणकमलोंका ध्यान करते रहते हैं; उन्हींकी मैंने क्रोधमें भरकर भर्त्सना कर दी थी—यह मेरा बर्ताव मेरे हृदयमें काँटेकी तरह चुभ रहा है। उद्धव! उनके चरणकमलोंकी सेवाओंमें, गुण-कीर्तनमें, उनकी भक्तिमें, ध्यान अथवा पूजामें जो क्षण व्यतीत होता है; उसीमें सारा मङ्गल, आनन्द और जीवन स्थित है। उसके विच्छेद हो जानेपर सदा हृदयमें संताप और विघ्न होता है। अब मेरी पुनः उस प्रकारकी अभीष्ट क्रीड़ा-प्रीति नहीं होगी, न वैसा प्रेम-सौभाग्य होगा और

* न हि सत्यात् परो धर्मो नानृतात् पातकं परम्॥ (९३। ७९)

न निर्जन स्थानमें समागम ही होगा। उद्धव! अब मैं उनके साथ वृन्दावनमें नहीं जाऊँगी, नन्दनन्दनके वक्ष:स्थलपर चन्दन नहीं लगाऊँगी, न उन्हें माला पहनाऊँगी, न उनके मुखकमलकी ओर निहारूँगी। न पुन: मालती, केतकी और चम्पकके काननोंमें तथा सुन्दर रासमण्डलमें ही जाऊँगी, न हरिके साथ रमणीय चन्दनकाननमें विचरूँगी। न पुन: मलयकी सुगन्धसे युक्त रत्नमन्दिरमें ही जाऊँगी और न हरिके साथ पुन:-पुन: रमणीय माधवीवन, रहस्यमय मधुकानन, मनोहर श्रीखण्डकानन, स्वच्छ चन्द्र-सरोवर, विस्पन्दक, देववन, नन्दनवन, पुष्पभद्रक और भद्रकवनको ही जाऊँगी। वसन्त-ऋतुमें खिली हुई वह सुन्दर माधवी लता कहाँ है? वह वसन्तकी रात्रि कहाँ चली गयी? वसन्त-ऋतु कहाँ चला गया? और हाय! वे माधव—श्रीकृष्ण भी कहाँ चले गये? इतना कहकर राधाजी श्रीकृष्णके चरणकमलोंका ध्यान करने लगीं। उनके शरीरमें रोमाञ्च हो आया और वे रोती हुई पुन: मूर्च्छित हो गयीं।

(अध्याय ९३)

सखियोंद्वारा श्रीकृष्णकी निन्दा एवं प्रशंसा और उद्धवका मूर्च्छित हुई राधाको सान्त्वना प्रदान करना

श्रीनारायण कहते हैं—मुने! राधिकाको मूर्च्छित देखकर उद्धवको महान् विस्मय और भय प्राप्त हुआ। वे राधाकी सच्ची भक्ति और अपनेको कहनेमात्रका भक्त जानकर तथा भाग्यवती सती राधाकी ओर देखकर सारे जगत्‌को तुच्छ समझने लगे। तदनन्तर मृतक-तुल्य पड़ी हुई राधाको होशमें लाते हुए उनसे बोले।

उद्धवने कहा—कल्याणि! होशमें आ जाओ। जगन्मात:। तुम्हें नमस्कार है। तुम्हीं पूर्वजन्मकृत समस्त कर्म हो। अब तुम्हें श्रीकृष्णके दर्शन प्राप्त होंगे। तुम्हारे दर्शनसे विश्व पवित्र हो गया और तुम्हारी चरणरजसे पृथ्वी पावन हो गयी। तुम्हारा मुख परम पवित्र है और (तुम्हारे स्पर्शसे) गोपिकाएँ पुण्यवती हो गयीं। लोग गीत तथा मङ्गल-स्तोत्रोंद्वारा तुम्हारा ही गान करते हैं। वेद तथा सनकादि महर्षि तुम्हारी उत्तम कीर्तिका—जो किये हुए पापोंको नष्ट करनेवाली, पुण्यमयी, तीर्थपूजास्वरूपा, निर्मल, हरिभक्तिप्रदायिनी, कल्याणकारिणी और सम्पूर्ण विघ्नोंका विनाश करनेवाली है—सदा बखान करते हैं। तुम्हीं राधा हो; तुम्हीं श्रीकृष्ण हो। तुम्हीं पुरुष हो; तुम्हीं परा प्रकृति हो। पुराणों तथा श्रुतियोंमें कहीं भी राधा और माधवमें भिन्नता नहीं पायी जाती। तदनन्तर राधिकाको मूर्च्छित देखकर उन उद्धवको पीछे करके और स्वयं राधाके आगे खड़ी हो माधवी गोपी बोली।

माधवीने कहा—कल्याणि! श्रीकृष्ण तो चोर हैं, उनका कौन-सा उत्तम रूप और वेष है? उनके सुख और वैभव ही क्या हैं? कोई अनुपम गौरव भी तो नहीं है? उनका कौन-सा पराक्रम, ऐश्वर्य अथवा दुर्लङ्घ्य शौर्य है? उनमें कौन-सी सिद्धता एवं प्रसिद्धि है? तुम्हारे-सदृश उनमें कौन-सा उत्तम गुण है? वे यहाँ कहींसे आ गये और पुन: कहीं चले गये। वे गोपवेषधारी बालक ही तो हैं न? कोई राजपुत्र अथवा विशिष्ट पुरुष थोड़े ही हैं। फिर तुम व्यर्थ उन नन्दनन्दन गोपालकी चिन्तामें क्यों पड़ी हो? अरे! यत्नपूर्वक तुम अपने आत्माकी रक्षा करो; क्योंकि आत्मासे बढ़कर प्रिय दूसरा कुछ नहीं है।

तदनन्तर मालतीने श्रीकृष्णकी निन्दा करते हुए अन्तमें राधासे कहा—मूढ़े! तुम व्यर्थ किसकी चिन्तामें पड़ी हो? यह अत्यन्त दारुण

शोक छोड़ दो और यत्नपूर्वक अपनी रक्षा करो; क्योंकि अपने आत्मासे बढ़कर प्रिय दूसरा कुछ भी नहीं है।

इसपर पद्मावतीने, फिर चन्द्रमुखीने श्रीराधाके कृष्णप्रेमकी प्रशंसा करते हुए कहा—देखो, मेरी सखीने आहारका त्याग कर दिया है; अतः केवल साँस चलनेसे ये जीवित प्रतीत होती हैं। इसलिये अब तुम अपने मुखसे श्रीकृष्णकी प्रशंसा करो; क्योंकि श्रीकृष्णके नाम-स्मरणसे, उनकी गुणगाथाके श्रवणसे और उनके शुभ समाचारके सुननेसे इनमें सहसा चेतना लौट आती है।

तदनन्तर शशिकलाने कहा—माधवि! ब्रह्मा आदि देवता तथा चारों वेद जिनके ध्यानमें मग्न रहते हैं, जिनके देवताओंद्वारा अभीप्सित चरणकमलका संतलोग सदा ध्यान करते हैं; पद्मा, सरस्वती, दुर्गा, अनन्त, सिद्धेन्द्र, मुनीन्द्र, मनुगण और महेश्वर भी जिन्हें नहीं जान पाते; उन परमात्मा श्रीकृष्णको तुम क्या जानती हो? जो सर्वात्मा हैं, उनका कैसा रूप? और जो निर्गुण हैं, उनके कैसे गुण? सत्यस्वरूप भगवान्‌के जिस सत्य स्वरूपका वर्णन किया गया है, जो सुखदायक, आह्लादजनक, रमणीय, भक्तानुग्रह-मूर्ति, लीलाधाम और मङ्गलोंका आश्रयस्थान है, जिसकी लावण्यता करोड़ों कामदेवोंसे बढ़कर है, जिस जनमनोहर रूपसे बढ़कर अनिर्वचनीय कोई भी रूप नहीं है; उसी मनोहर रूपको श्रीकृष्ण पृथ्वीका भार उतारनेके समय धारण करते हैं। मन्दाकिनीका मीठा जल जिनके मधुर पादपद्मोंका धोवन है, जिसे परात्पर सर्वेश्वर शंकर भक्तिपूर्वक अपने सिरपर धारण करते हैं, विरक्त होकर सदा उन तीर्थकीर्ति श्रीकृष्णका कीर्तन करते रहते हैं तथा आहार, भूषण और वस्त्रका परित्याग करके दिगम्बर हो भक्तिके आवेशमें क्षणभरमें नाचने लगते हैं और क्षणभरमें गाने लगते हैं। ब्रह्मा, शेष, सनत्कुमार और योगवेत्ता सिद्धोंके समुदाय उनके परम निर्मल शुभ्र ब्रह्मज्योतिःस्वरूपका ध्यान करके तपस्या एवं सेवाद्वारा जीवन-यापन करते हैं; उन श्रीकृष्णकी महिमा कौन जान सकता है?

फिर सुशीलाने श्रीकृष्णकी प्रशंसा करते हुए कहा— सखि! ब्रह्मा, जो वेदोंके उत्पादक एवं ईश्वर हैं; जिन श्रीकृष्णकी स्तोत्रद्वारा स्तुति करते हैं, यह माधवी उन्हीं सत्य नित्य परमेश्वरकी निन्दा कर रही है; अतः यह सभा अपावन हो गयी और गोपियोंका जीवन तो व्यर्थ ही हो गया। इन गोपियोंमें केवल राधा ही पुण्यवती हैं; क्योंकि ये रात-दिन उन श्रीकृष्णका ध्यान करती रहती हैं; जिनके नामस्मरणमात्रसे करोड़ों जन्मोंमें एकत्र किये हुए पापका भय और शोक पूर्णतया नष्ट हो जाता है। इसमें तनिक भी संशय नहीं है।

तदनन्तर रत्नमाला और पारिजाता श्रीकृष्णकी महिमा बखानती हुई बोलीं—प्रिये! ब्रह्माने जिस विश्वब्रह्माण्डकी रचना की है, वह महाविष्णुके रोमकूपमें अणुके सदृश स्थित है; क्योंकि उन विष्णुके शरीरमें जितने रोएँ हैं, उतने ही विश्व उनमें वर्तमान हैं और वे महाविष्णु इन परमात्मा श्रीकृष्णके सोलहवें अंश हैं। तब भला, श्रीकृष्णके यश, शौर्य और अनुपम महिमाका क्या बखान किया जा सकता है? अथवा यह गोपकन्या माधवी उसे क्या जान सकती है?

इसपर माधवीने अपने कथनका तात्पर्य समझाया। उनके उस वचनको सुनकर उद्धवके सारे शरीरमें रोमाञ्च हो आया। वे भक्तिविह्वल हो रुदन करते हुए मूर्च्छित होकर भूमिपर गिर पड़े। तत्पश्चात् परमेश्वर श्रीकृष्णका ध्यान करके वे अपनेको तुच्छ मानने लगे और भक्तिपूर्वक उस गोपीसे बोले।

उद्धवने कहा—सातों द्वीपोंमें मनोहर जम्बूद्वीप धन्य एवं प्रशंसनीय है। उसमें श्रेष्ठ भारतवर्ष—जो

पुण्य और मङ्गलोंका दाता है—गोपियोंके चरणकमलोंकी रजसे पावन और परम निर्मल होकर और भी धन्यवादका पात्र हो गया है। इस भारतवर्षमें नारियोंके मध्य गोपिकाएँ सबसे बढ़कर धन्या और मान्या हैं; क्योंकि वे उत्तम पुण्य प्रदान करनेवाले श्रीराधाके चरणकमलोंका नित्य दर्शन करती रहती हैं*। इन्हीं राधिकाके चरणकमलोंकी रजको प्राप्त करनेके लिये ब्रह्माने साठ हजार वर्षोंतक तप किया था। ये पराशक्ति राधा गोलोकमें निवास करनेवाली और श्रीकृष्णकी प्राणप्रिया हैं। जो-जो श्रीकृष्णके भक्त हैं, वे राधाके भी भक्त हैं। ब्रह्मा आदि देवता गोपियोंकी सोलहवीं कलाकी भी समानता नहीं कर सकते। श्रीकृष्णकी भक्तिका मर्म पूर्णरूपसे तो योगिराज महेश्वर, राधा तथा गोलोकवासी गोप और गोपियाँ ही जानती हैं। ब्रह्मा और सनत्कुमारको कुछ-कुछ ज्ञात है। सिद्ध और भक्त भी स्वल्प ही जानते हैं। इस गोकुलमें आनेसे मैं धन्य हो गया। यहाँ गुरुस्वरूपा गोपिकाओंसे मुझे अचल हरिभक्ति प्राप्त हुई, जिससे मैं कृतार्थ हो गया। अब मैं मथुरा नहीं जाऊँगा और प्रत्येक जन्ममें यहीं गोपियोंका किंकर होकर तीर्थश्रवा श्रीकृष्णका कीर्तन सुनता रहूँगा; क्योंकि गोपियोंसे बढ़कर परमात्मा श्रीहरिका कोई अन्य भक्त नहीं है। गोपियोंने जैसी भक्ति प्राप्त की है, वैसी भक्ति दूसरोंको नहीं नसीब हुई†।

तदनन्तर कलावती और तुलसीके द्वारा श्रीकृष्णकी महिमा कही जानेके बाद कालिकाने कहा—बुद्धिमान् उद्धव! बाल, युवा और वृद्ध—तीनों प्रकारके मनुष्य तथा जो देवता आदि और सिद्धगण हैं; वे सभी उन परमेश्वर श्रीकृष्णको जानते हैं। इस समय इन मूर्च्छित हुई राधाको जगाना ही युक्त है; अतः इसके लिये जो प्रधान युक्ति हो उसके द्वारा इन्हें चैतन्य करो।

तब उद्धव बोले—कल्याणि! चेत करो। जगन्मातः! मेरी ओर ध्यान दो। मैं कृष्णभक्तके किंकरका भी किंकर उद्धव हूँ। माँ! मुझपर कृपा करो। मैं पुनः मथुरा जाऊँगा; क्योंकि मैं स्वतन्त्र नहीं हूँ; बल्कि कठपुतलीकी भाँति पराधीन हूँ तथा जैसे बैल सदा हलवाहेके वशमें रहता है; उसी तरह मैं श्रीकृष्णके अधीन हूँ।

(अध्याय ९४)

उद्धवका कथन सुनकर राधाका चैतन्य होना और अपना दुःख सुनाते हुए उद्धवको उपदेश देकर मथुरा जानेकी आज्ञा देना

श्रीनारायण कहते हैं—नारद! उद्धवके वचन सुनकर राधिकाकी चेतना लौट आयी। वे उठकर उत्तम रत्नसिंहासनपर जा विराजीं। उस समय सात गोपियाँ भक्तिपूर्वक श्वेत चँवरोंद्वारा उनकी सेवा कर रही थीं। तब देवी राधिका दुःखित हृदयसे उद्धवसे मधुर वचन बोलीं।

श्रीराधिकाने कहा—वत्स! तुम मथुरा जाओ, परंतु वहाँ सुखमें पड़कर मुझे भूल मत जाना। (यदि भूल जाओगे तो) इस भवसागरमें तुम्हारे लिये इससे बढ़कर दूसरा अधर्म नहीं है। इस

---

* धन्यं भारतवर्षं च पुण्यदं शुभदं वरम्। गोपीपादाब्जरजसा पूतं परमनिर्मलम्॥
ततोऽपि गोपिका धन्या मान्या योषित्सु भारते। नित्यं पश्यन्ति राधायाः पादपद्मं सुपुण्यदम्॥
(९४। ७७-७८)

† न गोपीभ्यः परो भक्तो हरेश्च परमात्मनः। यादृशीं लेभिरे गोप्यो भक्तिं नान्ये च तादृशीम्॥
(९४। ८६)

समय तुम जाकर परमानन्दस्वरूप श्रीकृष्णसे मेरी सारी बात कह सुनाओ और शीघ्र ही मेरे स्वामीको यहाँ ले आओ। भला, जगत्‌की युवतियोंमें किसको ऐसा दुःख है? श्रीकृष्णके वियोगजन्य दुःखको मेरे अतिरिक्त और कौन जानती है? सीताको भी वियोग-दुःख कुछ-कुछ ज्ञात है। त्रिलोकीमें नारियोंमें मुझसे बढ़कर दुःखिया कोई नहीं है। बेटा उद्धव! किस युवतीको मेरे समान दुःख है? भला, कौन नारी मेरी मानसिक व्यथाको सुनकर विश्वास करेगी? स्त्रियोंमें राधाके समान दुःखिया, विरह-संतप्त और सुख-सौभाग्यसे हीन नारी न हुई है और न आगे होगी। वत्स! जिनके नाम-श्रवणमात्रसे पाँचों प्राण प्रहृष्ट हो जाते हैं तथा जिनके स्मरणमात्रसे वे प्रफुल्ल हो उठते हैं और आत्मा परम स्निग्ध हो जाता है; जिन्होंने मेरा स्पर्श किया, इतनेमात्रसे ही जिससे तीनों भुवनोंमे मुझे यशकी प्राप्ति हुई, उन परमेश्वरका किस समृद्धिको पाकर मैं विस्मरण कर सकती हूँ? तात! जो तीनों लोकोंपर विजय पानेवाला रूप और गुण धारण करते हैं; जिन्हें ब्रह्माने नहीं रचा है बल्कि जो स्वयं ही ब्रह्माके रचयिता हैं; जो कल्पवृक्षसे भी बढ़कर सम्पूर्ण सम्पत्तियोंके दाता, शान्त, लक्ष्मीपति, मनको हरण करनेवाले, सर्वेश्वर, सबके कारणस्वरूप, ऐश्वर्यशाली परमात्मा हैं; उन ब्रह्माके भी विधाता अपने स्वामी श्रीकृष्णको किस समृद्धिके प्रलोभनमें पड़कर मैं भूल सकती हूँ? तात! ब्रह्मा, शिव और शेष आदि जिनके चरणकमलका ध्यान करते रहते हैं; उन प्रभुको मैं किस सुखके लोभसे विस्मृत कर सकती हूँ। पुत्र! जिन्हें स्वप्नमें भी उनके अनुपम मनोहर रूपका दर्शन हो जाता है; वे सब कुछ त्यागकर रात-दिन उन्हींके ध्यानमें मग्न हो जाते हैं। जिनके गुणसे पर्वत पिघलकर पानी-पानी हो जाता है, शुष्क काष्ठ गीला हो जाता है, सूखे वृक्षमें नयी कोंपलें निकल आती हैं, वायुका वेग रुक जाता है तथा सूर्य और सागर स्थगित हो जाते हैं; उन प्रियतमको मैं किस समृद्धिकी प्राप्तिसे भुला सकती हूँ? भक्तवर! जो कालके काल हैं; प्रलयकालीन मेघ, संहारकर्ता शिव और सृष्टिकर्ता ब्रह्माके स्वामी हैं; जो स्वाधीन, स्वतन्त्र और स्वयं ही आत्मा नामवाले हैं; उन प्रभुको मैं कौन-सी सम्पत्ति पाकर भूल सकती हूँ? उन श्रीकृष्णसे वियुक्त होनेपर (उस वियोगजन्य दुःखकी शान्तिके लिये) कोई यथार्थ ज्ञान है ही नहीं; जिसके द्वारा कोई विद्वान् मुझे सान्त्वना दे सके। सावित्री और सरस्वती भी मुझे समझानेमें समर्थ नहीं हैं। वेद और वेदाङ्ग भी मुझे ढाढ़स नहीं बँधा सकते; फिर संतों और देवताओंकी तो बात ही क्या है? सहस्र मुखवाले शेषनाग, वेदोंके उत्पादक ब्रह्मा, योगीन्द्रोंके गुरुके गुरु शम्भु और गणेश भी मुझे प्रबुद्ध नहीं कर सकते; क्योंकि जिसकी स्थिति है उसीकी गतिका विचार किया जा सकता है। जिसका कोई मार्ग ही नहीं है, उसकी गति कहाँ? सुख-दुःख, शुभ-अशुभ सभी कालद्वारा साध्य है, यहाँतक कि जगत्‌में सभी पदार्थ कालके वशीभूत हैं और वह काल दुर्निवार है। वत्स! यदि तुम व्रजवासका परित्याग करके जानेके लिये उत्सुक ही हो तो उठो और सुखपूर्वक उस रमणीय मथुरापुरीको जाओ; क्योंकि चिरकालतक श्रीकृष्णसे विलग रहना दुःखका ही कारण होता है; उससे सुख नहीं मिलता। वहाँ जाकर तुम उनके जन्म, मृत्यु और बुढ़ापेका विनाश करनेवाले चन्द्रमुखके दर्शन करो। राधिकाके ऐसे वचन सुनकर तथा बन्धु-वियोगसे कातर हुई राधिकाको रोती देखकर उद्धव फूट-फूटकर रोने लगे।

तदनन्तर माधवीकी प्रेरणासे उद्धवके पूछनेपर श्रीराधाने उनको उपदेश दिया—'वत्स! जो लोकोंके स्वामी, कालके काल, जगद्गुरु, निर्गुण, इच्छारहित और ईश्वर हैं; उन परमात्माका पण्डितलोग भजन करते हैं। बेटा! सूर्य सभी प्राणियोंकी

आयुको रात-दिनके व्याजसे क्षीण करते रहते हैं; परंतु जो श्रीहरिके शुद्ध भक्त हैं, उन पुण्यवान् संतोंपर उनका वश नहीं चलता। उदाहरणस्वरूप ब्रह्माके चारों मानस-पुत्र भगवद्भक्त सनकादिकोंपर दृष्टिपात करो। उनकी आयु सदा सुस्थिर रहती है। वे उपनयन-संस्काररहित पाँच वर्षके शिशुओंकी भाँति सदा बालरूप ही रहते हैं और उसी अवस्थासे वे एकादश रुद्रों, द्वादश आदित्यों और ज्ञानियोंके गुरुके भी गुरु हैं। उनके हृदय विशाल हैं, मुखोंपर प्रसन्नता छायी रहती है, वेष दिगम्बर है, शरीर श्रीकृष्णके ध्यानसे पवित्र हो गये हैं। वे विष्णुभक्तिपरायण और तीर्थोंको भी पावन करनेवाले हैं। उन्हें वेद-वेदाङ्ग और शास्त्रोंकी चिन्ता नहीं रहती, उनका मन प्रफुल्लित रहता है और वे रात-दिन लगातार भक्तिपूर्वक श्रीहरिके ध्यानमें तत्पर रहते हैं। उनके नाम सनक, सनन्दन, तीसरे सनातन और चौथे सनत्कुमार हैं। जो लोग इनका सब तरहसे स्मरण करते हैं, उन्हें तीर्थस्नानजनित फलकी प्राप्ति होती है, वे किये हुए पापोंसे मुक्त हो जाते हैं, उनके हृदयमें हरिभक्ति उत्पन्न हो जाती है और वे हरिकी दासताके भागी हो जाते हैं। इसके बाद मृकण्डुके पुत्र द्विजवर मार्कण्डेयको देखो, जो अपने कर्मवश लाखों वर्षोंतक ब्रह्मतेजसे प्रज्वलित होते रहे; तत्पश्चात् श्रीहरिकी सेवासे उन्हें सात कल्पोंतककी आयु प्राप्त हुई। फिर वोढु, पञ्चशिख, लोमश और आसुरिको देखो। ये सम्पूर्ण कर्मोंका त्याग करके श्रीहरिकी सेवामें तत्पर और सदा श्रीहरिके चरणका ध्यान करते रहते हैं। इनकी आयु सौ कल्पोंकी है। पुनः जमदग्निनन्दन चिरजीवी परशुराम, हनुमान्, बलि, व्यास, अश्वत्थामा, विभीषण, विप्रवर कृपाचार्य और ऋक्षराज जाम्बवान्‌को देखो। ये सभी श्रीहरिका ध्यान करनेसे शुद्ध और चिरजीवी हैं। उद्धव! इनके अतिरिक्त सिद्धेन्द्रों, नरेन्द्रों तथा अन्य मनुष्योंमें जो श्रीहरिकी भावना करनेसे शुद्ध हो गये हैं; वे सभी चिरजीवी हैं। दैत्योंमें श्रीहरिसे द्वेष करनेवाले दुराचारी हिरण्यकशिपुके पुत्र प्रह्लादको देखो। वे श्रीहरिके ध्यानमें तल्लीन रहते हैं, जिससे चिरजीवी एवं कालजित् हो गये हैं। अनेक जन्मोंकी तपस्याके फलस्वरूप भारतमें जन्म पाकर जो लोग उन श्रीहरिकी सेवा नहीं करते, वे मूर्ख और पापी हैं। जो मनुष्य वासुदेवका परित्याग करके विषयमें लवलीन रहता है, वह महान् मूर्ख है और स्वेच्छानुसार अमृतका त्याग करके विष-पान करता है। इस भूतलपर किसकी स्त्री, किसका पुत्र और किसके भाई-बन्धु हैं? अर्थात् कोई किसीका नहीं है; क्योंकि विपत्तिकालमें श्रीकृष्णके अतिरिक्त कोई किसीका बन्धु—सहायक नहीं होता*। इसीलिये संतलोग रात-दिन निरन्तर श्रीकृष्णका ही भजन करते हैं; क्योंकि श्रीकृष्ण जन्म, मृत्यु, बुढ़ापा और रोगके विनाशक, सर्वदुःखहारी परमेश्वर हैं। उन आनन्दको भी आनन्दित करनेवाले परिपूर्णतम परमात्मा श्रीकृष्णका भजन कालपर विजय पानेका उपाय है। इसके बाद श्रीराधाजीने मनुष्य, पितर, देवता, नाग, राक्षस और अन्यान्य लोकों तथा युगों आदिकी कालगतिका वर्णन करके फिर कहा—'वत्स! अब तुम श्रीहरिके नगरको जाओ।' (अध्याय ९५-९६)

---

*अनेकजन्मतपसा लब्ध्वा जन्म च भारते। ये हरिं तं न सेवन्ते ते मूढाः कृतपापिनः॥
वासुदेवं परित्यज्य विषये निरतो जनः। त्यक्त्वामृतं मूढबुद्धिर्विषं भुङ्क्ते निजेच्छया॥
कस्य स्त्री कस्य वा पुत्रः कस्य वा बान्धवस्तथा। कः कस्य बन्धुर्विपदि श्रीकृष्णेन विना भुवि॥
(९६। ३८—४०)

राधाका उद्धवको बिदा करना, बिदा होते समय उद्धवद्वारा राधा-महत्त्व-वर्णन तथा उद्धवके यशोदाके पास चले जानेपर राधाका मूर्च्छित होना

श्रीनारायण कहते हैं—नारद! उद्धवको जानेके लिये उद्यत देखकर श्रीहरिकी प्रिया महासती राधिका गोपियोंसहित तुरंत ही संत्रस्त एवं समुद्विग्न हो उठीं। उनका हृदय दुःखसे भर आया। तब उन्होंने शीघ्र ही आसनसे उठकर उद्धवके मस्तकपर हाथ रखा और उन्हें शुभाशीर्वाद दिया। फिर कोमल दूर्वाङ्कुर, अक्षत, श्वेत धान्य, पुष्प, मङ्गल-द्रव्य, लाजा, फल, पत्ता तथा दधि लानेकी आज्ञा दी। तत्पश्चात् गन्ध, सिन्दूर, कस्तूरी और चन्दनसे युक्त तथा फल-पल्लवसे सुशोभित जलपूर्ण कलश, दर्पण, पुष्पमाला, जलता हुआ दीपक, लाल चन्दन, पति-पुत्रवती साध्वी स्त्री, सुवर्ण और चाँदीके दर्शन कराये। तदनन्तर दुःखी हृदयवाली महासाध्वी राधिका नेत्रोंमें आँसू भरकर चरणोंमें पड़े हुए उद्धवसे हितकारक, सत्य, गोपनीय, मङ्गल-वचन बोलीं।

राधिकाने कहा—वत्स! तुम्हारा मार्ग मङ्गलमय हो; तुम्हें सदा कल्याणकी प्राप्ति होती रहे; तुम श्रीहरिसे ज्ञान-लाभ करो और श्रीकृष्णके परम प्रिय हो जाओ। श्रीकृष्णकी भक्ति और उनकी दासता सभी वरदानोंमें उत्तम वरदान है; क्योंकि हरिभक्ति (सालोक्य, सार्ष्टि, सामीप्य, सारूप्य और एकत्व—इन) पाँच प्रकारकी मुक्तियोंसे भी श्रेष्ठ एवं महत्त्वपूर्ण है तथा श्रीहरिकी दासता ब्रह्मत्व, देवत्व, इन्द्रत्व, अमरत्व, अमृत और सिद्धिलाभसे भी बढ़कर परम दुर्लभ है। अनेक जन्मोंकी तपस्याके फलस्वरूप भारतवर्षमें जन्म लेकर यदि हरिभक्तिकी प्राप्ति हो जाय तो उसका वह जन्म परम दुर्लभ है। कर्मका क्षय करनेवाले उस व्यक्तिका तथा उसके सहस्रों पितरों, माता, मातामहों, सैकड़ों पूर्वजों, सहोदर भाई, बान्धव, पत्नी, गुरुजन, शिष्य और भृत्यका भी जीवन निश्चय ही सफल हो जाता है*। वत्स! जो कर्म श्रीकृष्णको समर्पण कर दिया जाय; वही उत्तम कर्म है। जिस कर्मसे श्रीकृष्णको संतुष्ट किया जा सके; वही कर्म शुद्ध एवं शोभन है। संकल्पको सिद्ध करनेवाला जो कर्म प्रीति एवं विधिपूर्वक किया जाता है; वही मङ्गलकारक, धन्य और परिणाममें सुखदायक होता है। श्रीकृष्णके उद्देश्यसे किया हुआ व्रत, उपवास, तपस्या, सत्यभाषण, भक्ति तथा पूजन, केवल उनकी दासता-प्राप्तिका कारण होता है। समस्त पृथ्वीका दान, भूमिकी प्रदक्षिणा, समस्त तीर्थोंमें स्नान, समस्त व्रत, तप, समस्त यज्ञोंका अनुष्ठान, सम्पूर्ण दानोंका फल, समस्त वेद-वेदाङ्गोंका पठन-पाठन, भयभीतका रक्षण, परम दुर्लभ ज्ञान-दान, अतिथियोंका पूजन, शरणागतकी रक्षा, सम्पूर्ण देवताओंका अर्चन-वन्दन, मनोजय, पुरश्चरणपूर्वक ब्राह्मणों और देवताओंको भोजन देना, गुरुकी शुश्रूषा करना, माता-पिताकी भक्ति और उनका पालन-पोषण—ये सभी श्रीकृष्णकी दासताकी सोलहवीं कलाकी भी समता नहीं कर सकते। इसलिये उद्धव! तुम यत्नपूर्वक उन परात्पर श्रीकृष्णका भजन करो। वे निर्गुण,

---

* कृष्णे भक्तिः कृष्णदास्यं वरेषु च वरं वरम्। श्रेष्ठा पञ्चविधा मुक्तेर्हरिभक्तिर्गरीयसी॥
ब्रह्मत्वादपि वेदत्वादिन्द्रत्वादमरादपि। अमृतात् सिद्धिलाभाच्च हरिदास्यं सुदुर्लभम्॥
अनेकजन्मतपसा सम्भूय भारते द्विज। हरिभक्तिं यदि लभेत् तस्य जन्म सुदुर्लभम्॥
सफलं जीवनं तस्य कुर्वतः कर्मणः क्षयम्। पितॄणां च सहस्राणां स्वस्य मातुश्च निश्चितम्॥
मातामहानां पुंसां च शतानां सोदरस्य च। बान्धवस्यापि पत्न्याश्च गुरूणां शिष्यभृत्ययोः॥
(९७। ८—१२)

इच्छारहित, परमात्मा, ईश्वर, अविनाशी, सत्य, परब्रह्म, प्रकृतिसे परे, परमेश्वर, परिपूर्णतम, शुद्ध, भक्तानुग्रहमूर्ति, कर्मियोंके कर्मोंके साक्षी, निर्लिप्त, ज्योतिःस्वरूप, कारणोंके भी परम कारण, सर्वस्वरूप, सर्वेश्वर, सम्पूर्ण सम्पत्तियोंके दाता, शुभदायक, अपने भक्तोंको भक्ति, दास्य और अपनी सम्पत्ति प्रदान करनेवाले हैं; अतः अशुभकारक मात्सर्य तथा ज्ञाति-बुद्धिको छोड़कर आनन्दपूर्वक उन परमानन्दस्वरूप नन्दनन्दनका भजन करो। वेदकी कौथुमि-शाखामें उनका सहस्रनाम नन्दनन्दन नामसे वर्णित है।

नारद! यह सब सुनकर उद्धव परम विस्मित हुए और उस सम्पूर्ण ज्ञानको पाकर ज्ञानसे परिपूर्ण हो गये। तत्पश्चात् उन्होंने अपने वस्त्रको गलेमें लपेट लिया और दण्डकी भाँति भूतलपर लेटकर मस्तकके बालोंसे राधिकाके चरणका स्पर्श करते हुए वे बारंबार उन्हें प्रणाम करने लगे। उस समय भक्तिके कारण उनके सारे शरीरमें रोमाञ्च हो आया था और नेत्रोंमें आँसू छलक आये थे। वे प्रेमवश तथा राधाके वियोगजन्य शोकसे व्यथित होकर उच्चस्वरसे रुदन करने लगे। तब उद्धवके प्रति प्रेम होनेके कारण राधा और गोपियाँ भी रोने लगीं। फिर उन्होंने उद्धवका गला पकड़कर बैठाया; परंतु उद्धवकी चेतना लुप्त हो गयी थी; अतः वे जँभाई लेते हुए मूर्च्छित हो गये। उनकी यह दशा देखकर राधिकाने शीघ्र ही उन कृष्णगतप्राण उद्धवको उठाकर बैठाया और उनके मुखकमलपर जलके छींटे देकर उन्हें चैतन्य कराया। नारद! तत्पश्चात् उन्होंने 'वत्स! चिरञ्जीव'—यों शुभाशीर्वाद दिया। तब उद्धव होशमें आकर उस उत्तम सभाके मध्य रोती हुई गोपियोंके सामने राधासे परमार्थप्रद वचन बोले।

उद्धवने कहा—परम दुर्लभ जम्बूद्वीप सभी द्वीपोंमें धन्य और प्रशंसनीय है; क्योंकि उसमें श्रेष्ठ भारतवर्ष है, जिसकी सभी लोग कामना करते हैं। अहो! उस भारतवर्षमें वृन्दावन नामक पुण्यवन है; जो श्रीराधाके चरणकमलके स्पर्शसे गिरी हुई रजसे पावन है और जिसके लिये देवगण भी लालायित रहते हैं। तीर्थपावनी राधाके चरणकमलकी रजसे पावन हुई वहाँकी भूमि तीनों लोकोंमें धन्य, मान्य, श्रेष्ठ और पूजनीय मानी जाती है। पूर्वकालमें ब्रह्माने गोलोकमें राधिका और श्रीकृष्णके दर्शनकी लालसासे पुष्करक्षेत्रमें वेदोक्त विधिके अनुसार भक्तिपूर्वक साठ हजार दिव्य वर्षोंतक तप किया; परंतु उस समय स्वप्नमें भी उन्हें गोलोकमें राधिका और श्रीकृष्णके दर्शन नहीं प्राप्त हुए। तदनन्तर उन्हें लीलापूर्वक सत्यरूपा आकाशवाणी सुनायी पड़ी, जो इस प्रकार थी—'ब्रह्मन्! वाराहकल्पके आनेपर भारतवर्षमें पुण्य वृन्दावनके मध्य जब परम रमणीय रासोत्सव प्रारम्भ होगा, तब वहीं रासमण्डलमें देवताओंके बीच बैठे हुए तुम्हें राधिका और श्रीकृष्णके दर्शन होंगे; इसमें संदेह नहीं है।' उस आकाशवाणीको सुनकर ब्रह्मा तपस्यासे विरत हो अपने लोकको लौट गये। समय आनेपर उन्हें श्रीकृष्णके दर्शन प्राप्त हुए, जिससे उनका हृदय प्रसन्न और चिरकालीन मनोरथ परिपूर्ण हो गया। अतः इन गोपों और गोपिकाओंका जन्म एवं जीवन सफल हो गया; क्योंकि ये नित्य श्रीराधाके चरणकमलको—जो ब्रह्मा आदि देवताओंके लिये दुर्लभ है—देखती रहती हैं। योगीन्द्र, मुनीन्द्र, सिद्धेन्द्र तथा वैष्णव संत सती राधिकाकी—जो मानिनी, पुण्यमयी, तीर्थोंको पावन बनानेवाली स्वतः शुद्ध और अत्यन्त दुर्लभ हैं—नित्य निरन्तर सेवा करते रहते हैं। जिससे उनको राधाका वह चरणकमल सुलभ हो जाता है, जिसका मिलना ब्रह्मा आदि देवताओंके लिये भी अत्यन्त कठिन है। सर्वेश्वरेश्वर परमात्मा श्रीकृष्णने जिनके चरणकमलोंके नखोंको महावरसे सुशोभित किया था; गोलोकमें स्थित शतशृङ्ग पर्वतपर रासमण्डलमें

स्वयं श्रीकृष्णने सुदुर्लभ स्तोत्रराजद्वारा जिनकी पूजा की थी तथा जिनके चरणकमलोंमें कोमल दूर्वाङ्कुर, अक्षत, गन्ध और चन्दन निवेदित करके पारिजात-पुष्पोंकी पुष्पाञ्जलि समर्पित की थी; जो छत्तीस सखियोंकी स्वामिनी और तीस हजार करोड़ गोपियोंकी अधीश्वरी हैं; जिनका राधिका नाम है, जो श्रीकृष्णकी प्राणप्रिया और देवताओंकी भी पूजनीया हैं; उन सर्वश्रेष्ठ राधिकासे जो पापी द्वेष करते हैं अथवा उनकी निन्दा और हँसी उड़ाते हैं, उन्हें सौ ब्रह्महत्याका पाप लगता है; इसमें तनिक भी संशय नहीं है। उस पापके फलस्वरूप वे तप्त तैल, महाभयंकर अन्धकार, कीट और पीड़ा-यन्त्रोंसे युक्त कुम्भीपाक और रौरवनरकमें अपनी सात पीढ़ियोंके साथ चौदह इन्द्रोंकी आयुपर्यन्त यातना भोगते हैं। तत्पश्चात् लोकजन्मानुसार वे एक जन्ममें उस पापके कारण एक सहस्र दिव्य वर्षोंतक विष्ठाके कीट होकर उत्पन्न होते हैं। इसके बाद उतने ही वर्षोंतक कुलटाओंकी योनिके रक्त और मलको खानेवाले योनि-कीट तथा मवाद चाटनेवाले मलकीट होते हैं। यों कहकर जब उद्धव रोने लगे और जानेके लिये उद्यत हुए, तब उनसे श्रीकृष्णके वियोगसे कातर हुई राधिका आँसू बहाती हुई पुनः बोलीं।

श्रीराधिकाजीने कहा—वत्स! अब तुम मथुरापुरीको जाओ और यह सब माधवको बतलाओ। बेटा! मैं जिस प्रकार गोविन्दके शीघ्र दर्शन कर सकूँ, तुम्हें प्रयत्नपूर्वक वैसा ही करना चाहिये। अच्छा अब जाओ, मेरा जन्म तो मिथ्या दुराशासे निष्फल ही बीत गया; क्योंकि आशा ही परम दुःख है और निराशा परम सुख है। तत्पश्चात् गोविन्दका ध्यान करके राधिका जीवन्मुक्त हो गयीं। तदनन्तर राधिका पुनः वहाँ ढाह मारकर रोने लगीं। तब रोती हुई राधाको प्रणाम करके उद्धव यशोदाके भवनकी ओर चले गये।

नारद! उद्धवके चले जानेपर राधा मूर्च्छित हो गयीं। उनकी चेतना लुप्त हो गयी और वे निरन्तर ध्यानमें तत्पर हो गयीं। मुने! तब श्रेष्ठ गोपियोंने कमल-सदृश नेत्रोंमें आँसू भरकर राधिकाको गीली भूमिपर बिछे हुए जलयुक्त कमलदलकी शय्यापर लिटाया; परंतु राधाके गात्रस्पर्शमात्रसे ही वह शय्या भस्म हो गयी। तब सखियोंने विरह-तापसे संतप्त हुई राधाको पुनः एक ऐसे कोमल स्थानपर सुलाया, जिसपर मुलायम चद्दर बिछी हुई थी और चन्दनमिश्रित जलका छिड़काव किया गया था; परंतु वह सुगन्धित चन्दनयुक्त जल भी सहसा सूख गया। उस समय उद्धवके बिना राधाको एक निमेष सौ युगके समान प्रतीत होने लगा। वे कहने लगीं—'हा उद्धव! हा उद्धव! तुम जल्दी जाकर श्रीहरिको मेरी दशा बतलाओ और जो मेरे प्राणेश्वर हैं उन श्रीहरिको शीघ्र यहाँ ले आओ।' तब संतापके कारण जिनकी चेतना नष्ट हो गयी थी; उन राधाको ऐसे दीन वचन कहते देखकर सभी गोपियाँ उन्हें अपनी छातीसे लगाकर रुदन करने लगीं; फिर राधाको होशमें लाकर उन्हें ढाढ़स बँधाने लगीं।

(अध्याय ९७)

श्रीकृष्णद्वारा गोकुलका वृत्तान्त पूछे जानेपर उद्धवका उसे कहते हुए राधाकी दशाका विशेषरूपसे वर्णन करना

श्रीनारायण कहते हैं—नारद! तदनन्तर उद्धव यशोदाको प्रणामकर उतावलीके साथ हर्षपूर्वक खर्जूर-काननको बाँयें करके यमुना-तटपर गये। वहीं स्नान-भोजन करके वे पुनः मथुराको चल पड़े। वहाँ पहुँचकर एकान्तमें वटकी छायामें बैठे हुए गोविन्दको देखा। उस

समय उद्धव शोकसे दग्ध होनेके कारण दुःखी हो रो रहे थे, उनके नेत्रोंसे आँसू झर रहे थे। उद्धवको आया देखकर श्रीकृष्णका मन प्रफुल्लित हो गया। तब वे उद्धवसे मुस्कराते हुए बोले।

श्रीभगवान्‌ने पूछा—उद्धव! आओ। कल्याण तो है न? राधा जीवित है न? विरह-तापसे संतप्त हुई कल्याणमयी गोपियोंका जीवन चल रहा है न? ग्वालबालों तथा गोवत्सोंका मङ्गल है न? पुत्र-विरहसे दुःखी हुई मेरी माता यशोदाका क्या हाल है? बन्धो! यह ठीक-ठीक बतलाओ कि तुम्हें देखकर मेरी माताने क्या कहा? तुमने उसे क्या उत्तर दिया तथा उसने मेरे लिये क्या कहा है? क्या तुमने वह यमुना-तट, वृन्दावन नामक पुण्यवन, जनशून्य एवं शीतल-मन्द-सुगन्ध पवनसे व्याप्त परम रमणीय रासमण्डल, कुञ्ज-कुटीरोंसे घिरा हुआ रमणीय क्रीड़ासरोवर और जिनपर भँवरे मँडरा रहे थे, उन खिले हुए फूलोंसे परिपूर्ण पुष्पवाटिका देखी? क्या भाण्डीरवनमें अत्यन्त सघन छायावाला एवं बालकोंसे संयुक्त वट-वृक्ष तुम्हें दृष्टिगोचर हुआ? क्या गौओंके गोष्ठ, गोकुल और गो-समुदाय देखनेको मिला? यदि राधा जीवित है तो तुम्हारे द्वारा देखे जानेपर उसने मेरे लिये क्या संदेशा दिया है? बन्धो! वह सारा समाचार मुझे बताओ; क्योंकि मेरा मन स्थिर नहीं है। सभी गोपिकाओंने क्या कहा है? ग्वालबालोंने कौन-सी बात कही है? मेरे पिताकी-सी अवस्थावाले वृद्ध गोपोंने क्या संदेशा दिया है? तात! बलदेवकी माता सती रोहिणीने क्या कहा है तथा दूसरी प्रिय बन्धुओंकी पत्नियोंने कौन-सी बात कही है? तुम्हें भोजन क्या मिला था? माता यशोदा तथा राधाने कौन-सी अपूर्व वस्तु उपहारमें दी है? उन्होंने किस ढंगसे बातचीत की है और उनके वचन कैसे मधुर थे? उद्धव! गोपों, गोपियों, शिशुओं, राधा और मेरी माताका मेरे प्रति कैसा प्रेम है? क्या मेरी माता मुझे स्मरण करती है? क्या रोहिणी मुझे याद करती है? क्या मेरे प्रेमविरहसे व्याकुल हुई मेरी राधाको मेरा स्मरण रहता है? क्या गोपियों, गोपों और ग्वालबालोंको मेरी याद आती है? क्या मेरे न रहनेपर भी ग्वालबाल भाण्डीरवनमें वटवृक्षके नीचे क्रीड़ा करते हैं? जहाँ ब्राह्मणपत्नियोंद्वारा दिये गये अमृतोपम अन्नका मैंने नारियों और बालकोंके साथ भोग लगाया था, उस अभीष्ट स्थानको तुमने देखा है? इन्द्रयागस्थल, श्रेष्ठ गोवर्धन तथा जहाँ ब्रह्माने गौओंका अपहरण किया था, उस उत्तम स्थानको देखा है न? श्रीकृष्णके ये प्रश्न सुनकर उद्धव सनातन भगवान् श्रीकृष्णसे यह शोकयुक्त तथा मधुरताभरी वाणी बोले।

उद्धवने कहा—नाथ! आपने जिस-जिसका नाम लिया है, वह सब मैंने इच्छानुसार देख लिया और इस भारतवर्षमें अपने जीवन और जन्मको सफल बना लिया। मैंने उस पुण्यमय वृन्दावनको भी देख लिया, जो भारतवर्षका साररूप है। व्रजभूमिमें उस वृन्दावनका साररूप परम रमणीय रासमण्डल है। उसकी सारभूता गोलोकवासिनी श्रेष्ठ गोपिकाएँ हैं। उनकी सारभूता जो परात्परा

रासेश्वरी राधा हैं; उनके भी मैंने दर्शन किये हैं। वे कदलीवनके मध्य एकान्तमें चन्दनचर्चित एवं जलयुक्त पङ्किल भूमिपर बिछे हुए कमलदलकी शय्यापर अत्यन्त खिन्न होकर पड़ी थीं। उन्होंने रत्नाभरणोंको उतार फेंका है। उनका शरीर श्वेत वस्त्रसे आच्छादित है। वे अत्यन्त मलिन एवं दुर्बल हो गयी हैं। आहार छोड़ देनेके कारण उनका उदर शीर्ण हो गया है। वे क्षण-क्षणपर साँस लेती हैं। वहाँ सखियाँ निरन्तर श्वेत चँवरसे उनकी सेवा कर रही हैं। हरे! यों विरह-तापसे पीड़िता श्रीराधा क्या क्षणभर जीवित रह सकती हैं? अरे! उन्हें तो इसका भी भान नहीं रह गया है कि क्या जल है और क्या स्थल है, क्या रात है और क्या दिन है, कौन मनुष्य है और कौन पशु है तथा कौन अपना है और कौन पराया है? वे बाह्यज्ञानशून्य होकर तुम्हारे चरणके ध्यानमें मग्न हैं। वे त्रिलोकीमें अपने उज्ज्वल यशसे प्रकाशित हो रही हैं। उनकी मृत्यु भी कीर्तिदायिनी है। परंतु जगन्नाथ! अज्ञानी चोर-डाकू भी इस प्रकार स्त्री-हत्या करना नहीं चाहते; अतः तुम शीघ्र ही अभीष्ट कदलीवनको जाओ; क्योंकि राधासे बढ़कर भक्त न कोई हुआ है और न होगा। वे सब तरहसे पीड़ित होकर अनाथ हो गयी हैं। वसन्त-ऋतु, किरणधारी चन्द्रमा और सुगन्धित वायु उनके लिये दाहकारक हो गये हैं। तपाये हुए सुवर्णके समान उनकी चमकीली कान्ति इस समय कज्जलकी तरह श्याम हो गयी है और उनके केश सुवर्णके-से भूरे हो गये हैं। उन्होंने उत्तम वस्त्र और शृङ्गारका त्याग कर दिया है। श्रीकृष्ण! स्वयं भगवान् ब्रह्मा—जो देवताओंमें सर्वश्रेष्ठ हैं—तुम्हारे भक्त हैं। योगीन्द्रोंके गुरुके गुरु भगवान् शंकर तुम्हारे भक्त हैं। ज्ञानियोंमें श्रेष्ठ गणेश और सनत्कुमार भी तुम्हारा भजन करते हैं। भूतलपर कितने मुनीन्द्र तुम्हारे भजनमें लगे रहते हैं; परंतु राधा तुम्हारी जैसी भक्ति करती हैं, वैसा भक्त कोई भी कहीं भी दूसरा नहीं है। राधा जिस प्रकार तुम्हारे ध्यानमें तल्लीन रहती हैं वैसा तो स्वयं लक्ष्मी भी नहीं कर सकतीं। महाभाग! मैंने राधाके सामने 'श्रीहरि आयेंगे' यों स्वीकार कर लिया है; अतः तुम शीघ्र ही वहाँ जाओ और मेरा वचन सार्थक करो। उद्धवकी बात सुनकर माधव ठठाकर हँस पड़े और वेदोक्त हितकारक एवं उत्तम सत्यव्रतका वर्णन करते हुए बोले।

श्रीभगवान्‌ने कहा—उद्धव! मैं तुम्हारे द्वारा अङ्गीकार किये गये वचनको अवश्य सफल करूँगा। मैं स्वप्नमें माता यशोदाके तथा गोपियोंके निकट जाऊँगा। यह सुनकर महायशस्वी उद्धव अपने घर चले गये और श्रीकृष्ण स्वप्नमें विरहाकुल गोकुलमें जा पहुँचे। वहाँ उन्होंने स्वप्नमें राधाको भलीभाँति आश्वासन देकर परम दुर्लभ ज्ञान प्रदान किया। क्रीड़ा करके उन गोपिकाओंको यथोचितरूपसे संतुष्ट किया; नींदमें पड़ी हुई माता यशोदाका स्तन-पान करके उन्हें ढाढ़स बँधाया तथा गोपों और ग्वालबालोंको समझा-बुझाकर वे पुनः वहाँसे चल दिये।

(अध्याय ९८)

गर्गजीका आगमन और वसुदेवजीसे पुत्रोंके उपनयनके लिये कहना, उसी प्रसङ्गमें मुनियों और देवताओंका आना, वसुदेवजीद्वारा उनका सत्कार और गणेशका अग्र-पूजन

श्रीनारायण कहते हैं—नारद! इसी समय तपस्वी गर्गजी, जो सदा संयममें तत्पर रहनेवाले और यदुवंशियोंके कुल-पुरोहित थे, वसुदेवजीके आश्रमपर पधारे। उनके सिरपर जटा थी तथा

हाथमें दण्ड और छत्र सुशोभित थे। वे शुक्ल यज्ञोपवीत धारण किये हुए थे। उनके दाँत और वस्त्र श्वेत थे तथा वे ब्रह्मतेजसे उद्दीप्त हो रहे थे। उन्हें आया देख वसुदेव और देवकीने सहसा उठकर भक्तिपूर्वक प्रणाम किया और बैठनेके लिये रत्नसिंहासन दिया। फिर मधुपर्क, कामधेनु और अग्निशुद्ध वस्त्र प्रदान करके चन्दन और पुष्पमालाद्वारा उनकी भक्तिभावसहित पूजा की। इसके बाद यत्नपूर्वक उन्हें मिष्टान्न, उत्तम अन्न और मधुर पिष्टकका भोजन कराया और सुवासित पानका बीड़ा दिया। तदनन्तर गर्गजीने बलदेवसहित श्रीकृष्णको देखकर उन्हें मन-ही-मन प्रणाम किया और पतिव्रता देवकी तथा वसुदेवजीसे कहा।

गर्गजी बोले—वसुदेव! जरा, बलरामसहित अपने शुद्धाचारी एवं श्रेष्ठ पुत्र श्रीकृष्णकी ओर तो देखो। अब इनकी अवस्था उपनयन-संस्कारके योग्य हो गयी है; अतः मेरी इस बातपर ध्यान दो।

वसुदेवजीने कहा—गुरो! आप यदुवंशियोंके पूज्य देव हैं, अतः उपनयनके योग्य ऐसा शुद्ध एवं शुभ मुहूर्त नियत कीजिये, जो सत्पुरुषोंके लिये भी प्रशंसनीय हो।

गर्गजी बोले—वसु-तुल्य वसुदेव! परसों वह शुभ मुहूर्त है; उस दिन चन्द्रमा और तारा अनुकूल हैं। वह दिन सत्पुरुषोंको भी मान्य है; अतः उसी मुहूर्तमें तुम उपनयन-संस्कार कर सकते हो। इसके लिये यत्नपूर्वक सभी सामग्री एकत्रित करो और सभी भाई-बन्धुओंको निमन्त्रण-पत्र भी भेज दो।

गर्गजीके वचन सुनकर वसूपम वसुदेवजीने सभी जाति-बन्धुओंके पास मङ्गल-पत्रिका भेज दी। फिर दूध, दही, घी, मधु और गुड़की छोटी-छोटी मनोहर नदियाँ तैयार करायीं और नाना प्रकारके उपहारोंकी राशि तथा मणि, रत्न, सुवर्ण, मुक्ता, माणिक्य, हीरे, अनेक तरहके आभूषण और वस्त्रोंकी ढेरियाँ लगवा दीं। इधर भक्तवत्सल श्रीकृष्णने भी भक्तिपूर्वक देवगणों, मुनीन्द्रों, श्रेष्ठ सिद्धों और भक्तोंका मन-ही-मन स्मरण किया। तदनन्तर उस शुभ दिनके प्राप्त होनेपर वे सभी उपस्थित हुए। मुनिश्रेष्ठ, बान्धव, बहुत-से नरेश, देवकन्याएँ, नागकन्याएँ, राजकुमारियाँ, विद्याधरियाँ और बाजा बजानेवाले गन्धर्व भी आये। ब्राह्मण, भिक्षुक, भट्ट, यति, ब्रह्मचारी, संन्यासी, अवधूत और योगीलोग भी पधारे। उस शुभ कर्ममें स्त्रियोंके भाई-बन्धु, अपने बन्धुओंका समुदाय, नानाका तथा उनके बन्धुओंका कुटुम्ब—ये सभी सम्मिलित हुए। फिर भीष्म, द्रोण, कर्ण, अश्वत्थामा, द्विजवर कृपाचार्य, पत्नी और पुत्रोंसहित धृतराष्ट्र, हर्ष और शोकमें भरी हुई पुत्रोंसहित विधवा कुन्ती तथा विभिन्न देशोंमें उत्पन्न हुए योग्य राजा और राजकुमार भी आये। नारद! अत्रि, वसिष्ठ, च्यवन, महातपस्वी भरद्वाज, याज्ञवल्क्य, भीम, गार्ग्य, महातपस्वी गर्ग, वत्स, पुत्रसहित धर्म, जैगीषव्य, पराशर, पुलह, पुलस्त्य, अगस्त्य, सौभरि, सनक, सनन्दन, तीसरे सनातन, भगवान् सनत्कुमार, वोढु, पञ्चशिख, दुर्वासा, अङ्गिरा, व्यास, व्यासनन्दन शुकदेव, कुशिक, कौशिक, परशुराम, ऋष्यशृङ्ग, विभाण्डक, शृङ्गी, वामदेव, गुणके सागर गौतम, क्रतु, यति, आरुणि, शुक्राचार्य, बृहस्पति, अष्टावक्र, वामन, पारिभद्र, वाल्मीकि, पैल, वैशम्पायन, प्रचेता, पुरुजित्, भृगु, मरीचि, मधुजित्, प्रजापति कश्यप, देवमाता अदिति, दैत्यजननी दिति, सुमन्तु, सुभानु, एक, कात्यायन, मार्कण्डेय, लोमश, कपिल, पराशर, पाणिनि, पारियात्र, मुनिवर पारिजात, संवर्त, उतथ्य, नर, मैं (नारायण), विश्वामित्र, शतानन्द, जाबालि, तैतिर, योगियों और ज्ञानियोंके गुरु ब्रह्मांशभूत सान्दीपनि, उपमन्यु, गौरमुख, मैत्रेय, श्रुतश्रवा, कठ, कच, करथ, धर्मज्ञ भरद्वाज—ये सभी मुनि शिष्योंसहित वसुदेवजीके आश्रमपर

पधारे। उन्हें आया देखकर वसुदेवजीने दण्डकी भाँति भूमिपर लेटकर सबकी चरण-वन्दना की।

इसी समय अपने वाहन हंसपर सवार हो प्रसन्नमुखवाले ब्रह्मा, रत्ननिर्मित विमानपर आरूढ़ हो पार्वतीसहित शंकर, स्वयं नन्दी, महाकाल, वीरभद्र, सुभद्रक, मणिभद्र, पारिभद्र, कार्तिकेय, गणेश्वर, गजराज ऐरावतपर बैठे हुए महेन्द्र, धर्म, चन्द्रमा, सूर्य, कुबेर, वरुण, पवन, अग्नि, संयमनीपुरीके स्वामी यम, जयन्त, नलकूबर, सभी ग्रह, आठों वसु, गणोंसहित ग्यारहों रुद्र, बारहों आदित्य, शेषनाग तथा अनेकानेक देवगण भी आये। वसुदेवजीने भक्तिपूर्वक भूमिपर सिर रखकर उन सबकी वन्दना की और भक्तिवश मस्तक झुकाकर परम भक्तिके साथ उन ऋषिगणों, देवेन्द्रों तथा देवगणोंका स्तवन आरम्भ किया। उस समय उनका शरीर हर्षसे पुलकायमान हो रहा था।

वसुदेवजी बोले—जो परब्रह्म, परम धाम, परमेश्वर, परात्पर, लोकोंके प्रतिपालक, वेदोंके उत्पादक, सृष्टिकर्ता, सृष्टिके कारण और सनातन देव हैं; वे स्वयं ब्रह्मा, जो देवताओं, मुनीन्द्रों और सिद्धेन्द्रोंके गुरुके गुरु हैं, स्वप्नमें भी जिनके चरणकमलका क्षणमात्रके लिये दर्शन मिलना परम दुर्लभ है, जिनके स्मरणमात्रसे सभी अनिष्ट दूर भाग जाते हैं, वे भगवान् शिव; जिनके स्मरणसे मनुष्य सम्पूर्ण संकटोंसे पार होकर कल्याणका भागी हो जाता है, सर्वप्रथम जिनकी पूजा होती है, जो देवताओंके अगुआ और श्रेष्ठ हैं, कलशोंपर भक्तिपूर्वक मन्त्रोंद्वारा जिनका आवाहन करनेसे मङ्गल होता है, जो विघ्नोंके विनाशक हैं, वे स्वयं साक्षात् भगवान् गणेश, देवताओंके पूज्य भगवान् कार्तिकेय—ये सब मेरे घर आये हैं। देवताओंकी पूजनीया परात्परा सर्वश्रेष्ठा महालक्ष्मीने भी मेरे गृहमें पदार्पण किया है। जो लोकोंकी आदिरूपिणी, सर्वशक्तिस्वरूपा, मूलप्रकृति, ईश्वरी, परात्परोंमें भी परमश्रेष्ठ और परब्रह्मस्वरूपिणी हैं; शरत्कालमें भक्तिपूर्वक जिनके चरणोंकी समाराधना करके मनुष्य अपना अभीष्ट सिद्ध कर लेता है; जो परमाद्या, कृपामयी और कृपापरवश हो भारत-भूमिपर आविर्भूत हुई हैं; उन भक्तवत्सला साक्षात् माता पार्वतीका सम्पूर्ण देवताओं और गणोंके साथ मेरे मन्दिरमें शुभागमन हुआ है। दुर्गे! चूँकि आप मेरे घर पधारी हैं, अतः मैं धन्य और कृतार्थ हो गया। मेरा जीवन सफल हो गया।

इस प्रकार वसुदेवजीने गलेमें वस्त्र बाँधकर हर्षपूर्वक क्रमशः परस्पर सभी देवों, मुनिवरों और विप्रोंकी स्तुति की और उन्हें पृथक्-पृथक् श्रेष्ठ रत्नसिंहासनोंपर बैठाया। फिर क्रमशः अलग-अलग उनकी विधिवत् पूजा की। तत्पश्चात् भक्तिभावित हृदयसे रत्न, मूँगा, मणि, मोती, माणिक्य, हीरा, भूषण, वस्त्र, सुगन्धित चन्दन और पुष्पमालाओंद्वारा ब्रह्मा आदि देवताओं, मुनिसमूहों, ब्राह्मणों और पुरोहित गर्गजीका एक-एक करके वरण किया। तदनन्तर उस शुभ कर्मके अवसरपर सभीके मध्यभागमें स्थित एक रमणीय रत्नसिंहासनपर गणेशजीका पूजाके लिये वरण किया और जिसमें सात तीर्थोंका जल, पुष्प-चन्दनयुक्त शीतल, सुवासित स्वर्गगङ्गाका जल, पुष्करका पुण्यमय जल और समुद्रका जल भरा था, उस सुवर्णकलशसे तथा शुद्ध पञ्चामृत और पञ्चगव्यसे भक्तिभावसहित मन्त्रोच्चारणपूर्वक गणेशको स्नान कराया। फिर अग्निशुद्ध वस्त्र, रत्नोंके आभूषण, पारिजातपुष्पोंकी माला, गन्ध, चन्दन, पुष्प, रत्नोंकी माला और अंगूठी निवेदित की। नारद! तत्पश्चात् जो समस्त देवताओंके अधिपति, शुभकारक, विघ्नोंके विनाशक, शान्त, ऐश्वर्यशाली और सनातन हैं; उन पार्वतीनन्दन गणेशकी वसुदेवजीने स्तुति की। (अध्याय ९९)

अदिति आदि देवियोंद्वारा पार्वतीका स्वागत-सत्कार, वसुदेवजीका देव-पूजन आदि माङ्गलिक कार्य करके बलराम और श्रीकृष्णका उपनयन करना, तत्पश्चात् नन्द आदि समागत अभ्यागतोंकी बिदाई और वसुदेव-देवकीका अनेकविध वस्तुओंका दान करना

श्रीनारायण कहते हैं—नारद! तदनन्तर अदिति, दिति, देवकी, रोहिणी, रति, सरस्वती, पतिव्रता यशोदा, लोपामुद्रा, अरुन्धती, अहल्या तथा तारका—ये सभी महिलाएँ पार्वतीको देखकर तुरंत ही मन्दिरसे बाहर निकलीं और बारंबार आलिङ्गन करके उन्हें नमस्कार करने लगीं। तत्पश्चात् परस्पर वार्तालाप करके उन्हें एक रत्ननिर्मित महलमें प्रवेश कराया। वहाँ उन परमेश्वरीको रमणीय रत्नसिंहासनपर बैठाया गया और वस्त्र, रत्नोंके आभूषणों तथा पुष्पमालाओंसे उनकी पूजा की गयी। तत्पश्चात् देवकीने भक्तिपूर्वक उनके चरणकमलोंमें इन्द्रद्वारा लाया गया पारिजातका मनोहर पुष्प निवेदन किया। फिर माँगमें सिन्दूरकी बेंदी और ललाटपर चन्दनका बिन्दु लगाकर उन दोनों बिन्दुओंके चारों ओर कस्तूरी और कुङ्कुम आदिका लेप किया। तत्पश्चात् मिष्टान्न भोजन कराया, सुवासित शीतल जल पीनेको दिया और कपूर आदिसे सुवासित सुन्दर एवं श्रेष्ठ पानका बीड़ा समर्पित किया। उनके दोनों चरणकमलोंके नखोंपर अलक्तक लगाकर पैरोंको कुङ्कुमसे रँग दिया और श्वेत चँवर डुलाकर उनकी सेवा की। उत्तम व्रतका पालन करनेवाले नारद! इस प्रकार पार्वतीदेवीका भलीभाँति पूजन करके वसुदेवजीकी प्रियतमा देवकीने क्रमशः मुनिपत्नियों, पति-पुत्रवती सतियों, राजकन्याओं, देवकन्याओं, सौन्दर्यशालिनी नाग-कन्याओं, मुनिकन्याओं और भाई-बन्धुओंकी कन्याओंका भी विधिवत् पूजन किया। कौतुकवश नाना प्रकारके सुन्दर बाजे बजवाये; माङ्गलिक कार्य कराया; ब्राह्मणोंको जिमाया; मथुराकी ग्रामदेवता भैरवी और मङ्गलचण्डिका षष्ठीकी षोडशोपचारद्वारा पूजा की। पुण्यकारक एवं मङ्गलमय शुद्ध स्वस्त्ययन तथा वेदोंका पाठ कराया। तदनन्तर पुत्रवत्सला देवकीने स्वर्गगङ्गाके उत्तम जलसे परिपूर्ण सुवर्णकलशसे बलरामसहित श्रीकृष्णको नहलाया और वस्त्र, चन्दन, माला तथा बहुमूल्य रत्नोंके बने हुए मनोहर आभूषणोंसे उन दोनों बालकोंका शृङ्गार किया। नारद! यों माताद्वारा दिये गये आभूषणोंसे विभूषित हो बलराम और श्रीकृष्ण देवताओं और मुनिवरोंकी उस सभामें आये। उन जगदीश्वरको आये हुए देखकर स्वयं ब्रह्मा, शम्भु, शेषनाग, धर्म और सूर्य आदि सभी सभासद् बड़ी उतावलीके साथ अपने-अपने आसनोंसे उठकर खड़े हो गये। फिर

देवगण, मुनिगण, कार्तिकेय, गणेश, भगवान् ब्रह्मा, शिव और अनन्त आदिने पृथक्-पृथक्

परमेश्वर श्रीकृष्णकी स्तुति की।

मुने! इस प्रकार जब देवताओं और मुनियोंने मन-ही-मन श्रीकृष्णकी स्तुति करके विराम लिया, तब आँगनमें पीले वस्त्रसे सुशोभित श्रीकृष्णको देखा। उस समय उनकी वैसी ही शोभा हो रही थी, जैसी मालतीकी मालासे सुशोभित बकपङ्क्ति तथा बिजलीसे युक्त नूतन मेघकी होती है। उनके ललाटपर कस्तूरीयुक्त चन्दनका मण्डलाकार तिलक बादलमें छिपे हुए कलङ्कयुक्त चन्द्रमाके समान सुशोभित हो रहा था। उनके दो भुजाएँ थीं। उन राधाकान्तका शरीर श्याम, कमनीय और मनोहर था। उनके प्रसन्नमुखपर मन्द मुस्कानकी छटा थी। वे भक्तानुग्रह-मूर्ति तथा रत्नोंके बाजूबंद, कङ्कण और करधनीसे सुशोभित थे और बलरामसहित पिताकी गोदमें विराज रहे थे। तदनन्तर मनोरम शुभलग्नके आनेपर जब कि लग्नेश उच्च स्थानमें स्थित था, उसपर सौम्य ग्रहोंकी दृष्टि पड़ रही थी, केवल सद्ग्रह ही उसे देख रहे थे तथा वह असद्ग्रहोंकी दृष्टिसे परे था। ऐसे मङ्गल-कालमें देवताओं और ब्राह्मणोंकी आज्ञासे वसुदेवजीने स्वस्तिवाचनपूर्वक शुभकर्म आरम्भ किया। उस समय उन्होंने ब्राह्मणको आदरसहित सौ मोहरें दान देकर देवगण, मुनिगण, पुरोहित गर्गजी, गणेश, सूर्य, अग्नि, शंकर और पार्वतीको नमस्कार किया। फिर उस देवसमाजमें छः प्रधान देवताओंकी भक्तिपूर्वक अक्षतसहित षोडशोपचारद्वारा पूजा करके वेदमन्त्रोच्चारणपूर्वक पुत्रका अधिवासन (सुगन्धित पदार्थका अनुलेप अर्थात् हरिद्राकर्म) किया। फिर अनेकानेक देवताओं, दिक्पालों और नवग्रहोंका भलीभाँति पूजन करके षोडश मातृकाओंको भक्तिपूर्वक पञ्चोपचार समर्पित किया। घीसे सात बार वसुधारा दिया। पुनः चेदिराज वसुका पूजन-नमस्कार करके वे आगे बढ़े और वृद्धिश्राद्धको समाप्त करके जो कुछ अन्य देवसम्बन्धी कार्य था; उसे सम्पन्न किया। इसके बाद वेदोक्त यज्ञ करके हर्षपूर्वक अग्रज बलदेव और परमात्मा श्रीकृष्णको यज्ञसूत्र (जनेऊ) पहनाया। मुनिवर सांदीपनिने उन दोनोंको गायत्री-मन्त्र प्रदान किया। पहले-पहल पार्वतीने बड़े आदरके साथ बहुमूल्य रत्नद्वारा निर्मित पात्रमें रखे हुए मोती, माणिक्य और हीरोंको भिक्षारूपमें समर्पित किया। पिता वसुदेवजीने हीरेका बना हुआ हार देकर श्वेत पुष्प और दूर्वाङ्कुरद्वारा शुभाशीर्वाद प्रदान किया। तत्पश्चात् अदिति, दिति, मुनिपत्नियाँ, देवकी, यशोदा, रोहिणी, सावित्री और सरस्वती—इन सभीने हर्षपूर्वक अलग-अलग मणि और सुवर्णसे भूषित भिक्षा प्रदान की। इसके बाद जिनके नेत्र स्निग्ध थे और मुखपर मुस्कानकी छटा छा रही थी; वे देवकन्याएँ, नागकन्याएँ, राजकन्याएँ, पतिव्रताएँ, भाई-बन्धुओंकी स्त्रियाँ, इन्द्राणी, वरुणानी, पवन-पत्नी, रोहिणी, कुबेर-पत्नी, स्वाहा और कामदेवकी प्रियतमा रति—इन लोगोंने पृथक्-पृथक् रत्नाभरणोंसे विभूषित भिक्षा दी। तब बलरामसहित भगवान् श्रीकृष्णने भक्तिपूर्वक भिक्षा ग्रहण करके उसका कुछ भाग पुरोहित गर्गजीको तथा कुछ भाग अपने गुरु सांदीपनि मुनिको दे दिया। फिर वैदिक कर्म समाप्त करके गर्गजीको दक्षिणा दी गयी। आदरपूर्वक देवताओं और ब्राह्मणोंको भी भोजन कराया गया। तदनन्तर उस यज्ञमें जो-जो लोग आये थे, वे सभी बलदेव और श्रीकृष्णको शुभाशीर्वाद देकर प्रसन्नमनसे अपने-अपने गृहको लौट गये। तब पत्नीसहित नन्द पुत्रके उस शुभकर्मको समाप्त करके बलराम और श्रीकृष्णको गोदमें लेकर उन दोनोंका मुख चूमने लगे। उस समय नन्द और पतिव्रता यशोदा उच्चस्वरसे रो पड़ीं, तब श्रीकृष्णने बड़े यत्नसे उन्हें आश्वासन देकर समझाते हुए कहा।

श्रीकृष्ण बोले—तात! तुम मेरे परमार्थतः पिता हो और हे माता यशोदा! तुम्हीं मेरी पालन-

पोषण करनेवाली माता हो। अब तुम लोग आनन्दपूर्वक शीघ्र ही व्रजको लौट जाओ। पिताजी! इस समय मैं बलरामजीके साथ वेदाध्ययन करनेके लिये मुनिवर सांदीपनिके निवासस्थान अवन्तिनगरको जाऊँगा। चिरकालके बाद वहाँसे लौटनेपर पुनः आपके दर्शन होंगे। माताजी! काल ही ग्रहण करता है और वही भेद उत्पन्न करता है। यहाँतक कि मनुष्योंके जो वियोग, मिलन, सुख, दुःख, शोक और मङ्गल आदि हैं; उन सबका कर्ता काल ही है। मैंने जो तत्त्व पिताजीको बतलाया है, वह योगियोंके लिये भी दुर्लभ है। वे आनन्दपूर्वक वह सारा रहस्य तुम्हें बतलायेंगे। इतना कहकर जगदीश्वर श्रीकृष्ण वसुदेवजीकी सभामें चले गये और क्षणभर वहाँ ठहरकर पिताकी आज्ञासे महर्षि सांदीपनिके आश्रमको प्रस्थित हुए।

तदनन्तर यशोदासहित नन्दजी विनयपूर्वक वसुदेव-देवकीसे वार्तालाप करके दुःखी हृदयसे जानेको उद्यत हुए। उस समय देवकीने नन्दजीको मुक्तामणि, सुवर्ण, माणिक्य, हीरा, रत्न और अग्निशुद्ध वस्त्र भेंट किये। वसुदेवजी और श्रीकृष्णने उन्हें आदरपूर्वक श्वेत अश्व, गजराज, सुवर्ण और उत्तम रथ प्रदान किये। फिर नन्द-यशोदाके चलनेपर बहुत-से ब्राह्मण, देवकी आदि प्रमुख महिलाएँ, वसुदेव, अक्रूर और उद्धव भी हर्षपूर्वक उनके पीछे-पीछे चले। यमुनाके निकट पहुँचकर वे सभी शोकके कारण रोने लगे। फिर परस्पर वार्तालाप करके वे सब-के-सब अपने-अपने घरको चले गये। मुने! तदनन्तर विधवा कुन्ती तरह-तरहके रत्नों और मणियोंकी भेंट पाकर वसुदेवजीकी आज्ञासे पुत्रोंसहित आनन्दपूर्वक अपने गृहको प्रस्थित हुईं। इधर वसुदेव और देवकीने पुत्रके कल्याणके लिये अनेक प्रकारके रत्न, मणि, वस्त्र, सोना, चाँदी, मोतियों और हीरोंके हार और अमृत-तुल्य मिष्टान्न भट्ट ब्राह्मणोंको आदरपूर्वक हर्षपूर्ण मनसे समर्पित किये। फिर यत्नपूर्वक महोत्सव मनाया गया; जिसमें वेद-पाठ, हरिनाम-संकीर्तन और ब्राह्मणोंको भोजन कराया गया। इसके बाद जाति-भाइयोंको यथोचित रूपसे मनोहर मणि, माणिक्य, मोती और वस्त्र पुरस्काररूपमें दिये।

(अध्याय १००-१०१)

बलरामसहित श्रीकृष्णका विद्या पढ़नेके लिये महर्षि सांदीपनिके निकट जाना, गुरु और गुरुपत्नीद्वारा उनका स्वागत और विद्याध्ययनके पश्चात् गुरुदक्षिणारूपमें गुरुके मृतक पुत्रको उन्हें वापस देकर घर लौटना

श्रीनारायण कहते हैं—नारद! श्रीकृष्णने बलरामके साथ हर्षपूर्वक सांदीपनिके गृह जाकर अपने उन गुरुदेव तथा पतिव्रता गुरुपत्नीको नमस्कार किया और उन्हें भेंटरूपमें रत्न एवं मणि समर्पित की। तत्पश्चात् उनसे शुभाशीर्वाद लेकर वे श्रीहरि उन गुरुदेवसे यथोचित वचन बोले।

श्रीकृष्णने कहा—विप्रवर! आपसे अपनी अभीष्ट विद्या प्राप्त करूँगा—ऐसी मेरी लालसा है; अतः शुभ मुहूर्त निश्चय करके मुझे यथोचितरूपसे विद्याध्ययन कराइये। तब 'ॐ—बहुत अच्छा'—यों कहकर मुनिवर सांदीपनिने हर्षपूर्वक मधुपर्कप्राशन, गौ, वस्त्र और चन्दनद्वारा उनका आदर-सत्कार किया, मिष्टान्न भोजन कराया, सुवासित पानका बीड़ा दिया, मधुर वार्तालाप किया और उन परमेश्वरका स्तवन करते हुए कहा।

सांदीपनि बोले—भक्तोंके प्राणवल्लभ! तुम परब्रह्म, परमधाम, परमेश्वर, परात्पर, स्वेच्छामय, स्वयंज्योति, निर्लिप्त, अद्वितीय, निरङ्कुश, भक्तोंके

एकमात्र स्वामी, भक्तोंके इष्टदेव, भक्तानुग्रहमूर्ति और भक्तोंका मनोरथ पूर्ण करनेके लिये कल्पतरु हो। ब्रह्मा, शिव और शेष तुम्हारी वन्दना करते हैं। तुम पृथ्वीका भार हरण करनेके लिये इस भूतलपर मायावश बालरूपमें अवतीर्ण हुए हो और मायासे ही भूपाल बने हो। योगीलोग जिसे सनातन ब्रह्मज्योति जानते हैं, भक्तगण अपने हृदयमें जिस ज्योतिका हर्षपूर्वक ध्यान करते हैं, जिनके दो भुजाएँ हैं, हाथमें मुरली सुशोभित है, सर्वाङ्गमें चन्दनका अनुलेप लगा हुआ है, जिनका सुन्दर श्याम रूप है, जो मन्द मुस्कानयुक्त, भक्तवत्सल, पीताम्बरधारी, वनमाला-विभूषित और लीला-कटाक्षोंसे कामदेवको उपहासास्पद एवं मूर्च्छित कर देनेवाले हैं, जिनका चरणकमल अलक्तकके उत्पत्तिस्थानकी भाँति अत्यन्त शोभायमान है और शरीर कौस्तुभमणिसे उद्भासित हो रहा है, जिनकी मनोहर दिव्य मूर्ति है, जो हर्षवश मन्द-मन्द मुस्करा रहे हैं, जिनका सुन्दर वेश है, देवगण जिनकी स्तुति करते हैं, जो देवोंके देव, जगदीश्वर, त्रिलोकीको मोहित करनेवाले, सर्वश्रेष्ठ, करोड़ों कामदेवोंकी-सी कान्तिवाले, कमनीय, ईश्वररहित (स्वयं ईश्वर), अमूल्य रत्नोंके बने हुए भूषणोंसे विभूषित, श्रेष्ठ, सर्वोत्तम, वरदाता, वरदाताओंके इष्टदेव और चारों वेदों तथा कारणोंके भी कारण हैं; वही तुम लीलावश पढ़नेके लिये मेरे प्रिय स्थानपर आये हो। तुम तो स्वात्मामें रमण करनेवाले, सर्वव्यापी एवं परिपूर्णतम हो; अतः तुम्हारे विद्याध्ययन, रमण, गमन और युद्ध आदि सभी कार्य लोक-शिक्षाके लिये हैं।

तत्पश्चात् गुरुपत्नी बोलीं—प्रभो! आज मेरा जन्म, जीवन, पातिव्रत्य तथा तपोवनका वास सफल हो गया। मैंने जिस हाथसे तुम्हें इच्छित अन्न प्रदान किया है, वह मेरा दाहिना हाथ सफल हो गया। जो आश्रम तीर्थपाद भगवान्‌के चरणसे चिह्नित है; वह तीर्थसे भी बढ़कर है। उनकी चरणरजसे गृह पावन और आँगन उत्तम हो जाते हैं। तुम्हारा चरणकमल हम दोनोंके जन्म-मरणका निवारक है; क्योंकि दुःख, शोक, भोग, रोग, जन्म, कर्म, भूख-प्यास आदि तभीतक कष्टप्रद होते हैं, जबतक तुम्हारे चरण-कमलका दर्शन और भजन नहीं होता*। हे भगवन्! तुम कालके भी काल, सृष्टिकर्ता ब्रह्मा और संहारकारक शिवके भी ईश्वर तथा माया-मोहके विनाशक हो। कृपानाथ! मुझपर कृपा करो। इतना कहते-कहते गुरुपत्नीके नेत्रोंमें आँसू छलक आये। वे पुनः श्रीकृष्णको अपनी गोदमें लेकर प्रेमपूर्वक देवकीकी तरह अपना स्तन पिलाने लगीं।

तब श्रीकृष्णने कहा—माता! तुम मुझ बालककी स्तुति कैसे कर रही हो; क्योंकि मैं तो तुम्हारा दुधमुँहा बच्चा हूँ। अच्छा, अब तुम इस प्राकृतिक मिथ्या नश्वर शरीरको त्यागकर और जन्म, मृत्यु एवं बुढ़ापेका हरण करनेवाले निर्मल देहको धारण करके अपने पतिदेवके साथ अभीष्ट गोलोकको जाओ।

यों कहकर श्रीकृष्णने एक ही महीनेमें परम भक्तिके साथ मुनिवर सांदीपनिसे चारों वेदोंका अध्ययन करके पूर्वकालमें मरे हुए उनके पुत्रको वापस लाकर उन्हें समर्पित कर दिया। फिर लाखों-लाखों मणि, रत्न, हीरे, मोती, माणिक्य, त्रैलोक्यदुर्लभ वस्त्र, हार, अँगूठियाँ और सोनेकी मुहरें दक्षिणामें दीं। तत्पश्चात् स्त्रीके सर्वाङ्गमें पहननेयोग्य अमूल्य रत्नोंके बने हुए आभूषण और अग्निशुद्ध श्रेष्ठ वस्त्र गुरुपत्नीको प्रदान किये।

---

* तावद् दुःखं च शोकश्च तावद् भोगश्च रोगकः। तावज्जन्मानि कर्माणि क्षुत्पिपासादिकानि च॥
यावत्त्वत्पादपद्मस्य भजनं नास्ति दर्शनम्॥ (१२०। १९-२०)

तदनन्तर मुनि वह सब सामान अपने पुत्रको देकर

स्वयं पत्नीके साथ अमूल्य रत्न-निर्मित रथपर सवार हो उत्तम गोलोकको चले गये। उस अद्भुत दृश्यको देखकर श्रीकृष्ण हर्षपूर्वक अपने गृहको लौट गये। नारद! इस प्रकार ब्रह्मण्यदेव भगवान् श्रीकृष्णके चरित्रको श्रवण करो। यह स्तोत्र महान् पुण्यदायक है। जो मनुष्य भक्तिपूर्वक इसका पाठ करता है, उसकी निःसंदेह श्रीकृष्णमें निश्चल भक्ति हो जाती है। इसके प्रभावसे कीर्तिहीन परम यशस्वी और मूर्ख पण्डित हो जाता है। वह इस लोकमें सुख भोगकर अन्तमें श्रीहरिके पदको प्राप्त होता है। वहाँ उसे नित्य श्रीहरिकी दासता सुलभ रहती है, इसमें तनिक भी संशय नहीं है।

(अध्याय १०२)

द्वारकापुरीका निर्माण, उसे देखनेके लिये देवताओं और मुनियोंका आना और उग्रसेनका राज्याभिषेक

श्रीनारायण कहते हैं—नारद! तदनन्तर सर्वव्यापी श्रीहरिने बलरामके साथ मथुरापुरीमें आकर पिताको प्रणाम किया और वटवृक्षके नीचे बैठकर आदरसहित गरुड़, क्षारसागर और विश्वकर्माका स्मरण किया। वहाँ उन्होंने गोपवेषका परित्याग करके राजसी वेष धारण कर लिया। इसी बीच करोड़ों सूर्योंके समान प्रकाशमान श्रेष्ठ सुदर्शनचक्र स्वयं ही श्रीकृष्णके पास आया। वह उत्तम अस्त्र श्रीहरिके सदृश तेजस्वी, शत्रुनाशक, अमोघ, अस्त्रोंमें श्रेष्ठ और परमोत्कृष्ट था। इसके बाद रत्ननिर्मित विमानको आगे करके गरुड़, शिष्यसहित विश्वकर्मा तथा काँपता हुआ समुद्र श्रीहरिके संनिकट आये। उन सब लोगोंने भक्तिपूर्वक सिर झुकाकर श्रीहरिको प्रणाम किया। तब सर्वव्यापी भगवान् क्रमशः उससे आदरसहित मुस्कराते हुए बोले।

श्रीकृष्णने कहा—हे महाभाग समुद्र! मैं नगर-निर्माण करना चाहता हूँ; अतः उसके लिये तुम मुझे सौ योजन विस्तृत भूमि दो। पीछे वह भूमि मैं तुम्हें अवश्य ही लौटा दूँगा। हे विश्वकर्मा! उस स्थानपर तुम एक ऐसा नगर-निर्माण करो; जो तीनों लोकोंमें दुर्लभ हो, सबके लिये रमणीय हो, स्त्रियोंके मनको हरण करनेवाला हो, भक्तोंके लिये वाञ्छनीय हो, वैकुण्ठके समान परमोत्कृष्ट हो, समस्त स्वर्गोंसे परे और सबके लिये अभीष्ट हो। आकाशचारियोंमें श्रेष्ठ महाभाग गरुड़! जबतक विश्वकर्मा द्वारकापुरीका निर्माण करते हैं, तबतक तुम रात-दिन इनके पास स्थित रहो। चक्रश्रेष्ठ सुदर्शन! तुम दिन-रात मेरे पार्श्वमें वर्तमान रहो। मुने! तब चक्रके अतिरिक्त और सभी लोग 'ॐ—बहुत अच्छा' यों कहकर चले गये। महाभाग! इधर श्रीकृष्णने नगरमें आकर कंसके पिता महाबली एवं सर्वोत्तम उग्रसेनको क्षत्रियों तथा सत्पुरुषोंका भी राजा बना दिया। फिर युक्तिपूर्वक जरासंधको जीतकर कालयवनको

मरवा डाला। इसके बाद नगर-निर्माणका क्रम चालू किया।

श्रीभगवान्‌ने कहा—विश्वकर्मन्! तुम पद्मराग, मरकत, सर्वश्रेष्ठ इन्द्रनील, मनोहर पारिभद्र, पलंक, स्यमन्तक, गन्धक, गालिम, चन्द्रकान्त, सूर्यकान्त, स्फटिककी रची हुई पुत्तलियों, पीली-श्याम-श्वेत और नीली मणियों, दाडिमी-बीजके सदृश पीली गोरोचना, पद्म-बीजके सदृश, नीले कमलके-से रंगवाली, कज्जलके-से आकारवाली, उज्ज्वल, परिष्कृत, श्वेत चम्पकके सदृश कान्तिमती, तपाये हुए स्वर्णकी-सी चमकीली, स्वर्णके मूल्यसे सौगुनी अधिक मूल्यवाली, थोड़ी-थोड़ी लाल, परम सुन्दर, वजनदार, सर्वोत्तम और पूजनीय उत्तम मणियोंद्वारा वास्तु-शास्त्रके विधानानुसार यथायोग्य घटा-बढ़ाकर एक ऐसे मनोवाञ्छित परम मनोहर नगरकी रचना करो, जो सौ योजनके विस्तारवाला हो। जबतक तुम नगरका निर्माण करोगे, तबतक यक्षगण हिमालयसे रात-दिन मणियोंको लाते रहेंगे। कुबेरकी प्रेरणासे आये हुए सात लाख यक्ष, शंकरद्वारा भेजे हुए एक लाख बेताल और एक लाख कूष्माण्ड तथा गिरिराजनन्दिनीद्वारा नियुक्त किये हुए दानव और ब्रह्मराक्षस तुम्हारे सहायक बने रहेंगे। मेरी सोलह हजार एक सौ आठ पत्नियोंके लिये ऐसे दिव्य शिविर तैयार करो, जो खाइयोंसे युक्त तथा ऊँची-ऊँची चहारदीवारियोंसे परिवेष्टित हों। जिनमें प्रत्येकमें बारह कमरे और सिंहद्वार लगे हों, जो चित्र-विचित्र कृत्रिम किवाड़ोंसे युक्त हों; निषिद्ध वृक्षोंसे रहित और प्रसिद्ध वृक्षोंसे सम्पन्न हों और जिनके आँगन शुभ लक्षणयुक्त और चन्द्रवेध हों। इसी प्रकार यदुवंशियों और नौकरोंके लिये भी दिव्य आश्रम बनाओ। भूपाल उग्रसेनका भवन सर्वप्रसिद्ध तथा मेरे पिता वसुदेवजीका आश्रम सर्वतोभद्र होना चाहिये।

तब विश्वकर्मा बोले—जगद्गुरो! वे प्रशस्त वृक्ष कौन-कौन हैं और कौन निषिद्ध हैं तथा शुभ-अशुभ प्रदान करनेवाले कौन हैं? उन सबका परिचय दीजिये। प्रभो! साथ ही यह भी बतलाइये कि किनकी अस्थि पड़नेसे शिविर शुभ और किनकी अस्थिसे अशुभ होता है? शिविरकी किस दिशामें जल मङ्गलकारक और किस दिशामें अमाङ्गलिक होता है? और कौन वृक्ष किस दिशामें कल्याणप्रद होता है? सुरेश्वर! गृहों तथा आँगनोंका विस्तार कितना होना चाहिये? किस दिशामें पुष्पोद्यान मङ्गलप्रद होता है? सुरेश्वर! परकोटों, खाइयों, दरवाजों, गृहों और चहारदीवारियोंका क्या प्रमाण है? प्रभो! शिविर-निर्माणमें किस-किस वृक्षकी लकड़ी प्रशस्त मानी गयी है और किन वृक्षोंके काष्ठ अमङ्गलजनक होते हैं? यह सब मुझे बतलानेकी कृपा कीजिये।

श्रीभगवान्‌ने कहा—देवशिल्पिन्! गृहस्थोंके आश्रममें नारियलका वृक्ष धन प्रदान करनेवाला होता है। वही वृक्ष यदि शिविरके ईशानकोण अथवा पूर्व दिशामें हो तो पुत्रप्रद होता है। वह मनोहर वृक्षराज सर्वत्र मङ्गलका दाता होता है। यदि पूर्व दिशामें आमका वृक्ष हो तो वह मनुष्योंको सम्पत्ति प्रदान करता है और सर्वत्र शुभदायक होता है। बेल, कटहल, जम्बीरी नीबू तथा बेरके वृक्ष पूर्व दिशामें संतानदायक, दक्षिणमें धनदाता तथा सर्वत्र सम्पत्तिप्रद होते हैं। इनसे गृहस्थकी उन्नति होती है। जामुन, अनार, केला तथा आमलाके वृक्ष पूर्वमें बन्धुप्रद तथा दक्षिणमें मित्रकी वृद्धि करनेवाले होते हैं और सर्वत्र शुभदायक होते हैं। सुवाक दक्षिणमें धन-पुत्र-शुभप्रद, पश्चिममें हर्षदायक और ईशानकोणमें तथा सर्वत्र सुखद होता है। भूतलपर चम्पाका वृक्ष शुद्ध तथा सर्वत्र मङ्गलकारक होता है। लौकी, कुम्हड़ा, आयाम्बु, पलाश, खजूर और कर्कटीके वृक्ष शिविरमें मङ्गलप्रद होते हैं। विश्वकर्मन्! बेल और बैंगनके पौधे भी शुभदायक

होते हैं। सारी फलवती लताएँ निश्चय ही सर्वत्र शुभदायिनी होती हैं। शिल्पिन्! इस प्रकार प्रशस्त वृक्षोंका वर्णन कर दिया गया; अब निषिद्धका वर्णन सुनो।

नगर अथवा शिविरमें वन्यवृक्षका रहना निषिद्ध है। शिविरमें वटवृक्षका रहना ठीक नहीं है; क्योंकि उससे सदा चोरका भय लगा रहता है, किंतु नगरोंमें उसका रहना उत्तम है; क्योंकि उसके दर्शनसे पुण्य होता है। नगर, गाँव और शिविरमें सेमलके वृक्षका रहना सर्वथा निषिद्ध है। वह सदा राजाओंको दुःख देता रहता है। हे देवशिल्पी! इमलीका वृक्ष नगरों और गाँवोंमें तो प्रशस्त है; परंतु शिविरमें उसका रहना ठीक नहीं है। वह विद्या-बुद्धिका विनाशक तथा सदा दुःखदायक होता है। उससे निश्चय ही प्रजा और धनकी हानि होती है; अतः विद्वान्‌को उचित है कि यत्नपूर्वक उसका परित्याग कर दे। खजूर और काँटेदार वृक्ष भी शिविरमें नहीं रहने चाहिये; क्योंकि वे विद्या और बुद्धिको नष्ट कर देनेवाले होते हैं; अतः उनसे दूर रहना ही ठीक है। गाँवों और नगरोंमें चना आदि अन्नोंके पेड़ मङ्गलप्रद होते हैं। गाँव, नगर तथा शिविरमें गन्नेका वृक्ष सदा शुभदायक होता है। अशोक, सिरिस और कदम्ब शुभप्रद होते हैं। हल्दी, अदरक, हरीतकी और आमलकी—ये गाँवों तथा नगरोंमें सदा शुभदायिनी तथा कल्याणकारिणी होती हैं।

वास्तुभूमिमें स्थापन करनेवालोंके लिये गजकी अस्थि शुभदायिनी और उच्चैःश्रवाके वंशज घोड़ोंकी हड्डी कल्याणकारिणी होती है। इनके अतिरिक्त अन्य पशुओंकी अस्थि शुभकारक नहीं होती; वह विनाशका कारण होती है। वानरों, मनुष्यों, गदहों, गौओं, कुत्तों, सियारों और बिलावोंकी हड्डी अमङ्गलकारिणी होती है। शिविरके पूर्व, पश्चिम, उत्तर और ईशानकोणमें जलका रहना उत्तम है। इनके अतिरिक्त अन्य दिशाओंमें अशुभ होता है। शिल्पिन्! बुद्धिमान् पुरुषको चाहिये कि जिसकी लंबाई-चौड़ाई समान हो, ऐसा घर न बनावें; क्योंकि चौकोर गृहमें वास करना गृहस्थोंके धनका नाशक होता है। घरकी परिमित लंबाई-चौड़ाईमें पृथक्-पृथक् दोका भाग देनेसे यदि शेष शून्यरहित हो तो शुभ अन्यथा शून्य शेष आनेपर वह घर मनुष्योंके लिये शून्यप्रद होता है। गृहोंकी चौड़ाईमें पश्चिमसे दो हाथ पूर्व और लंबाईमें दक्षिणसे तीन हाथ हटकर घरका तथा परकोटेका द्वार रखना शुभदायक होता है। मध्यभागमें दरवाजा नहीं बनाना चाहिये; क्योंकि वह कुछ कम-बेशमें ही रखनेपर शुभकारक होता है। चौकोर घर चन्द्रवेध होनेपर मङ्गलप्रद होता है; परंतु मङ्गलप्रद गृह भी सूर्यवेध होनेपर अमङ्गलकारक हो जाता है। उसी प्रकार सूर्यवेध आँगन भी अमङ्गलदायक होता है। घरके भीतर लगायी हुई तुलसी मनुष्योंके लिये कल्याणकारिणी, धन-पुत्र प्रदान करनेवाली, पुण्यदायिनी तथा हरिभक्ति देनेवाली होती है। प्रातःकाल तुलसीका दर्शन करनेसे सुवर्ण-दानका फल प्राप्त होता है। मकानके पूर्व और दक्षिणभागमें मालती, जूही, कुन्द, माधवी, केतकी, नागेश्वर, मल्लिका (मोतिया), काञ्चन (श्याम धतूर), मौलसिरी और शुभदायिनी अपराजिता (विष्णुकान्ता)—इन पुष्पोंका उद्यान शुभद होता है; इसमें तनिक भी संशय नहीं है। गृहस्थको सोलह हाथसे ऊँचा गृह नहीं बनवाना चाहिये। इसी तरह बीस हाथसे ऊँचा परकोटा भी शुभप्रद नहीं होता। बुद्धिमान् पुरुषको घरके समीप तथा गाँवके बीचमें बढ़ई, तेली और सोनारको नहीं बसाना चाहिये; किंतु मकानके पास-पड़ोसमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, सत्‌शूद्र, ज्योतिषी, भाट, वैद्य और पुष्पकार (माली)-को अवश्य रहने देना चाहिये। शिविरके चारों ओर

सौ हाथ लंबी और दस हाथ गहरी खाई प्रशस्त मानी जाती है। उस खाईका दरवाजा भी ऐसा संकेतयुक्त होना चाहिये, जो शत्रुके लिये अगम्य हो; परंतु मित्र सुखपूर्वक आ-जा सकें। भवन-निर्माणमें सेमल, इमली, हिंताल (एक प्रकारका जंगली खजूर), नीम, सिन्धुवार (निर्गुण्डी), गूलर, धतूरा, बरगद और रेंड—इनके अतिरिक्त अन्य वृक्षोंकी ही लकड़ी काममें लानी चाहिये। वस्तुतस्तु बुद्धिमान्‌को लकड़ी, वज्रहस्त तथा शिला आदिका उपयोग न करना ही उचित है; क्योंकि ये स्त्री, पुत्र और धनके नाशक होते हैं—ऐसा कमलजन्मा ब्रह्माका कथन है। वत्स! यह सब मैंने लोक-शिक्षाके लिये कहा है। अब तुम सुखपूर्वक जाओ और बिना काष्ठके ही पुरीका निर्माण करो; क्योंकि उसके लिये यही शुभ मुहूर्त है।

तब विश्वकर्मा गरुड़के साथ श्रीहरिको नमस्कार करके वहाँसे चल दिये और समुद्र-तटपर मनोहर वटवृक्षके नीचे आकर उन्होंने गरुड़के साथ वहाँ रात्रिमें शयन किया। मुने! स्वप्नमें गरुड़को वह रमणीय द्वारकापुरी दिखायी पड़ी। परमात्मा श्रीकृष्णने विश्वकर्मासे जो कुछ कहा था, वे सारे-के-सारे लक्षण उन्हें उस नगरमें दृष्टिगोचर हुए। स्वप्नमें वे सभी कारीगर विश्वकर्माकी और दूसरे बलवान् गरुड़ पक्षी गरुड़को हँसी उड़ा रहे थे। जागनेपर उस पुरीको देखकर गरुड़ और विश्वकर्मा लज्जित हो गये। वह द्वारकापुरी अत्यन्त रमणीय थी और सौ योजनमें उसका विस्तार था। वह ब्रह्मा आदि देवताओंकी पुरियोंको पराभूत करके सुशोभित हो रही थी; उसमें रत्नोंकी कारीगरी की गयी थी, जिसके कारण उसके तेजसे सूर्य ढक गये थे।

श्रीनारायणजी कहते हैं—नारद! इसी समय ब्रह्मा, हर, पार्वती, अनन्त, धर्म, सूर्य, अग्नि, कुबेर, वरुण, वायु, यम, महेन्द्र, चन्द्र, रुद्र, आदित्य, वसु, दैत्य, गन्धर्व, किंनर आदि सब द्वारकापुरी देखने आये। आकाश दर्शनार्थियोंके विमानोंसे छा गया। सबने मनोहर रत्नमयी शोभायुक्त दिव्य द्वारकाको देखा। वहाँ भगवान्‌के स्मरण करते ही वसुदेव, देवकी, उग्रसेन, पाण्डवगण, नन्द, यशोदा, गोप-गोपी, विभिन्न देशोंके राजा, संन्यासी, यति, अवधूत और ब्रह्मचारी आ गये। पञ्चवर्षीय दिगम्बर चारों सनकादि मुनि, दुर्वासा, कश्यप, वाल्मीकि, गौतम, बृहस्पति, शुक्र, भरद्वाज, अङ्गिरा, प्रचेता, पुलस्त्य, अगस्त्य, पुलह, क्रतु, भृगु, मरीचि, शतानन्द, ऋष्यशृंग, विभाण्डक, पाणिनि, कात्यायन, याज्ञवल्क्य, शुक, पराशर, च्यवन, गर्ग, सौभरि, गालव, लोमश, मार्कण्डेय, वामदेव, जैगीषव्य, सांदीपनि, वोढु, पञ्चशिख, मैं (नारायण), नर, विश्वामित्र, जरत्कारु, आस्तीक, परशुराम, वात्स्य, संवर्त, उतथ्य, जैमिनि, पैल, सुमन्त, व्यास, कपिल, शृंगी, उपमन्यु, गौरमुख, कच, द्रोण, अश्वत्थामा, कृपाचार्य आदि अपने असंख्य शिष्योंसहित पधारे; तथा भीष्म, कर्ण, शकुनि, भ्राताओंसहित दुर्योधन आदि सब आये। उग्रसेन आदिने उन सबका स्वागत-सत्कार किया।

देवताओं और मुनियोंका स्वागत-सत्कार करनेपर उन लोगोंने उग्रसेन आदिको विविध उपहार दिये। तदनन्तर ब्राह्मणोंको मणि, रत्न और वस्त्र आदि दान किये गये। उग्रसेनका राज्याभिषेक हुआ और सब लोग परमानन्दित होकर अपने-अपने घर लौटे। (अध्याय १०३-१०४)

भीष्मकद्वारा रुक्मिणीके विवाहका प्रस्ताव, शतानन्दका उन्हें श्रीकृष्णके साथ विवाह करनेकी सम्मति देना, रुक्मीद्वारा उसका विरोध और शिशुपालके साथ विवाह करनेका अनुरोध, भीष्मकका श्रीकृष्ण तथा अन्यान्य राजाओंको निमन्त्रित करना

श्रीनारायणजी कहते हैं—नारद! विदर्भ देशमें भीष्मक नामके एक राजा राज्य करते थे, जो नारायणके अंशसे उत्पन्न हुए थे। वे विदर्भदेशीय नरेशोंके सम्राट्, महान् बल-पराक्रमसे सम्पन्न, पुण्यात्मा, सत्यवादी, समस्त सम्पत्तियोंके दाता, धर्मिष्ठ, अत्यन्त महिमाशाली, सर्वश्रेष्ठ और समादृत थे। उनके एक कन्या थी, जिसका नाम रुक्मिणी था। वह महालक्ष्मीके अंशसे उत्पन्न थी तथा नारियोंमें श्रेष्ठ, अत्यन्त सौन्दर्यशालिनी, मनोहारिणी और सुन्दरी स्त्रियोंमें पूजनीया थी। उसमें नयी जवानीका उमंग था। वह रत्ननिर्मित आभूषणोंसे विभूषित थी। उसके शरीरकी कान्ति तपाये हुए सुवर्णकी भाँति उद्दीप्त थी। वह अपने तेजसे प्रकाशित हो रही थी तथा शुद्धसत्त्वस्वरूपा, सत्यशीला, पतिव्रता, शान्त, दमपरायणा और अनन्त गुणोंकी भण्डार थी। वह शरत्पूर्णिमाके चन्द्रमाके सदृश शोभाशालिनी थी। उसके नेत्र शरत्कालीन कमलके-से थे और उसका मुख लज्जासे अवनत रहता था। अपनी उस सुन्दरी युवती कन्याको सहसा विवाहके योग्य देखकर उत्तम व्रतका पालन करनेवाले, धर्मस्वरूप एवं धर्मात्मा राजा भीष्मक चिन्तित हो उठे। तब वे अपने पुत्रों, ब्राह्मणों तथा पुरोहितोंसे विचार-विमर्श करने लगे।

भीष्मक बोले—सभासदो! मेरी यह सुन्दरी कन्या बढ़कर विवाहके योग्य हो गयी है; अतः मैं इसके लिये मुनिपुत्र, देवपुत्र अथवा राजपुत्र—इनमेंसे किसी अभीष्ट उत्तम वरका वरण करना चाहता हूँ। अतः आप लोग किसी ऐसे योग्य वरकी तलाश करो, जो नवयुवक, धर्मात्मा, सत्यसंध, नारायणपरायण, वेद-वेदाङ्गका विशेषज्ञ, पण्डित, सुन्दर, शुभाचारी, शान्त, जितेन्द्रिय, क्षमाशील, गुणी, दीर्घायु, महान् कुलमें उत्पन्न और सर्वत्र प्रतिष्ठित हो।

राजाधिराज भीष्मककी बात सुनकर महर्षि गौतमके पुत्र शतानन्द, जो वेद-वेदाङ्गके पारगामी विद्वान्, यथार्थज्ञानी, प्रवचनकुशल, विद्वान्, धर्मात्मा, कुलपुरोहित, भूतलपर सम्पूर्ण तत्त्वोंके ज्ञाता और समस्त कर्मोंमें निष्णात थे, राजासे बोले।

शतानन्दने कहा—राजेन्द्र! तुम तो स्वयं ही धर्मके ज्ञाता तथा धर्मशास्त्रमें निपुण हो; तथापि मैं वेदोक्त प्राचीन इतिहासका वर्णन करता हूँ, सुनो। जो परिपूर्णतम परमेश्वर ब्रह्माके भी विधाता हैं; ब्रह्मा, शिव और शेषद्वारा वन्दित, परमज्योतिःस्वरूप, भक्तानुग्रहमूर्ति, समस्त प्राणियोंके परमात्मा, प्रकृतिसे परे, निर्लिप्त, इच्छारहित और

सबके कर्मोंके साक्षी हैं; वे स्वयं श्रीमान् नारायण पृथ्वीका भार उतारनेके लिये भूतलपर वसुदेवनन्दनके रूपमें अवतीर्ण हुए हैं। राजेन्द्र! उन परिपूर्णतमको कन्या-दान करके तुम अपनी सौ पीढ़ियोंके साथ गोलोकमें जाओगे। अतः उन्हें कन्या देकर परलोकमें सारूप्य-मुक्ति प्राप्त कर लो और इस लोकमें सर्वपूज्य तथा विश्वके गुरुके गुरु हो जाओ। विभो! सर्वस्व दक्षिणामें देकर महालक्ष्मी-स्वरूपा रुक्मिणीको उन्हें समर्पित कर दो और अपने जन्म-मरणके चक्करको नष्ट कर डालो। राजन्! ब्रह्माने यही सम्बन्ध लिख रखा है और यह सर्वसम्मत भी है; अतः शीघ्र ही द्वारकापुरीमें श्रीकृष्णके पास ब्राह्मण भेजो और जल्दी-से-जल्दी जो सभीको सम्मत हो, ऐसा शुभ मुहूर्त निश्चित करके परमात्मा श्रीकृष्णको—जो भक्तानुग्रह-मूर्ति, ध्यानानुरोधके कारण, नित्यविग्रहधारी और सर्वोत्तम हैं—यहाँ बुलाओ। नरेश! इस प्रकार उनके दर्शन करके अपना आवागमन मिटा डालो। महाराज! जिन्हें चारों वेद, संत, देवगण, सिद्धेन्द्र, मुनीन्द्र तथा ब्रह्मा आदि देवता नहीं जान पाते; ध्यानपूत योगीलोग जिनका ध्यान करते हैं; परंतु साक्षात्कार नहीं कर पाते; चारों वेद, छहों शास्त्र और सरस्वती जिनका गुणगान करनेमें जड हो जाती है; हजार मुखवाले शेषनाग, पाँच मुखधारी महेश्वर, चार मुखवाले जगत्स्रष्टा ब्रह्मा, कुमार कार्तिकेय, ऋषि, मुनि तथा परम वैष्णव भक्तगण जिनका स्तवन करके पार नहीं पाते; जो योगियोंके लिये ध्यानद्वारा साध्य हैं; उन श्रीकृष्णका गुण मैं बालक होकर किस प्रकार वर्णन कर सकता हूँ?

शतानन्दजीका वचन सुनकर राजाका मुख प्रफुल्लित हो उठा। उन्होंने वेगपूर्वक उठकर शतानन्दजीका आलिङ्गन किया। उस समय राजाके मुखपर प्रसन्नता खेल रही थी; उन्होंने शतानन्दजीको नाना प्रकारके रत्न, सुवर्ण, वस्त्र, रत्ननिर्मित आभूषण, गजराज, श्रेष्ठ अश्व, मणिनिर्मित रथ, रमणीय रत्नसिंहासन, बहुत-सा धन, सम्पूर्ण अन्नोंसे भरी हुई ऐसी उत्तम भूमि, जो बिना जोते अन्न उपजानेवाली तथा सदा वृष्टि करनेवाली थी और सबके द्वारा प्रशंसित गाँव दिये। इसी बीच राजकुमार रुक्मि—जो चञ्चल स्वभाववाला तथा अधर्मी था—कुपित हो उठा। क्रोधावेशमें उसके मुख और नेत्र लाल हो गये तथा उसका शरीर काँपने लगा। वह सभामें उठकर सभी सभासदोंके समक्ष खड़ा हो गया और पिता भीष्मक तथा विप्रवर शतानन्दजीसे बोला।

रुक्मिने कहा—राजेन्द्र! इन भिक्षुकों, लोभियों और क्रोधियोंकी बात छोड़िये तथा मेरा हितकारक, तथ्य एवं प्रशंसनीय वचन सुनिये। महाबाहो! कृष्णने भयवश युक्तिका आश्रय लेकर राजेन्द्र मुचुकुन्दके सामने कालयवनका वध करके उसका सारा धन हड़प लिया है। उसी कालयवनका धन पाकर ही कृष्ण द्वारकामें धनी हो गये हैं। उन्होंने एक जरासंधके भयसे डरकर समुद्रके भीतर घर बनाया है। परंतु ऐसे सैकड़ों जरासंधोंको मैं अकेले ही क्षणभरमें खेल-ही-खेलमें मार सकता हूँ; फिर किसी अन्य राजाकी तो बात ही क्या है? भीष्मक! मैं दुर्वासाका शिष्य हूँ और रणशास्त्रमें निपुण हूँ। अपने उसी ज्ञानके बलसे मैं निश्चय ही विश्वका संहार करनेमें समर्थ हूँ। मेरे समान बलवान् या तो परशुरामजी हैं या शिशुपाल ही मेरी समता कर सकता है। वह शिशुपाल मेरा सखा, बलवान्, शूरवीर और स्वर्गको भी जीत लेनेकी शक्ति रखता है। मैं भी क्षणभरमें गणसहित महेन्द्रको जीतनेमें समर्थ हूँ। नरेश्वर! दुर्बल एवं योगी जरासंधको युद्धमें जीतकर श्रीकृष्णको अहंकार हो गया है। वे अपने मन अपनेको वीर मानने लगे हैं; परंतु यदि वे विवाह करनेकी इच्छासे मेरे नगरमें आयेंगे तो मैं क्षणभरमें निश्चय ही उन्हें यमलोक पहुँचा दूँगा।

जो वैश्यजातीय नन्दका पुत्र, गौओंका चरवाहा, गोपाङ्गनाओंका लम्पट और ग्वालोंकी जूँठन खानेवाला है, उसे आप कन्या देना स्वीकार करते हैं। यह महान् आश्चर्यकी बात है! राजेन्द्र! इस बकवादीके वचनसे आपकी बुद्धि मारी गयी है; इसी कारण इस भिक्षुक ब्राह्मणके कहनेसे आप देवयोग्या रुक्मिणीको श्रीकृष्णके हाथों सौंपना चाहते हैं। अरे! वह तो न राजपुत्र है, न शूरवीर है, न कुलीन है, न पवित्र आचरणवाला है, न दाता है, न धनी है, न योग्य है और न जितेन्द्रिय ही है। इसलिये भूपाल! आप शिशुपालको कन्या दीजिये; क्योंकि वह सुपूत एवं राजाधिराजका पुत्र है तथा अपने बलसे रुद्रको भी संतुष्ट कर चुका है। राजन्! अब शीघ्र ही पत्र भेजकर विभिन्न देशोंमें उत्पन्न हुए नरेशों, भाई-बन्धुओं तथा मुनिवरोंको निमन्त्रित कीजिये।

तदनन्तर रुक्मिकी बात सुनकर पुरोहितसहित राजेन्द्र भीष्मकने एकान्त स्थानमें मन्त्रीके साथ पूर्णरूपसे सलाह की। तत्पश्चात् जो सबको अभीष्ट था, ऐसा शुभ लग्न निश्चित करके एक योग्य एवं अन्तरङ्ग ब्राह्मणको द्वारका भेजनेकी व्यवस्था की। इधर राजा तुरंत ही हर्षपूर्वक सामग्री जुटानेमें लग गये और पुत्रके कहनेसे उन्होंने चारों ओर निमन्त्रण-पत्र भेज दिये। उधर उस ब्राह्मणने सुधर्मा-सभामें, जो राजाओं तथा देवताओंसे परिवेष्टित थी; पहुँचकर राजा उग्रसेनको वह मङ्गल-पत्रिका दी। उस परम माङ्गलिक पत्रको सुनकर राजा उग्रसेनका मुख प्रफुल्लित हो उठा। उन्होंने हर्षमें भरकर ब्राह्मणोंको हजारों स्वर्णमुद्राएँ दान कीं और द्वारकामें चारों ओर दुन्दुभिका शब्द कराकर घोषणा करा दी। श्रीकृष्णकी उस बारातमें बड़े-बड़े देवता, मुनि, राजागण, यादवगण, कौरव, पाण्डव, विद्वान् ब्राह्मण, माली, शिल्पी, गायक, गन्धर्व आदि सम्मिलित हुए। उस समय उपबर्हण नामक गन्धर्वके रूपमें तुम नारद भी बारातके साथ थे। (अध्याय १०५)

रेवती और बलरामके विवाहका वर्णन तथा रुक्मी, शाल्व, शिशुपाल और दन्तवक्रका श्रीकृष्णको कटुवचन कहना

श्रीनारायण कहते हैं—नारद! इसी समय महाबली राजा ककुद्मी अपनी कन्याके लिये वरकी तलाशमें ब्रह्मलोकसे भूतलपर आये। उनकी कन्याका नाम रेवती था। वह निरन्तर स्थिर यौवनवाली, अमूल्य रत्नोंसे विभूषित और तीनों लोकोंमें दुर्लभ थी। उसकी आयुके सत्ताईस युग बीत चुके थे। राजाने कौतुकवश अपनी उस कन्याको महाबली बलदेवको ब्याह दिया। इस प्रकार मुनियों तथा देवेन्द्रोंकी सभामें विधानपूर्वक कन्यादान करके राजाने लाखों-लाखों हाथी, घोड़े, रथ, रत्नाभूषण, मणि-रत्न, करोड़ों स्वर्णमुद्राएँ जामाताको दहेजमें दीं तथा सुन्दर दिव्य वस्त्रादि दिये। यों बलशाली बलदेवको कन्या देकर राजेन्द्र ककुद्मी अमूल्य रत्नोंके सारसे निर्मित रथद्वारा कुण्डिन-नगरको गये। तदनन्तर उस वैवाहिक मङ्गल-कार्यके समाप्त होनेपर देवकी, रोहिणी, नन्दपत्नी यशोदा, अदिति, दिति और शान्तिने जय-जयकार करके रेवतीको, जो नारियोंमें श्रेष्ठ तथा लक्ष्मीकी कलास्वरूपा थीं, महलमें प्रवेश कराया। तत्पश्चात् वसुदेवजीकी प्रियतमा पत्नी देवकीने हर्षपूर्वक सारा मङ्गल-कार्य सम्पन्न कराया और ब्राह्मणोंको भोजन कराकर उन्हें धन दान दिया।

तदनन्तर देवताओं और मुनियोंका समुदाय तथा देश-देशान्तरके नरेश आनन्दमग्न हो अपनी-अपनी सेनाओंके साथ सहसा कुण्डिन-नगरमें आ

पहुँचे। उन सब लोगोंने उस परम मनोहर नगरका अवलोकन किया। बारातियोंने उस नगरके बाहरी दरवाजेको देखा; चार महारथी सैनिकोंके साथ उसकी रक्षा कर रहे थे। उनके नाम थे—रुक्मी, शिशुपाल, महाबली दन्तवक्र और मायावियोंमें श्रेष्ठ एवं युद्ध-शास्त्रमें निपुण शाल्व। उस समय राजकुमार रुक्मि, जो युद्धके लिये उद्यत हो नाना शस्त्रास्त्रोंसे सुसज्जित रथपर सवार था, श्रीकृष्णकी सेनाका अवलोकन करके कुपित हो उठा और

ऐसे निष्ठुर वचन कहने लगा जो कर्णकटु, अत्यन्त दुष्कर तथा मुनीन्द्रों, देवगणों और मुनिवरोंके लिये उपहासास्पद थे।

रुक्मिने कहा—अहो! कालकृत कर्म और दैवको कौन हटा सकता है? भला, मैं देवेन्द्रोंकी सभामें क्या कहूँगा; क्योंकि जो नन्दके पशुओंका रखवाला, गोपियोंका साक्षात् लम्पट और ग्वालोंकी जूँठन खानेवाला है तथा जिसकी जाति, खान-पान और उत्पत्तिका कोई निर्णय ही नहीं है; यह भी पता नहीं कि क्या वह राजकुमार है अथवा किसी मुनिका पुत्र है; जिसके पिता वसुदेव क्षत्रिय हैं, परंतु जिसका भरण-पोषण वैश्यके घर हुआ है; जिस दुष्टने अभी हालमें ही मथुरामें धर्मात्मा राजा कंसको मार डाला है, अतः उस राजेन्द्रके वधसे जिसे निश्चय ही ब्रह्महत्या लगी है; वह कृष्ण देवताओं और मुनियोंके साथ देवयोग्य मनोहारिणी कन्या रुक्मिणीको ग्रहण करनेके लिये आ रहा है। फिर शाल्व, शिशुपाल और दन्तवक्रने भी कुवाक्य कहे। इन सबके दुर्वचनोंको सुनकर बारातमें आये हुए देवता, मुनि, राजागण और बलदेवजीसहित यादवोंको क्रोध आ गया।

(अध्याय १०६)

रुक्मी आदिका यादवोंके साथ युद्ध, शाल्वका वध, रुक्मीकी सेनाका पलायन, बारातका पुरीमें प्रवेश और स्वागत-सत्कार, शुभलग्नमें श्रीकृष्णका बारातियों तथा देवोंके साथ राजाके आँगनमें जाना, भीष्मकद्वारा सबका सत्कार करके श्रीकृष्णका पूजन

श्रीनारायण कहते हैं—नारद! तदनन्तर बलदेवजीने हलके द्वारा रुक्मिका रथ भङ्ग कर दिया। फिर तो घोर युद्ध आरम्भ हो गया। शाल्व मारा गया। बलदेवजी शिशुपालको मार रहे थे; परंतु उसे श्रीकृष्णके द्वारा मारे जानेवाला समझकर शिवजीने बलदेवजीको रोक दिया। बलदेवजीके विक्रमको देखकर सब इधर-उधर भाग गये।

तब महामुनि शतानन्दजीने आकर अभ्यर्थना की। बारातने पुरीमें प्रवेश किया। बड़ा भारी स्वागत-सत्कार किया गया। उस समयकी वर-रूपमें सुसज्जित श्रीकृष्णकी शोभा अवर्णनीय थी। उनके शरीरकी कान्ति नूतन जलधरके समान

श्याम थी, वे पीताम्बरसे सुशोभित थे, उनके सर्वाङ्गमें चन्दनका अनुलेप किया गया था, वे वनमालासे विभूषित तथा रत्नोंके बाजूबंद, कङ्कण और हिलते हुए हारसे प्रकाशित हो रहे थे, उनके कपोल रत्ननिर्मित दोनों कुण्डलोंसे उद्भासित हो रहे थे, कटिभागमें अमूल्य रत्नोंके सारभागसे बनी हुई करधनीकी मधुर झंकार हो रही थी, जिससे उनकी शोभा और बढ़ गयी थी, उनके एक हाथमें मुरली सुशोभित थी, वे मुस्कराते हुए रत्नजटित दर्पणकी ओर देख रहे थे, सात गोप-पार्षद श्वेत चँवरोंद्वारा उनकी सेवा कर रहे थे, उनका शरीर नवयौवनके उमंगसे सम्पन्न था, नेत्र शरत्कालीन कमलके-से सुन्दर थे, मुख शरत्पूर्णिमाके चन्द्रमाकी निन्दा कर रहा था, वे भक्तोंपर अनुग्रह करनेके लिये कातर हो रहे थे और उनका सौन्दर्य करोड़ों कामदेवोंका मान हर रहा था। वे सत्य, नित्य, सनातन, तीर्थोंको पावन करनेवाले, पवित्रकीर्ति तथा ब्रह्मा, शिव और शेषनागद्वारा वन्दित हैं। उनका रूप परम आह्लादजनक था तथा उनकी प्रभा करोड़ों चन्द्रमाओंके सदृश थी। वे ध्यानद्वारा असाध्य, दुराराध्य, परमोत्कृष्ट तथा प्रकृतिसे परे हैं। वे दूर्वासहित रेशमी सूत्र, अमूल्य रत्नजटित दर्पण और कंघी करके ठीक की हुई कदलीकी खिली हुई मञ्जरी धारण किये हुए थे। उनकी शिखा मालतीकी मालाओंसे विभूषित त्रिविक्रमके-से आकारवाली थी। उनका मस्तक नारियोंद्वारा दिये गये पुष्पमय मुकुटसे उद्दीप्त हो रहा था। ऐसे ऐश्वर्यशाली वरको देखकर युवतियाँ प्रेमवश मूर्च्छित हो गयीं और कहने लगीं कि 'रुक्मिणीका जीवन धन्य एवं परम श्लाघनीय है।' जब महारानी भीष्मक-पत्नीकी दृष्टि अपने जामातापर पड़ी तब वे परम प्रसन्न हुईं। उनके मुख और नेत्र प्रसन्नतासे खिल उठे। वे निर्निमेष दृष्टिसे उनकी ओर निहारने लगीं। राजा भीष्मक भी अपने पुरोहित तथा मन्त्रियोंसहित परम हर्षित हुए। उन्होंने वहाँ आकर देवताओं, ब्राह्मणों तथा समस्त प्राणियोंको प्रणाम किया और उन सबको अमृतोपम भक्ष्यसामग्रियोंसे परिपूर्ण यथायोग्य वासस्थान दिया। वहाँ रात-दिन '**दीयताम्, दीयताम्**—देते रहो, देते जाओ'—यही शब्द गूँज रहे थे।

उधर वसुदेवजीने देवताओं तथा भाई-बन्धुओंके साथ सुखपूर्वक वह रात व्यतीत की। प्रातःकाल उठकर उन्होंने शौच आदि प्रातःकृत्य समाप्त किया। फिर स्नान करके शुद्ध धुली हुई धोती और चद्दर धारण करके संध्या-वन्दन आदि नित्यकर्म सम्पन्न किया। तत्पश्चात् वेदमन्त्रद्वारा श्रीहरिका शुभ अधिवासन (मूर्ति-प्रतिष्ठा) किया। फिर साक्षात् सम्पूर्ण देवताओं तथा सारी मातृकाओंका भलीभाँति पूजन और वसुधारा प्रदान करके वृद्धिश्राद्ध आदि मङ्गलकृत्य किये और देवताओं, ब्राह्मणों तथा जाति-भाइयोंको भोजन कराया, बाजा बजवाया, मङ्गल-कार्य कराये और अप्रतिम सौन्दर्यशाली वरका उत्तम शृङ्गार करवाया। फिर वरकी सवारीको अत्यन्त सुन्दर ढंगसे सजवाया।

इसी प्रकार राजा भीष्मकने भी पुरोहितोंके साथ वेद-मन्त्रोच्चारणपूर्वक सारे वैवाहिक मङ्गल-कार्य सम्पन्न किये। हर्षमग्न हो भट्टों, ब्राह्मणों और भिक्षुकोंको भी मणि, रत्न, धन, मोती, माणिक्य, हीरे, भोजन-सामग्री, वस्त्र और अनुपम उपहार दिये, बाजा बजवाया, मङ्गल-कार्य कराया और रानियों तथा मुनि-पत्नियोंद्वारा यथोचित विधि-विधानके साथ रुक्मिणीको मनोहर सुन्दर साज-सज्जासे विभूषित कराया। तदनन्तर जब परमोदय माहेन्द्र नामक शुभ मुहूर्त, जो लग्नाधिपतिसे संयुक्त, शुद्ध शुभ ग्रहोंसे दृष्ट तथा असद् ग्रहोंकी दृष्टिसे रहित था। ऐसा विवाहोचित लग्न आया जिसमें नक्षत्र और क्षण शुभ थे, चन्द्र-बल और तारा-बल विशुद्ध था तथा शलाका आदि वेधदोष नहीं था। ऐसे परिणाममें सुखदायक

तथा वर-वधूके लिये कल्याणकारी समयके आनेपर श्रीहरि महाराज भीष्मकके प्राङ्गणमें पधारे। उस समय उनके साथ देवता, मुनि, ब्राह्मण, पुरोहित, जाति-भाई, बन्धु-बान्धव, पिता, माता, नरेशगण, ग्वाले, मनोहर वेश-भूषासे सुसज्जित समवयस्क पार्षद, भट्ट और ज्योतिः-शास्त्रविशारद गणक भी थे। उस स्थानकी मङ्गलमयता, माङ्गलिक वस्तुओंसे सुशोभित मनोहर विचित्र शिल्पकलाके द्वारा निर्मित सभाको देखकर सब मुग्ध हो गये। तब ब्रह्मा आदि देवता, राजेन्द्र, दानवेन्द्र, सनकादि मुनि और श्रेष्ठ पार्षदोंके साथ भगवान् श्रीकृष्ण हर्षपूर्वक शीघ्र ही रथसे उतरकर आँगनमें खड़े हो गये। उन देवों, मुनीन्द्रों तथा नरेशोंको आये हुए देखकर राजा भीष्मक उतावलीके साथ सहसा उठ खड़े हुए और सिर झुकाकर उन सबकी वन्दना की; फिर उन्होंने आदरपूर्वक क्रमशः पृथक्-पृथक् सबका भलीभाँति पूजन करके उन्हें परम रमणीय रत्नसिंहासनोंपर बैठाया। उस समय राजाके नेत्रोंमें प्रेमके आँसू छलक आये थे। वे अञ्जलि बाँधकर भक्तिपूर्वक उन सबकी तथा वसुदेव और वसुदेवनन्दन श्रीकृष्णकी स्तुति करते हुए बोले।

भीष्मकने कहा—प्रभो! आज मेरा जन्म सफल, जीवन सुजीवन और करोड़ों जन्मोंके कर्मोंका मूलोच्छेद हो गया; क्योंकि जो लोकोंके विधाता, सम्पूर्ण सम्पत्तियोंके प्रदाता और तपस्याओंके फलदाता हैं; स्वप्नमें भी जिनके चरणकमलका दर्शन होना दुर्लभ है; वे सृष्टिकर्ता स्वयं ब्रह्मा मेरे आँगनमें विराजमान हैं। योगीन्द्र, सिद्धेन्द्र, सुरेन्द्र और मुनीन्द्र ध्यानमें भी जिनका दर्शन नहीं कर पाते, वे देवाधिदेव शंकर मेरे आँगनमें पधारे हैं, जो कालके काल, मृत्युकी मृत्यु, मृत्युञ्जय और सर्वेश्वर हैं; वे भगवान् विष्णु मनुष्योंके दृष्टिगोचर हुए हैं। जिनके हजारों फणोंके मध्य एक फणपर सारा चराचर विश्व स्थित है और सम्पूर्ण वेदोंमें जिनकी महिमाका अन्त नहीं है; वे ये भगवान् अनन्त मेरे आँगनमें वर्तमान हैं। जो सम्पूर्ण कामनाओंको पूर्ण करनेवाले हैं, सर्वप्रथम जिनकी पूजा होती है और जो देवगणोंमें श्रेष्ठ हैं; वे गणेश मेरे आँगनमें उपस्थित हैं। जो मुनियों और वैष्णवोंमें सर्वश्रेष्ठ तथा ज्ञानियोंके गुरु हैं; वे भगवान् सनत्कुमार प्रत्यक्ष-रूपसे मेरे आँगनमें विद्यमान हैं। ब्रह्माके जितने पुत्र, पौत्र, प्रपौत्र और वंशज हैं; वे सभी ब्रह्मतेजसे प्रज्वलित होते हुए आज मेरे घर अतिथि हुए हैं। अहो! मेरा यह वासस्थान कल्पान्तपर्यन्त तीर्थतुल्य हो गया। जिनके चरणोदकसे तीर्थ पावन हो जाते हैं, उन्हीं चरणोंके स्पर्शसे आज मेरा गृह विशुद्ध हो गया है, क्योंकि भूतलपर जितने तीर्थ हैं, वे सभी सागरमें हैं और जितने सागरमें तीर्थ हैं, वे सभी ब्राह्मणके चरणोंमें वास करते हैं। जो प्रभु प्रकृतिसे परे हैं; ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि देवोंके लिये ध्यानद्वारा असाध्य हैं; योगियोंके लिये भी दुराराध्य, निर्गुण, निराकार तथा भक्तानुग्रहमूर्ति हैं; ब्रह्मा, शिव और शेष आदि देवगण जिनके चरणकमलका ध्यान करते हैं; जो कुबेर, गणेश और सूर्यके लिये भी दुर्लभ हैं; वे ही भगवान् साक्षात्-रूपसे मेरे घर पधारकर मनुष्योंके नयन-गोचर हुए हैं। यों कहकर भीष्मक स्वयं श्रीकृष्णको सामने लाकर सामवेदोक्त स्तोत्रद्वारा उन परमेश्वरकी स्तुति करने लगे।

भीष्मक बोले—भगवन्! आप समस्त प्राणियोंके अन्तरात्मा, सबके साक्षी, निर्लिप्त, कर्मियोंके कर्मों तथा कारणोंके कारण हैं। कोई-कोई आपका एकमात्र सनातन ज्योतिरूप बतलाते हैं। कोई, जीव जिनका प्रतिबिम्ब है, उन परमात्माका स्वरूप कहते हैं। कुछ भ्रान्तबुद्धि पुरुष आपको प्राकृतिक सगुण जीव उद्घोषित करते हैं। कुछ सूक्ष्मबुद्धिवाले ज्ञानी आपको नित्य

शरीरधारी बतलाते हैं। आप ज्योतिके मध्य सनातन अविनाशी देहरूप हैं; क्योंकि साकार ईश्वरके बिना भला यह तेज कहाँसे उत्पन्न हो सकता है?

नारद! यों स्तुति करके राजा भीष्मकने विष्णुका स्मरण करते हुए हर्षपूर्वक श्रीकृष्णके पद्माद्वारा समर्चित चरणकमलमें पाद्य निवेदित किया। फिर दूर्वा और जलसमन्वित अर्घ्य प्रदान करके मधुपर्क और गौ समर्पित की तथा उनके सारे शरीरमें सुगन्धित चन्दन लगाया। उस शुभ कर्ममें महेन्द्रने जो पारिजात-पुष्पोंकी माला दहेजरूपमें प्रदान की थी, उसे राजाने अपने जामाताके गलेमें डाल दिया। कुबेरने जो अमूल्य रत्नाभरण दिया था, उसके द्वारा राजाने भक्तिपूर्वक श्रीकृष्णका वरण किया। पूर्वकालमें अग्निद्वारा जो अग्निशुद्ध युग्म वस्त्र दिये गये थे, उनको भीष्मकने परिपूर्णतम श्रीकृष्णको समर्पित कर दिया। विश्वकर्माने जो चमकीला रत्नमुकुट दिया था, उसे राजाने परमात्मा श्रीकृष्णके मस्तकपर रख दिया। इसके बाद रत्ननिर्मित सिंहासन, नाना प्रकारके पुष्प, धूप, रत्नप्रदीप तथा अत्यन्त मनोहर नैवेद्य प्रदान किये। पुनः सात तीर्थोंके जलसे आचमन कराया। फिर कर्पूर आदिसे सुवासित उत्तम रमणीय पानबीड़ा, मनोहर रतिकरी शय्या और पीनेके लिये सुवासित जल दिया। इस प्रकार वरण करके राजाने उस पूजनको सम्पन्न किया और अञ्जलिको सम्पुटित करके श्रीकृष्णको पुष्पाञ्जलि समर्पित की। (अध्याय १०७)

रुक्मिणी और श्रीकृष्णका विवाह, बारातकी बिदाई, भीष्मकद्वारा दहेज-दान और द्वारकामें मङ्गलोत्सव

श्रीनारायण कहते हैं—नारद! इसी समय महालक्ष्मी-स्वरूपा रुक्मिणीदेवी मुनियों और देवताओंके साथ सभामें आयीं और रत्नसिंहासनपर विराजमान हुईं। वे रत्नाभरणोंसे विभूषित थीं और उनके शरीरपर अग्निशुद्ध साड़ी शोभा पा रही थी। उनकी वेणी सुन्दररूपसे गुँथी गयी थी। वे मुस्कराती हुई अमूल्य रत्नजटित दर्पणमें अपना मुख निहार रही थीं, कस्तूरीके बिन्दुओंसे युक्त एवं सुकोमल चन्दनसे चर्चित थीं तथा उनके ललाटका मध्य भाग सिन्दूरकी बेंदीसे उद्भासित हो रहा था। उनकी कान्ति तपाये हुए सुवर्णकी-सी और प्रभा सैकड़ों चन्द्रमाओंके समान थी, उनके सर्वाङ्गमें चन्दनका अनुलेप हुआ था, मालतीकी माला उनकी शोभा बढ़ा रही थी और सात बालक राजकुमारोंद्वारा वे वहाँ लायी गयी थीं। ऐसी महालक्ष्मीस्वरूपा पतिव्रता रुक्मिणीदेवीको देवेन्द्रों, मुनीन्द्रों, सिद्धेन्द्रों तथा नृपश्रेष्ठोंने देखा।

तदनन्तर सती रुक्मिणीने अपने पति श्रीकृष्णकी सात प्रदक्षिणा करके उन्हें नमस्कार किया और चन्दनके सुकोमल पल्लवोंद्वारा शीतल जलसे सींचा। तत्पश्चात् जगत्पति श्रीकृष्णने शान्तरूपिणी एवं मन्द मुस्कानयुक्त अपनी प्रियतमा रुक्मिणीपर जल छिड़का। फिर शुभ मुहूर्तमें पतिने पत्नीका और पत्नीने पतिका अवलोकन किया। इसके बाद सुमुखी रुक्मिणीदेवी पिताकी गोदमें जा बैठीं; उस समय वे अपने तेजसे उद्दीप्त हो रही थीं और उनका मुख लज्जावश झुक गया था। नारद! तब राजा भीष्मकने वेदमन्त्रोच्चारणपूर्वक दानकी विधिसे देवेश्वरी रुक्मिणीको परिपूर्णतम श्रीकृष्णके हाथों सौंप दिया। उस समय हर्षपूर्वक बैठे हुए श्रीकृष्णने वसुदेवजीकी आज्ञासे '**स्वस्ति**' ऐसा कहकर रुक्मिणीदेवीको उसी प्रकार ग्रहण कर

लिया, जैसे भगवान् शंकरने भवानीको ग्रहण

किया था। इसके बाद राजाने परिपूर्णतम परमात्मा श्रीकृष्णको पाँच लाख अशर्फियाँ दक्षिणामें दीं। इस प्रकार मुनियों और देवेन्द्रोंकी सभामें उस शुभ कर्मके समाप्त होनेपर राजा मोहवश कन्याको हृदयसे चिपटाकर रोने लगे और अपने दोनों नेत्रोंके जलसे उन्होंने उस श्रेष्ठ कन्याको भिगो दिया। फिर वचनद्वारा उसका परिहार करके उन्होंने उसे श्रीकृष्णको समर्पित कर दिया।

इसी समय रुक्मिणीकी माता महारानी सुन्दरी सुभद्रा आनन्दमग्न हो पति-पुत्रवती साध्वी महिलाओंके साथ वहाँ आयीं और निर्मन्थन आदि मङ्गल-कार्य करके दम्पतिको एक ऐसे रत्ननिर्मित महलमें लिवा ले गयीं, जो नाना प्रकारकी विचित्र चित्रकारीसे सुशोभित, हीरेके हारसे विभूषित तथा मोती, माणिक्य, रत्न और दर्पणसे उद्दीप्त था। वहीं श्रीकृष्णने दुर्गतिनाशिनी दुर्गा, सरस्वती, सावित्री, रति, सती, रोहिणी, पतिव्रता देवपत्नी, राजपत्नी और मुनिपत्नियोंको देखा, जो रत्नाभरणोंसे विभूषित हो रत्ननिर्मित सिंहासनोंपर आसीन थीं। वे सभी जगदीश्वर श्रीकृष्णको निकट आया देखकर अपने-अपने आसनोंसे उठ पड़ीं और प्रसन्नतापूर्वक उन्हें एक रमणीय रत्नसिंहासनपर बैठाया। फिर समागत देवाङ्गनाओं तथा मुनिपत्नियोंने अञ्जलि बाँधकर क्रमशः पृथक्-पृथक् उन माधवकी स्तुति की। महारानी सुभद्राने वरसहित कन्याको भोजन कराया और सुवासित जल तथा कर्पूरयुक्त उत्तम पान प्रदान किया। तदनन्तर वहाँ दुर्गादेवीने सभी महिलाओंकी आज्ञासे श्रीकृष्णके हाथमें मङ्गलपत्रिका दी और उनसे उसे पढ़नेके लिये कहा। तब देवियोंके उस समाजमें श्रीकृष्ण मुस्कराते हुए उस पत्रिकाको पढ़ने लगे। (उसमें लिखा था—) लक्ष्मी, सरस्वती, दुर्गा, सावित्री, सती, राधिका, तुलसी, पृथ्वी, गङ्गा, अरुन्धती, यमुना, अदिति, शतरूपा, सीता, देवहूति, मेनका—ये सभी देवियाँ दम्पतिका परम मङ्गल करें।* जब श्रीकृष्णने इस प्रकार पढ़ा, तब वे उसे सुनकर विनोद करने लगीं।

तदनन्तर राजा भीष्मकने भी देवगणों, मुनिवरों तथा भूपालोंका विधिपूर्वक पूजन किया और उन्हें आदरसहित भोजन कराया। उस समय कुण्डिननगरमें माङ्गलिक वाद्य और संगीतके साथ-साथ 'लोगो! खाओ-खाओ, देते जाओ-देते जाओ' ऐसे शब्द गूँज रहे थे। प्रातःकाल होनेपर ब्रह्मा, शिव और शेष आदि देवता तथा भूपालगण उतावलीपूर्वक अपने-अपने वाहनोंपर सवार हुए। इधर महाराज उग्रसेन और वसुदेवजीने भी शीघ्रतापूर्वक श्रीकृष्ण और सती रुक्मिणीकी यात्रा करायी। उस समय रुक्मिणीकी

---

* लक्ष्मीः सरस्वती दुर्गा सावित्री राधिका सती । तुलसी पृथिवी गङ्गारुन्धती यमुनादितिः ॥
शतरूपा च सीता च देवहूतिश्च मेनका । देव्यश्चैता दम्पतीनां कुर्वन्तु मङ्गलं परम् ॥
(१०९। १०-११)

माता सुभद्रा कन्याको अपनी छातीसे लगाकर उसकी सखियों तथा बान्धवोंके साथ उच्च स्वरसे रोने लगीं और इस प्रकार बोलीं।

सुभद्राने कहा—वत्से! तू मुझ अपनी माताका परित्याग करके कहाँ जा रही है? भला, मैं तुझे छोड़कर कैसे जी सकूँगी? और तू भी मेरे बिना कैसे जीवन धारण करेगी? रानी बेटी! तू महालक्ष्मी है, तूने मायासे ही कन्याका रूप धारण कर रखा है। अब तू वसुदेव-नन्दनकी प्रिया होकर मेरे घरसे वसुदेवजीके भवनको जा रही है। यों कहकर रानीने शोकवश नेत्रोंके जलसे अपनी कन्याको भिगो दिया। भीष्मकने भी आँखोंमें आँसू भरकर अपनी कन्या श्रीकृष्णको समर्पित कर दी। इस प्रकार उसका परिहार करके वे फूट-फूटकर रोने लगे। तब रुक्मिणीदेवी तथा श्रीकृष्ण भी लीलासे आँसू टपकाने लगे। तत्पश्चात् वसुदेवजीने पुत्र और पुत्रवधूको रथपर चढ़ाया। इस अवसरपर राजा भीष्मक अपने जामाताको दहेज देने लगे। उन्होंने हर्षपूर्ण हृदयसे एक हजार गजराज, छः हजार घोड़े, एक सहस्र दासियाँ, सैकड़ों नौकर, अमूल्य रत्नोंके बने हुए आभूषण, एक हजार रत्न, पाँच लाख शुद्ध सुवर्णकी मोहरें, विश्वकर्माद्वारा निर्मित सोनेके सुन्दर-सुन्दर जलपात्र तथा भोजनपात्र, बहुत-सी गायें, एक हजार दूधवाली सवत्सा धेनुएँ और बहुत-से बहुमूल्य रमणीय अग्निशुद्ध वस्त्र प्रदान किये। तब वसुदेव और उग्रसेन देवताओं और मुनियोंके साथ प्रसन्नतापूर्वक शीघ्र ही द्वारकाकी ओर चले। वहाँ अपनी रमणीय पुरीमें प्रवेश करके उन्होंने मङ्गल-कृत्य कराये, सुन्दर एवं अत्यन्त मनोहर बाजे बजवाये। तदनन्तर देवकी, सुन्दरी रोहिणी, नन्दपत्नी यशोदा, अदिति, दिति तथा अन्यान्य सौभाग्यवती नारियाँ श्रीकृष्ण और सुन्दरी रुक्मिणीकी ओर बारंबार निहारकर उन्हें घरके भीतर लिवा ले गयीं और उन्होंने उनसे मङ्गल-कृत्य करवाये। फिर देवताओं, मुनिवरों, नरेशों और भाई-बन्धुओंको चतुर्विध (भक्ष्य, भोज्य, लेह्य, चोष्य) भोजन कराकर उन्हें बिदा किया। पुनः हर्षमग्न हो भट्ट ब्राह्मणोंको इतने रत्न आदि दान किये, जिससे वे प्रसन्न और संतुष्ट हो गये। उन्हें भोजन भी कराया। इस प्रकार भोजन करके और धन लेकर वे सभी खुशी-खुशी अपने घरोंको गये। यों वसुदेव-पत्नीने सारा मङ्गल-कार्य सम्पन्न कराया। (अध्याय १०८-१०९)

श्रीकृष्णके कहनेसे नन्द-यशोदाका ज्ञानप्राप्तिके लिये कदलीवनमें राधिकाके पास जाना, वहाँ अचेतनावस्थामें पड़ी हुई राधाको श्रीकृष्णके संदेशद्वारा चैतन्य करना और राधाका उपदेश देनेके लिये उद्यत होना

श्रीनारायण कहते हैं—नारद! इस प्रकार उस साङ्गोपाङ्ग मङ्गल-कार्यके अवसरपर पधारे हुए लोगोंके चले जानेपर नन्दजी यशोदाके साथ अपने प्रिय पुत्र (श्रीकृष्ण)-के निकट गये।

वहाँ जाकर यशोदाने कहा—माधव! तुमने अपने पिता नन्दजीको तो ज्ञान प्रदान कर ही दिया, परंतु बेटा! मैं तुम्हारी माता हूँ; अतः कृपानिधे! मुझपर भी कृपा करो। महाभाग! तुम पृथ्वीका उद्धार करनेवाले और भक्तोंको उबारनेवाले हो। मैं भयभीत हो इस भयंकर भवसागरमें पड़ी हुई हूँ। मायामयी प्रकृति ही इस भवसागरसे तरनेके लिये नौका है और तुम्हीं उसके कर्णधार हो; अतः कृपामय! मेरा उद्धार करो। यशोदाकी बात सुनकर पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण जो ज्ञानियोंके गुरुके भी गुरु हैं, हँस पड़े और भक्तिपूर्वक मातासे बोले।

श्रीभगवान्‌ने कहा—माँ! जो भक्त्यात्मक ज्ञान है, वह तुम्हें राधा बतलायेगी। यदि तुम राधाके प्रति मानवभावका त्याग करके उसकी आज्ञाका पालन करोगी तो जो ज्ञान मैंने नन्दजीको दिया है; वही ज्ञान वह तुम्हें प्रदान करेगी। अतः अब नन्दजीके साथ आदरपूर्वक नन्द-व्रजको लौट जाओ। इतना कहकर और विनय प्रदर्शित करके श्रीहरि महलके भीतर चले गये।

तब नन्दजी यशोदाके साथ कदलीवनको गये। वहाँ उन्होंने राधाको देखा, जो पङ्कस्थ चन्दनचर्चित जलयुक्त कमल-दलकी शय्यापर अचेत हो शयन कर रही थीं। राधाने अपने अङ्गोंसे भूषणोंको उतार फेंका था, उनके शरीरपर श्वेत वस्त्र शोभा पा रहा था, आहारका त्याग कर देनेसे उनका उदर कृश हो गया था, मूर्च्छितावस्थामें उनके ओष्ठ सूख गये थे और नेत्रोंमें आँसू भरे हुए थे। वे परमात्मा श्रीकृष्णके चरणकमलका ध्यान कर रही थीं, उनका चित्त एकमात्र उन्हींमें निविष्ट था और बाह्यज्ञान लुप्त हो गया था। वे बीच-बीचमें मुखकमलको ऊपर उठाकर मन्द मुस्कानयुक्त प्रियतम श्रीकृष्णका मार्ग जोहती रहती थीं। स्वप्नमें प्रियतमके समीप पहुँचकर कभी हँसती और कभी रोती थीं। सखियाँ चारों ओरसे श्वेत चँवरद्वारा निरन्तर उनकी सेवा कर रही थीं। राधाकी यह दशा देखकर भार्यासहित नन्दको महान् विस्मय हुआ। उन्होंने दण्डकी भाँति भूमिपर लेटकर परम भक्तिके साथ राधाको नमस्कार किया। उसी समय ईश्वरेच्छासे सहसा राधाकी नींद उचट गयी। वे जाग पड़ीं और क्षणभरमें ही उन्हें विषयज्ञानरहित चेतना प्राप्त हो गयी। तब वे उस सखी-समाजमें सामने पति-पत्नी नन्द-यशोदाको देखकर उनसे आदरपूर्वक पूछते हुए मधुर वचन बोलीं।

राधिकाने पूछा—बतलाओ, तुम कौन हो और यहाँ किस प्रयोजनसे आये हो? सुनो; मुझे विषयज्ञान नहीं है। मैं यह भी नहीं जान पाती कि कौन मनुष्य है कौन पशु; कौन जल है कौन स्थल; और कौन रात है कौन दिन? यहाँतक कि मुझे स्त्री, पुरुष अथवा नपुंसकका भी भेद नहीं ज्ञात होता।

राधिकाकी बात सुनकर नन्दको महान् विस्मय हुआ। तब गोपी यशोदा सम्भाषण करनेके लिये डरते-डरते राधाके निकट गयीं और उनके पास ही बैठकर प्रिय वचन बोलीं। नन्द भी वहीं यशोदाद्वारा दिये गये आसनपर बैठ गये।

तब यशोदाने कहा—राधे! चेत करो; तुम यत्नपूर्वक अपनी रक्षा करो; क्योंकि मङ्गल दिन आनेपर तुम अपने प्राणनाथके दर्शन करोगी। सुरेश्वरि! तुमने अपने कुल तथा विश्वको पवित्र कर दिया है। तुम्हारे चरणकमलकी सेवासे ये गोपियाँ पुण्यवती हो गयी हैं। जनसमूह, संतगण, चारों वेद और पुरातन पुराण तुम्हारी तीर्थोंको पावन बनानेवाली सुमङ्गल कीर्तिका गान करेंगे। बुद्धिरूपे! मैं यशोदा हूँ, ये नन्द हैं और तुम वृषभानुनन्दिनी राधा हो। सुव्रते! मेरी बात सुनो। भद्रे! मैं द्वारका नगरसे श्रीकृष्णके पाससे तुम्हारे

निकट आयी हूँ। सति! श्रीहरिने ही मुझे तुम्हारे पास भेजा है। अब तुम उन गदाधरका मङ्गल-समाचार एवं मङ्गल-संदेश सुनो। तुम्हें शीघ्र ही उन श्रीकृष्णके दर्शन होंगे। हे देवि! होशमें आ जाओ और इस समय मुझे भक्त्यात्मक ज्ञानका उपदेश दो। हम दोनों तुम्हारे पतिके उपदेशसे तुम्हारे पास आये हैं। वरानने! इसके बाद श्रीहरि तुम्हारे पास आयेंगे और तुम शीघ्र ही श्रीदामाके शापसे मुक्त हो जाओगी। इस प्रकार यशोदाके वचन सुनकर और गदाधरका समाचार पाकर श्रीकृष्णके नामस्मरणसे राधाका अमङ्गल दूर हो गया। वे भीतर-ही-भीतर श्रीकृष्णकी सम्भावना करके चेतनामें आ गयीं और शान्त होकर मधुर वाणीसे परमोत्तम लौकिकी भक्तिका वर्णन करने लगीं।

(अध्याय ११०)

राधिकाद्वारा 'राम' आदि भगवन्नामोंकी व्युत्पत्ति और उनकी प्रशंसा तथा यशोदाके पूछनेपर अपने 'राधा' नामकी व्याख्या करना

राधिकाने कहा—यशोदे! स्त्रीजाति तो वस्तुतः यों ही अबला, मूढ़ और अज्ञानमें तत्पर रहनेवाली होती है; तिसपर भी श्रीकृष्णके विरहसे मेरी चेतना निरन्तर नष्ट हुई रहती है। ऐसी दशामें पाँच प्रकारके ज्ञानोंमें, जो सर्वोत्तम भक्त्यात्मक ज्ञान है, उसके विषयमें मैं क्या कह सकती हूँ? तथापि जो कुछ तुमसे कहती हूँ, उसे सुनो। यशोदे! तुम इन सारे नश्वर पदार्थोंका परित्याग करके पुण्यक्षेत्र भारतमें स्थित रमणीय वृन्दावनमें जाओ। वहाँ निर्मल यमुनाजलमें त्रिकाल स्नान करके सुकोमल चन्दनसे अष्टदल कमल बनाकर शुद्ध मनसे गर्ग-प्रदत्त ध्यानद्वारा परमानन्दस्वरूप श्रीकृष्णका भलीभाँति पूजन करो और आनन्दपूर्वक उनके परमपदमें लीन हो जाओ। सति! सौ पूर्व पुरुषोंके साथ अपने कर्मका उच्छेद करके सदा वैष्णवोंके ही साथ वार्तालाप करो। भक्त अग्निकी ज्वाला, पिंजरेमें बंद होना, काँटोंमें रहना और विष खाना स्वीकार करता है, परंतु हरिभक्तिरहित लोगोंका सङ्ग ठीक नहीं समझता; क्योंकि वह नाशका कारण होता है। भक्तिहीन पुरुष स्वयं तो नष्ट होता ही है, साथ ही दूसरेकी बुद्धिमें भेद उत्पन्न कर देता है। भक्तके सङ्गसे तथा हरिकथालापरूपी अमृतके सिञ्चनसे भक्तिरूपी वृक्षका अङ्कुर बढ़ता है; किंतु भक्तिहीनोंके साथ वार्तालापरूपी प्रदीप्ताग्निकी ज्वालाकी एक कलाके स्पर्शसे भी वह अङ्कुर सूख जाता है; फिर सींचनेसे ही उसकी वृद्धि होती है। इसलिये सावधान होकर भक्तिहीनोंके सङ्गका उसी प्रकार परित्याग कर देना चाहिये, जैसे मनुष्य कालसर्पको देखकर डरके मारे दूर भाग जाते हैं। यशोदे! अपने ऐश्वर्यशाली पुत्रका, जो साक्षात् परमात्मा और ईश्वर हैं, उत्तम भक्तिके साथ भजन करो। उनके राम, नारायण, अनन्त, मुकुन्द, मधुसूदन, कृष्ण, केशव, कंसारे, हरे, वैकुण्ठ, वामन—इन ग्यारह नामोंको जो पढ़ता अथवा कहलाता है, वह सहस्रों कोटि जन्मोंके पापोंसे मुक्त हो जाता है*।

'रा' शब्द विश्ववाची और 'म' ईश्वरवाचक है, इसलिये जो लोकोंका ईश्वर है उसी कारण वह 'राम' कहा जाता है। वह रमाके साथ रमण

* वरं हुतवहज्वालां भक्तो वाञ्छति पिञ्जरम्। वरं च कण्टके वासं वरं च विषभक्षणम्॥
हरिभक्तिविहीनानां न सङ्गं नाशकारणम्। स्वयं नष्टो भक्तिहीनो बुद्धिभेदं करोति च॥

करता है इसी कारण विद्वान् लोग उसे 'राम' कहते हैं। रमाका रमणस्थान होनेके कारण राम-तत्त्ववेत्ता 'राम' बतलाते हैं। 'रा' लक्ष्मीवाची और 'म' ईश्वरवाचक है; इसलिये मनीषीगण लक्ष्मीपतिको 'राम' कहते हैं। सहस्रों दिव्य नामोंके स्मरणसे जो फल प्राप्त होता है, वह फल निश्चय ही 'राम' शब्दके उच्चारणमात्रसे मिल जाता है*।

विद्वानोंका कथन है कि 'नार' शब्दका अर्थ सारूप्य-मुक्ति है; उसका जो देवता 'अयन' है, उसे 'नारायण' कहते हैं। किये हुए पापको 'नार' और गमनको 'अयन' कहते हैं। उन पापोंका जिससे गमन होता है, वही ये 'नारायण' कहे जाते हैं। एक बार भी 'नारायण' शब्दके उच्चारणसे मनुष्य तीन सौ कल्पोंतक गङ्गा आदि समस्त तीर्थोंमें स्नानके फलका भागी होता है। 'नार' को पुण्य मोक्ष और 'अयन' को अभीष्ट ज्ञान कहते हैं। उन दोनोंका ज्ञान जिससे हो, वे ही ये प्रभु 'नारायण' हैं।†

जिसका चारों वेदों, पुराणों, शास्त्रों तथा अन्यान्य योगग्रन्थोंमें अन्त नहीं मिलता; इसी कारण विद्वान् लोग उसका नाम 'अनन्त' बतलाते हैं। 'मुकु' अध्ययमान, निर्माण और मोक्षवाचक है; उसे जो देवता देता है, उसी कारण वह 'मुकुन्द' कहा जाता है। 'मुकु' वेदसम्मत भक्तिरसपूर्ण प्रेमयुक्त वचनको कहते हैं; उसे जो भक्तोंको देता है वह 'मुकुन्द' कहलाता है। चूँकि वे मधु दैत्यका हनन करनेवाले हैं, इसलिये उनका एक नाम 'मधुसूदन' है। यों संतलोग वेदमें विभिन्न अर्थका प्रतिपादन करते हैं। 'मधु' नपुंसकलिङ्ग तथा किये हुए शुभाशुभ कर्म और माध्वीक (महुएकी शराब)-का वाचक है; अतः उसके तथा भक्तोंके कर्मोंके सूदन करनेवालेको 'मधुसूदन' कहते हैं। जो कर्म परिणाममें अशुभ और भ्रान्तोंके लिये मधुर है उसे 'मधु' कहते हैं, उसका जो 'सूदन' करता है; वही 'मधुसूदन' है।

'कृषि' उत्कृष्टवाची, 'ण' सद्भक्तिवाचक और 'अ' दातृवाचक है; इसीसे विद्वान्लोग उन्हें 'कृष्ण' कहते हैं। परमानन्दके अर्थमें 'कृषि' और

अङ्कुरो भक्तिवृक्षस्य भक्तसङ्गेन वर्धते । परं हरिकथालापपीयूषासेचनेन च ॥
अभक्तालापदीप्ताग्निज्वालायाः कलयापि च । अङ्कुरं शुष्कतां याति पुनः सेकेन वर्धते ॥
तस्मादभक्तसङ्गं च सावधानं परित्यज । यथा दृष्टा कालसर्पं नरो भीतः पलायते ॥
यशोदे च प्रयत्नेन स्वात्मनः पुत्रमीश्वरम् । भजस्व परया भक्त्या परमात्मानमीश्वरम् ॥
राम नारायणानन्त मुकुन्द मधुसूदन । कृष्ण केशव कंसारे हरे वैकुण्ठ वामन ॥
इत्येकादश नामानि पठेद् वा पाठयेदिति । जन्मकोटिसहस्राणां पातकादेव मुच्यते ॥
(१११। १३—२०)

* राशब्दो विश्ववचनो मश्चापीश्वरवाचकः । विश्वानामीश्वरो यो हि तेन रामः प्रकीर्तितः ॥
रमते रमया सार्धं तेन रामं विदुर्बुधाः । रमाणां रमणस्थानं रामं रामविदो विदुः ॥
राश्चेति लक्ष्मीवचनो मश्चापीश्वरवाचकः । लक्ष्मीपतिं गतिं रामं प्रवदन्ति मनीषिणः ॥
नाम्नां सहस्रं दिव्यानां स्मरणे यत्फलं भवेत् । तत्फलं लभते नूनं रामोच्चारणमात्रतः ॥
(१११। १८—२१)

† सारूप्यमुक्तिवचनो नारेति च विदुर्बुधाः । यो देवोऽप्यायनं तस्य स च नारायणः स्मृतः ॥
नाराश्च कृतपापाश्चाप्ययनं गमनं स्मृतम् । यतो हि गमनं तेषां सोऽयं नारायणः स्मृतः ॥
सकृन्नारायणेत्युक्त्वा पुमान् कल्पशतत्रयम् । गङ्गादिसर्वतीर्थेषु स्नातो भवति निश्चितम् ॥
नारं च मोक्षणं पुण्यमयनं ज्ञानमीप्सितम् । तयोर्ज्ञानं भवेद् यस्मात् सोऽयं नारायणः प्रभुः ॥
(१११। २२—२५)

उनके दास्य कर्ममें 'ण' का प्रयोग होता है। उन दोनोंके दाता जो देवता हैं, उन्हें 'कृष्ण' कहा जाता है। भक्तोंके कोटिजन्मार्जित पापों और क्लेशोंमें 'कृषि' का तथा उनके नाशमें 'ण' का व्यवहार होता है; इसी कारण वे 'कृष्ण' कहे जाते हैं। सहस्र दिव्य नामोंकी तीन आवृत्ति करनेसे जो फल प्राप्त होता है; वह फल 'कृष्ण' नामकी एक आवृत्तिसे ही मनुष्यको सुलभ हो जाता है। वैदिकोंका कथन है कि 'कृष्ण' नामसे बढ़कर दूसरा नाम न हुआ है, न होगा। 'कृष्ण' नाम सभी नामोंसे परे है। हे गोपी! जो मनुष्य 'कृष्ण-कृष्ण' यों कहते हुए नित्य उनका स्मरण करता है; उसका उसी प्रकार नरकसे उद्धार हो जाता है, जैसे कमल जलका भेदन करके ऊपर निकल आता है। 'कृष्ण' ऐसा मङ्गल नाम जिसकी वाणीमें वर्तमान रहता है, उसके करोड़ों महापातक तुरंत ही भस्म हो जाते हैं। 'कृष्ण' नाम-जपका फल सहस्रों अश्वमेध-यज्ञोंके फलसे भी श्रेष्ठ है; क्योंकि उनसे पुनर्जन्मकी प्राप्ति होती है; परंतु नाम-जपसे भक्त आवागमनसे मुक्त हो जाता है। समस्त यज्ञ, लाखों व्रत, तीर्थस्नान, सभी प्रकारके तप, उपवास, सहस्रों वेदपाठ, सैकड़ों बार पृथ्वीकी प्रदक्षिणा—ये सभी इस 'कृष्णनाम'-जपकी सोलहवीं कलाकी समानता नहीं कर सकते*। उन उपर्युक्त कर्मोंके लोभसे मनुष्योंको चिरकालके लिये स्वर्गरूप फलकी प्राप्ति होती है और उस स्वर्गसे पतन होना निश्चित है; परंतु जपकर्ता पुरुष श्रीहरिके परम पदको प्राप्त कर लेता है।

'क' जलको कहते हैं; उस जलमें तथा समस्त शरीरोंमें भी जो आत्मा शयन करता है; उस देवको सभी वैदिक लोग 'केशव' कहते हैं। 'कंस' शब्दका प्रयोग पातक, विघ्न, रोग, शोक और दानवके अर्थमें होता है, उनका जो 'अरि' अर्थात् हनन करनेवाला है; वह 'कंसारि' कहा जाता है। जो रुद्ररूपसे नित्य विश्वोंका तथा भक्तोंके पातकोंका संहार करते रहते हैं, इसी कारण वे 'हरि' कहलाते हैं। जो ब्रह्मस्वरूपा 'मा' मूलप्रकृति, ईश्वरी, नारायणी, सनातनी विष्णुमाया, महालक्ष्मीस्वरूपा, वेदमाता सरस्वती, राधा, वसुन्धरा, और गङ्गा नामसे विख्यात हैं, उनके स्वामी (धव) को 'माधव' कहते हैं।

यशोदे! ब्रह्मा, विष्णु, महेश और शेष आदि जिनकी वन्दना करते हैं; सनकादि मुनि ध्यानद्वारा जिनका कुछ भी रहस्य नहीं जान पाते और वेद-पुराण जिनका निरूपण करनेमें असमर्थ हैं; उन माखनचोरका भक्तिपूर्वक भजन करो। दूध, दही, घी, नया मथकर तैयार किया हुआ मट्ठा—ये सब कहाँ हैं, उनका चुरानेवाला कहाँ है, तुम कहाँ हो और तुम्हारा भवबन्धन कहाँ है? योगी,

---

* कृषिरुत्कृष्टवचनो णश्च सद्भक्तिवाचकः। अश्चापि दातृवचनः कृष्णं तेन विदुर्बुधाः॥
कृषिश्च परमानन्दे णश्च तद्दास्यकर्मणि। तयोर्दाता च यो देवस्तेन कृष्णः प्रकीर्तितः॥
कोटिजन्मार्जिते पापे कृषिः क्लेशे च वर्तते। भक्तानां णश्च निर्वाणे तेन कृष्णः प्रकीर्तितः॥
सहस्रनाम्नां दिव्यानां त्रिरावृत्त्या च यत्फलम्। एकावृत्त्या तु कृष्णस्य तत्फलं लभते नरः॥
कृष्णनाम्नः परं नाम न भूतं न भविष्यति। सर्वेभ्यश्च परं नाम कृष्णेति वैदिका विदुः॥
कृष्ण कृष्णेति हे गोपि यस्तं स्मरति नित्यशः। जलं भित्त्वा यथा पद्मं नरकादुद्धराम्यहम्॥
कृष्णेति मङ्गलं नाम यस्य वाचि प्रवर्तते। भस्मीभवन्ति सद्यस्तन्महापातककोटयः॥
अश्वमेधसहस्रेभ्यः फलं कृष्णजपस्य च। वरं तेभ्यः पुनर्जन्म नातो भक्तपुनर्भवः॥
सर्वेषामपि यज्ञानां लक्षाणि च व्रतानि च। तीर्थस्नानानि सर्वाणि तपांस्यनशनानि च॥
वेदपाठसहस्राणि प्रादक्षिण्यं भुवः शतम्। कृष्णनामजपस्यास्य कलां नार्हन्ति षोडशीम्॥
(१११। ३२—४१)

सिद्धगण, मुनीन्द्र, भक्तसमुदाय, ब्रह्मा, शिव और शेष योगद्वारा जिन्हें बाँध नहीं सके; वह तुम्हारे ओखली-मूलसे कैसे बँध गया? अतः सति! भारतवर्षमें शीघ्र ही हृत्कमलके मध्यमें स्थित परमेश्वररूप अपने पुत्रका प्रेम, भक्ति, स्तवन, पूजन और यत्नपूर्वक ध्यान करते हुए भजन करो। गोपी! तुम्हारा कल्याण हो। अब तुम्हारे मनमें जो इच्छा हो, वह वरदान माँग लो। इस समय जगत्में जो देवताओंके लिये भी दुर्लभ होगा, वह सब कुछ मैं तुम्हें प्रदान करूँगी।

यशोदाने कहा—राधे! श्रीहरिके चरणोंमें निश्चल भक्ति तथा उनकी दासता—यही मेरा अभीष्ट वर है। साथ ही तुम्हारे नामकी क्या व्युत्पत्ति है—यह भी मुझे बतलानेकी कृपा करो।

श्रीराधिका बोलीं—यशोदे! मेरे वरदानसे तुम्हारी श्रीहरिके चरणोंमें निश्चल भक्ति हो और तुम्हें श्रीहरिकी दुर्लभ दासता प्राप्त हो। अब उत्तम निर्णयका वर्णन करती हूँ, सुनो। पूर्वकालमें नन्दने मुझे भाण्डीर-वटके नीचे देखा था, उस समय मैंने व्रजेश्वर नन्दको वह रहस्य बतलाया था और उसे प्रकट करनेको मना कर दिया था। मैं ही स्वयं राधा हूँ और रायाण गोपकी भार्या मेरी छायामात्र है। रायाण श्रीहरिके अंश, श्रेष्ठ पार्षद और महान् हैं।

जिनके रोमकूपोंमें अनेकों विश्व वर्तमान हैं, वे महाविष्णु ही 'रा' शब्द हैं और 'धा' विश्वके प्राणियों तथा लोकोंमें मातृवाचक धाय है; अतः मैं इनकी दूध पिलानेवाली माता, मूलप्रकृति और ईश्वरी हूँ। इसी कारण पूर्वकालमें श्रीहरि तथा विद्वानोंने मेरा नाम 'राधा' रखा है*। इस समय मैं सुदामाके शापसे वृषभानुकी कन्या होकर प्रकट हुई हूँ। अब सौ वर्ष पूरे होनेतक मेरा श्रीहरिके साथ वियोग बना रहेगा। मेरे पिता वृषभानु श्रीकृष्णके श्रेष्ठ पार्षद और महान् हैं तथा मेरी माता कलावती पितरोंकी मानसी कन्या हैं। इस भारतवर्षमें मेरी माता तथा मैं—दोनों अयोनिजा हैं। पुनः तुम लोगोंके साथ श्रीहरिके परमपदको प्राप्त होंगी। व्रजेश्वरि! इस प्रकार मैंने तुम्हें सारा भक्त्यात्मक ज्ञान बतला दिया। सति! अब तुम अपने ज्ञानी स्वामी व्रजेश्वरके साथ व्रजको लौट जाओ; क्योंकि इस समय तुम्हीं मेरे ध्यानमें रुकावट डालनेवाली हो। सुन्दरि! ध्यानभङ्ग हो जानेपर मनुष्योंको महान् दोषका भागी होना पड़ता है।

(अध्याय १११)

प्रद्युम्नाख्यान-वर्णन, श्रीकृष्णका सोलह हजार आठ रानियोंके साथ विवाह और उनसे संतानोत्पत्तिका कथन, दुर्वासाका द्वारकामें आगमन और वसुदेव-कन्या एकानंशाके साथ विवाह, श्रीकृष्णके अद्भुत चरित्रको देखकर दुर्वासाका भयभीत होना, श्रीकृष्णका उन्हें समझाना और दुर्वासाका पत्नीको छोड़कर तपके लिये जाना

श्रीनारायण कहते हैं—मुने! द्वारकामें पहुँचकर वसुदेवनन्दन श्रीकृष्ण वसुदेवजीकी आज्ञासे रुक्मिणीके रत्ननिर्मित श्रेष्ठ भवनमें गये। वह भवन शुद्ध स्फटिकके समान उज्ज्वल, बहुमूल्य रत्नोंद्वारा रचित, सामने तथा चारों ओरसे रमणीय और नाना प्रकारके चित्रोंसे चित्रित था।

* राशब्दश्च महाविष्णुर्विश्वानि यस्य लोमसु। विश्वप्राणिषु विश्वेषु धा धात्री मातृवाचकः॥
धात्री माताहमेतेषां मूलप्रकृतिरीश्वरी। तेन राधा समाख्याता हरिणा च पुरा बुधैः॥
(१११। ५७-५८)

उसपर अमूल्य रत्नोंके कलश चमक रहे थे और वह श्वेत चँवरों, दर्पणों तथा अग्निशुद्ध पवित्र वस्त्रोंद्वारा सब ओरसे सुशोभित था। तदनन्तर रुक्मिणीदेवीसे पूर्वकालमें शिवके द्वारा भस्मीभूत कामदेव प्रकट हुए। उन्होंने शम्बरासुरका वध करके अपनी पतिव्रता पत्नी रतिको प्राप्त किया। उस समय रति देवताके संकेतसे 'मायावती' नाम धारण करके शम्बरासुरके महलमें उसकी गृहिणी बनकर रहती थी; परंतु उसकी शय्यापर स्वयं न जाकर अपनी छायाको भेजती थी।

नारदने पूछा—महाभाग! कामदेव (प्रद्युम्न)-ने किस प्रकार दैत्यराज शम्बरका वध किया था? वह शुभ कथा विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिये।

श्रीनारायणने कहा—नारद! एक सप्ताहके व्यतीत होनेपर दैत्यराज शम्बर रुक्मिणीके सूतिकागृहसे बालकको लेकर वेगपूर्वक अपने वासस्थानको चला गया। वह दैत्यराज पुत्रहीन था; अतः उस पुत्रको पाकर उसे महान् हर्ष हुआ। फिर उसने प्रसन्नमनसे वह बालक मायावतीको दे दिया। उसे पाकर सती मायावतीको भी बड़ी प्रसन्नता हुई। तदनन्तर सरस्वतीदेवीने आकर मायावती

(रति)-को और श्रीकृष्ण-पुत्र (कामदेव)-को समझाया कि तुम दोनों पत्नी-पति हो। शिवके कोपसे भस्म हुए कामदेवने ही श्रीकृष्णके पुत्ररूपसे जन्म लिया है; अतएव तुम दोनों पति-पत्नीकी भाँति रहो।

तब वे पति-पत्नीकी भाँति रहने लगे। इस बातका शम्बरासुरको पता लग गया। तब वह दोनोंकी भर्त्सना करके उन्हें मारने दौड़ा। उसने शिवजीका दिया हुआ शूल चलाया। इसी बीच पवनदेवने चुपके-से दुर्गाका स्मरण करनेको कहा। दुर्गाका स्मरण करते ही शिव-शूल रमणीय और मनोहर मालाके रूपमें परिणत हो गया। तदनन्तर कामदेवने हर्षपूर्वक ब्रह्मास्त्रद्वारा उस दैत्यको मार डाला और रतिको लेकर वे विमानद्वारा द्वारकापुरीको चले गये। उनके पीछे समस्त देवगण स्वयं पार्वतीकी स्तुति करके चले।

रुक्मिणीने मङ्गल-कार्य सम्पन्न करके रतिको और अपने पुत्रको ग्रहण किया। श्रीहरिने स्वस्त्ययनपूर्वक परम उत्सव कराया, ब्राह्मणोंको जिमाया और पार्वतीकी पूजा की।

तदनन्तर श्रीकृष्णने वेदोक्त शुभ दिन आनेपर

क्रमशः सात रमणियोंका पाणिग्रहण किया। उनके नाम हैं—कालिन्दी, सत्यभामा, सत्या, सती, नाग्नजिती, जाम्बवती और लक्ष्मणा। उन्होंने क्रमशः इनके साथ विवाह किये और पुत्र उत्पन्न किये। उनमें एक-एकसे क्रमशः दस-दस पुत्र

और एक-एक कन्या उत्पन्न हुई। तत्पश्चात् श्रीकृष्णने राजाधिराज नरकासुरको पुत्रसहित मारकर रणके मुहानेपर महाबली मुर दैत्यको भी यमलोकका पथिक बना दिया। वहाँ उसके महलमें श्रीकृष्णको सोलह हजार कन्याएँ दीख पड़ीं, जिनकी अवस्था सौ वर्षसे ऊपर हो चुकी थी; परंतु उनका यौवन सदा स्थिर रहनेवाला था। वे सब-की-सब रत्नाभूषणोंसे विभूषित थीं तथा उनके मुख प्रफुल्लित थे। माधवने शुभ मुहूर्तमें उन सबका पाणिग्रहण किया और शुभकालमें क्रमशः उन सबके साथ रमण किया। उनमें भी प्रत्येकसे क्रमशः दस-दस पुत्र और एक-एक कन्याका जन्म हुआ। इस प्रकार श्रीहरिके पृथक्-पृथक् इतनी संतानें उत्पन्न हुईं।

नारद! एक समयकी बात है। मुनिवर दुर्वासा अनायास घूमते-घूमते रमणीय द्वारकापुरीमें आये। उस समय उनके साथ तीन करोड़ शिष्य भी थे। उन्हें आया देखकर पुत्र और पुरोहितके साथ महाराज उग्रसेन, वसुदेव, श्रीकृष्ण, अक्रूर तथा उद्धवने षोडशोपचारद्वारा मुनिवरकी पूजा करके उन्हें प्रणाम किया। ब्रह्मन्! तब मुनिवरने उन्हें पृथक्-पृथक् शुभाशीर्वाद दिये। तदनन्तर वसुदेवजीने अपनी कन्या एकानंशाको शुभ मुहूर्तमें महर्षि दुर्वासाको दान कर दिया और बहुत-से मोती, माणिक्य, हीरे तथा रत्न दहेजमें दिये। उन्होंने दुर्वासाको बहुमूल्य रत्नोंद्वारा निर्मित एक सुन्दर आश्रम भी दिया।

एक बार मुनिश्रेष्ठ दुर्वासाने अपने मनमें विचारकर देखा कि कहीं तो श्रीकृष्ण रत्ननिर्मित मनोहर पलंगपर शयन कर रहे हैं, कहीं वे सर्वव्यापी प्रभु श्रद्धापूर्वक पुराणकी कथा सुन रहे हैं, कहीं सुन्दर आँगनमें महोत्सव मनानेमें संलग्न हैं, कहीं सत्याद्वारा भक्तिपूर्वक दिया गया ताम्बूल चबा रहे हैं, कहीं शय्यापर पौढ़े हैं और रुक्मिणी श्वेत चँवरोंद्वारा उनकी सेवा कर रही हैं, कहीं आनन्दपूर्वक शयन कर रहे हैं और कालिन्दी उनके चरण दबा रही है; फिर सुधर्मा-सभामें सुन्दर रूप धारण करके सत्समाजके मध्य विराज रहे हैं। ऐश्वर्यशाली मुनिने सर्वत्र उनके साथ समान रूपसे सम्भाषण किया। इस परम अद्भुत दृश्यको देखकर विप्रवर दुर्वासाको महान् विस्मय हुआ। तब वे पुनः रुक्मिणीके महलमें उन जगदीश्वरकी स्तुति करने लगे।

दुर्वासा बोले—जगदीश्वर! आप सबपर विजय पानेवाले, जनार्दन, सबके आत्मस्वरूप, सर्वेश्वर, सबके कारण, पुरातन, गुणरहित, इच्छासे परे, निर्लिप्त, निष्कलङ्क, निराकार, भक्तानुग्रह-मूर्ति, सत्यस्वरूप, सनातन, रूपरहित, नित्य नूतन और ब्रह्मा, शिव, शेष तथा कुबेरद्वारा वन्दित हैं। लक्ष्मी आपके चरणकमलोंकी सेवा करती रहती हैं, आप ब्रह्मज्योति और अनिर्वचनीय हैं,

वेद भी आपके रूप और गुणका थाह नहीं लगा पाते और आप महाकाशके समान सम्माननीय हैं; आपकी जय हो, जय हो। परमात्मन्! आपको मेरा नमस्कार प्राप्त हो। श्रीहरिकी अनुमतिसे मन-ही-मन यों कहकर प्रियवर दुर्वासा श्रीकृष्णको प्रणाम करके वहीं उनके सामने खड़े हो गये। तब जगन्नाथ श्रीकृष्णने उन्हें वह ज्ञान बतलाना आरम्भ किया; जो हितकारक, सत्य, पुरातन, वेदविहित और सभी सत्पुरुषोंद्वारा मान्य था।

श्रीभगवान्‌ने कहा—विप्र! तुम तो शिवके अंश हो; अतः डरो मत। क्या ज्ञानद्वारा तुम्हें यह नहीं ज्ञात है कि मैं सबका उत्पत्तिस्थान हूँ और सभी मुझसे उत्पन्न होते हैं? मुने! मैं ही सबका आत्मा हूँ। मेरे बिना सभी शवतुल्य हो जाते हैं। प्राणियोंके शरीरसे मेरे निकल जानेपर सभी शक्तियाँ नष्ट हो जाती हैं। अकेला मैं ही उत्पन्न होकर पृथक्-पृथक्-रूपसे व्यक्त होता हूँ। जो भोजन करता है, उसीकी तृप्ति होती है; दूसरे कभी भी तृप्त नहीं होते। जीवादि समस्त प्राणियोंकी प्रतिमाएँ भिन्न-भिन्न होती हैं। गोलोक-स्थित रासमण्डलमें परिपूर्णतम मैं ही हूँ। राधा श्रीदामाके शापसे इस समय मेरा दर्शन नहीं कर सकती। सभी राधाके अंश-कलांशरूपसे उत्पन्न हुए हैं। रुक्मिणीके भवनमें राधाका अंश है और अन्य सभी रानियोंके महलोंमें कलाएँ हैं। मेरा भी शरीरधारियोंकी प्रतिमाओंमें कहीं अंश, कहीं कलाकी कला और कहीं कलाका कलांश वर्तमान है। इतना कहकर जगदीश्वर महलके भीतर चले गये और दुर्वासाजी अपनी प्रिया एकानंशाको त्यागकर श्रीहरिके लिये तप करने चले गये।

(अध्याय ११२)

पार्वतीद्वारा दुर्वासाके प्रति अकारण पत्नी-त्यागके दोषका वर्णन, दुर्वासाका पुनः लौटकर द्वारका जाना, श्रीकृष्णका युधिष्ठिरके राजसूययज्ञमें पधारना, शिशुपालका वध, उसके आत्माद्वारा श्रीकृष्णका स्तवन, श्रीकृष्ण-चरितका निरूपण

श्रीनारायण कहते हैं—नारद! महर्षि दुर्वासा शिष्योंसहित द्वारकापुरीसे निकलकर भक्तिपूर्वक भगवान् शंकरका दर्शन करनेके लिये कैलासको चले। कैलासपर पहुँचकर मुनिने शिव और शिवाको नमस्कार किया तथा शिष्योंसहित पवित्रभावसे प्रणत होकर परम भक्तिके साथ उनकी स्तुति की। फिर श्रीहरिका वह सारा वृत्तान्त, अपनी तपस्याका तत्त्व तथा अपने मनके वैराग्यका वर्णन किया। मुनिकी बात सुनकर सती पार्वती हँस पड़ीं और साक्षात् शंकरजीके संनिकट मुनिसे हितकारक एवं सत्य वचन बोलीं।

पार्वतीने कहा—मुने! तुम्हें धर्मका तत्त्व तो ज्ञात है नहीं, किंतु अपनेको धर्मिष्ठ मानते हो। भला, तुम अपनी संतानहीना पत्नीका परित्याग करके कहाँ तपस्याके लिये जा रहे हो? जो अपनी कुलीना पतिव्रता युवती पत्नीको संतानहीन अवस्थामें त्यागकर संन्यासी, ब्रह्मचारी अथवा यति हो जाता है; व्यापार अथवा नौकरी आदिके निमित्त चिरकालके लिये दूर चला जाता है, मोक्षके हेतु अथवा आवागमनका विनाश करनेके लिये तीर्थवासी अथवा तपस्वी हो जाता है, उसे पत्नीके शापसे मोक्ष तो मिलता नहीं; उलटे धर्मका नाश हो जाता है। परलोकमें उसे निश्चय ही नरककी प्राप्ति होती है और इस लोकमें उसकी कीर्ति नष्ट हो जाती है—ऐसा कमलजन्मा ब्रह्माने कहा है। इसलिये हे विप्र! इस समय

तुम द्वारकाको लौट जाओ, अपने धर्मकी रक्षा करो और मेरी अंशभूता एकानंशाका धर्मपूर्वक पालन करो। वत्स! कल्पवृक्षस्वरूप परमात्मा श्रीकृष्णके चरणकमलका—जो पद्माद्वारा अर्चित और सबके लिये परम दुर्लभ है तथा शम्भु और सनकादि मुनीश्वर जिसका निरन्तर गुणगान करते रहते हैं—परित्याग करके कहाँ तपस्याके लिये जा रहे हो? तुम्हारा यह कार्य तो मनोहर सुधाके त्यागके समान है। मुने! जो स्वप्नमें भी श्रीकृष्णके चरणकमलका जप करता है, वह सौ जन्मोंमें किये हुए पापोंसे मुक्त हो जाता है—इसमें तनिक भी संशय नहीं है। उसके द्वारा बचपन, कौमार, जवानी और वृद्धावस्थामें जानमें अथवा अनजानमें जो कुछ पाप किया होता है; वह सारा-का-सारा भस्म हो जाता है। इस भारतवर्षमें जो श्रीकृष्णके चरणकमलका साक्षात् दर्शन करता है; वह तुरंत ही पूजनीय और जीवन्मुक्त हो जाता है—यह ध्रुव है। वह करोड़ों जन्मोंके किये हुए संचित पापसे छूट जाता है और उससे सभी तीर्थ सदा पावन होते रहते हैं। जो श्रीकृष्णसे सम्बन्ध रखनेवाला है—वही व्रत, तप, सत्य, पुण्य और पूजन सफल है; क्योंकि उससे अपने जन्मचक्रका विनाश हो जाता है। वेदोंका पारगामी ब्राह्मण भी यदि श्रीकृष्णकी भक्तिसे विहीन है तो उसके सङ्गसे तथा उसके साथ वार्तालाप करनेसे भक्तोंकी भक्ति नष्ट हो जाती है। ब्राह्मण स्वयं श्रीकृष्णका स्वरूप होता है। जो श्रीकृष्णका प्रसाद खानेवाला है; उसके स्पर्शसे अग्निसे लेकर पवनतक पवित्र हो जाते हैं और वह सारे जगत्को पावन बनानेमें समर्थ हो जाता है। द्विजवर! श्रीकृष्णको छोड़कर कहाँ तपस्या करने जा रहे हो? अरे! सारी तपस्याओंका फल तो श्रीकृष्णके स्मरणसे ही प्राप्त हो जाता है। जिसके उपदेशसे परमात्मा श्रीकृष्णमें भक्ति न उत्पन्न हो, वह गुरु परम वैरी तथा जन्मको निष्फल करनेवाला है*।

पार्वतीके वचन सुनकर शंकर प्रेमविह्वल हो गये। उनके सर्वाङ्गमें रोमाञ्च हो आया और वे परमेश्वरी पार्वतीकी प्रशंसा करने लगे। उधर दुर्वासा शिव और दुर्गाके चरणकमलोंमें प्रणाम करके बारंबार श्रीकृष्णके चरणका स्मरण करते हुए पुनः द्वारकाको लौट गये। वहाँ जाकर उन्होंने श्रीहरिके दर्शन किये और उन परमेश्वरकी स्तुति की। फिर एकानंशाके महलमें जाकर उसके साथ निवास करने लगे। इधर युधिष्ठिरके ध्यान करनेसे श्रीकृष्ण हस्तिनापुरको प्रस्थित हुए। वहाँ पहुँचकर उन्होंने परमानन्दपूर्वक कुन्ती, राजा युधिष्ठिर तथा भाइयोंसे बातचीत की। फिर युक्तिपूर्वक जरासंध आदिका वध करके मुनिवरों तथा श्रेष्ठ नरेशोंके साथ मनोवाञ्छित राजसूययज्ञ कराया, जिसमें विधिपूर्वक दक्षिणा नियत थी। उस यज्ञके अवसरपर उन्होंने शिशुपाल और दन्तवक्रको भी यमलोकका पथिक बना दिया। जिस समय शिशुपाल उस देवताओं और भूपालोंकी सभामें श्रीकृष्णकी अतिशय निन्दा कर रहा था, उसी समय उसका शरीर धराशायी हो गया और जीव श्रीहरिके परम पदकी ओर चला गया; परंतु वहाँ उन सर्वेश्वरको न देखकर वह लौट आया और माधवकी स्तुति करने लगा।

शिशुपाल बोला—माधव! तुम वेदों, वेदाङ्गों, देवताओं, असुरों और प्राकृत देहधारियोंके जनक हो। तुम सूक्ष्म सृष्टिका विधान करके उसमें कल्पभेद करते हो। तुम्हीं मायासे स्वयं ब्रह्मा, शंकर और शेष बने हुए हो। मनु, मुनि, वेद और सृष्टिपालकोंके समुदाय तुम्हारे कलांशसे तथा दिक्पाल और ग्रह आदि कलासे उत्पन्न हुए हैं। तुम स्वयं ही पुरुष, स्वयं स्त्री, स्वयं नपुंसक, स्वयं

* तपसां फलमाप्नोति श्रीकृष्णस्मरणेन च॥
यतो भक्तिश्च न भवेत् श्रीकृष्णे परमात्मनि। स गुरुः परमो वैरी करोति जन्म निष्फलम्॥
(११३। १८-१९)

कार्य और कारण तथा स्वयं जन्म लेनेवाले और जनक हो*। यन्त्रके गुण-दोष यन्त्रीपर ही आरोपित होते हैं—ऐसा श्रुतिमें सुना गया है; अतः ये सभी प्राणी यन्त्र हैं और तुम यन्त्री हो। सब कुछ तुममें ही प्रतिष्ठित है। जगद्गुरो! मैं तुम्हारा दुर्बुद्धि एवं मूढ़ द्वारपाल हूँ; अतः मेरा अपराध क्षमा करो और ब्रह्मशापसे मेरी रक्षा करो, रक्षा करो।

यों कहकर जय और विजय (शिशुपाल और दन्तवक्र) चल पड़े और शीघ्र ही आनन्दपूर्वक वे दोनों वैकुण्ठके अभीष्ट द्वारपर जा पहुँचे। शिशुपालके इस स्तवनसे वहाँ उपस्थित सभी लोग आश्चर्यचकित हो गये। उन लोगोंने श्रीकृष्णको परिपूर्णतम परमेश्वर माना। तत्पश्चात् राजसूययज्ञ पूर्ण कराकर ब्राह्मणोंको भोजनसे तृप्त किया। कौरवों और पाण्डवोंमें भेद उत्पन्न करके युद्ध कराया। इस प्रकार कृपालु भगवान्‌ने पृथ्वीका भार हल्का किया। पुनः द्वारकामें जाकर चिरकालतक निवास किया और राजा उग्रसेनकी आज्ञासे मृतवत्सा ब्राह्मणीके पुत्रोंको जीवन-दान दिया। उन्होंने उन पुत्रोंको मृतक-स्थानसे लाकर उनकी माताको समर्पित कर दिया। यह देखकर देवकीको परम संतोष हुआ; उन्होंने भी अपने मरे हुए पुत्रोंको लानेकी याचना की। तब श्रीकृष्णने अपने सहोदर भाइयोंको मृतक-स्थानसे लाकर माताको सौंप दिया।

तदनन्तर जो अपने घरसे शरणार्थी होकर द्वारकामें आये थे; उन सुदामा ब्राह्मणकी दरिद्रताको तत्काल ही दूर कर दिया। भक्तवत्सल भगवान्‌ने भक्तके चिउड़ोंकी कनीका स्वयं भोग लगाकर उन्हें सात पीढ़ीतक स्थिर रहनेवाली राजलक्ष्मी प्रदान की। जैसे इन्द्र अमरावतीमें राज्य करते हैं, उसी प्रकार उनका भूतलपर राज्य हो गया। वे ऐसे धनाढ्य हो गये, मानो धनके स्वामी कुबेर ही हों। तत्पश्चात् उन्होंने सुदामाको निश्चल हरिभक्ति, अपनी परम दुर्लभ दासता और अविनाशी गोलोकमें यथेष्ट उत्तम पद प्रदान किया।

मुने! फिर पारिजात-हरणके साथ-साथ उन्होंने इन्द्रके गर्वको दूर किया, सत्यभामासे मनोवाञ्छित पुण्यक-व्रतका अनुष्ठान कराया और सर्वत्र नित्य-नैमित्तिक कर्मोंकी उन्नति की। उस व्रतमें अपने-आपको महर्षि सनत्कुमारके प्रति दक्षिणारूपमें समर्पित कर दिया। ब्राह्मणोंको भोजनसे तृप्त करके उन्हें हर्षपूर्वक रत्नोंकी दक्षिणा दी। इस प्रकार सत्यभामाके उत्कृष्ट मानका सब ओर विस्तार किया। मुने! रुक्मिणी तथा अन्यान्य रानियोंके नये-नये सौभाग्यको, वैष्णवों, देवताओं और ब्राह्मणोंके पूजनको तथा नित्य-नैमित्तिक कर्मोंको सर्वत्र बढ़ाया। उन प्रभुने उद्धवको परम आध्यात्मिक ज्ञान प्रदान किया। रणके अवसरपर अर्जुनको गीता सुनायी। कृपालु प्रभुने कृपापरवश हो पृथ्वीको निष्कण्टक करके युधिष्ठिरको राजलक्ष्मी प्रदान की। दुर्गाको वैष्णवी ग्रामदेवताके स्थानपर नियुक्त किया। रमणीय रैवतक पर्वतपर अमूल्य रत्ननिर्मित मन्दिरमें पार्वतीकी प्रसन्नताके लिये नाना प्रकारके नैवेद्यों और मनोहर धूप-दीपोंद्वारा करोड़ों हवनोंसे संयुक्त शुभ यज्ञ कराया। उसमें बहुत-से ब्राह्मणोंको भोजन कराया गया। परमेश्वर गणेशका पूजन किया; उस समय उन्हें नैवेद्यरूपमें अत्यन्त स्वादिष्ट, परम तुष्टिकारक तिलोंके पाँच लाख लड्डू, स्वस्तिकाकार अमृतोपम सात लाख मोदक, शक्करकी सैकड़ों राशियाँ, पके हुए केलेके फल, दस लाख पूये, मिष्टान्न, मनोहर स्वादिष्ट खीर, पूरी-कचौड़ी, घी, माखन, दही और अमृत-तुल्य दूध निवेदित किया। फिर धूप, दीप, पारिजात-पुष्पोंकी माला, सुगन्धित चन्दन, गन्ध और अग्निशुद्ध वस्त्र प्रदान किया। करोड़ों

* स्वयं पुमान् स्वयं स्त्री च स्वयमेव नपुंसकः। कारणं च स्वयं कार्यं जन्यश्च जनकः स्वयम्॥ (११३। ३१)

हवनोंसे युक्त शुभ यज्ञ कराया, ब्राह्मणोंको जिमाया और गणेश्वरका स्तवन किया। उस समय दस प्रकारके बाजे बजवाये। साम्बने कुष्ठ-रोगके विनाशके लिये पूरे वर्षभरतक अनुपम उपहारोंद्वारा सूर्यका पूजन किया, उस समय मातासहित साम्बको हविष्यान्नका भोजन कराया गया। तब स्वयं सूर्यदेवने प्रकट होकर साम्बको वरदान दिया और अपना स्तोत्र प्रदान किया। (अध्याय ११३)

अनिरुद्ध और उषाका पृथक्-पृथक् स्वप्नमें दर्शन, चित्रलेखाद्वारा अनिरुद्धका अपहरण, अन्तःपुरमें अनिरुद्ध और उषाका गान्धर्व-विवाह

श्रीनारायण कहते हैं—नारद! प्रद्युम्न श्रीकृष्णके पुत्र थे, जो महान् बल-पराक्रमसे सम्पन्न थे। उनके पुत्र अनिरुद्ध थे, जो विधाताके अंशसे उत्पन्न हुए थे। अनिरुद्ध एक दिन निर्जन स्थानमें पुष्प और चन्दनचर्चित पलंगपर सोये हुए थे। उन्होंने स्वप्नमें खिले हुए पुष्पोंके उद्यानमें सुगन्धिकुसुम-शय्यापर सोयी हुई एक अनन्य सुन्दरी नवयुवती रमणीको मधुर-मधुर मुस्कराते देखा। तब अनिरुद्धने 'मैं त्रिलोकीनाथ श्रीकृष्णका पौत्र तथा कन्दर्पका पुत्र हूँ'—यों अपना परिचय देते हुए उस तरुणीसे पतिरूपमें स्वीकार करनेका अनुरोध किया। इसपर उस तरुणीने यथाविधि विवाहिता यज्ञपत्नी अर्थात् अग्निकी साक्षीमें जिससे विधिवत् विवाह किया जाता है और कामवृत्तिको चरितार्थ करनेके लिये स्वीकृत नैमित्तिक पत्नीका शुभाशुभ भेद बतलाते हुए कहा—

'मैं बाणासुरकी कन्या हूँ, मेरा नाम उषा है। त्रैलोक्यविजयी बाण शंकरजीके किंकर हैं और शंकर लोकोंके स्वामी हैं। नारी तीनों कालोंमें पराधीन रहती है, वह कभी स्वतन्त्र नहीं होती। जो नारी स्वतन्त्र होती है, वह नीच कुलमें उत्पन्न हुई पुंश्चली होती है। पिता ही कन्याको योग्य वरके हाथ सौंपता है। कन्या वरकी याचना नहीं करती—यही सनातन धर्म है। प्रभो! तुम मेरे योग्य हो और मैं तुम्हारे योग्य हूँ; अतः यदि तुम मुझे पाना चाहते हो तो बाणासुर, शम्भु अथवा सती पार्वतीसे मेरे लिये प्रार्थना करो।' यों कहकर वह सती-साध्वी सुन्दरी अन्तर्धान हो गयी। मुने! तब कामके वशीभूत हुए कामात्मज अनिरुद्धकी नींद सहसा टूट गयी। जागनेपर उन्हें स्वप्नका ज्ञान हुआ। उस समय उनका अन्तःकरण कामसे व्यथित था और वे अपनी उस प्राणवल्लभाको न देखकर व्याकुल और अशान्त हो रहे थे। इस प्रकार पुत्रको उद्विग्न तथा विकल देखकर सती देवकी, रुक्मिणी तथा अन्यान्य सभी महिलाओंने भगवान् श्रीकृष्णको सूचित किया। मधुसूदन श्रीकृष्ण तो परिपूर्णतम तथा सम्पूर्ण तत्त्वोंके ज्ञाता ही ठहरे, वे उनकी बात सुनकर ठठाकर हँस पड़े और बोले।

श्रीभगवान्‌ने कहा—महिलाओ! भगवती दुर्गाने बाणासुरकी कन्याका शीघ्र विवाह हो, इसके लिये अनिरुद्धको स्वप्नमें उसे दिखाया है। अब मैं बाणकन्या उषाको स्वप्नमें अनिरुद्धके दर्शन कराता हूँ। तुम लोग अनिरुद्धके लिये कोई चिन्ता न करो। तदनन्तर श्रीकृष्णने स्वप्नमें उषाको सर्वाङ्गसुन्दर कोटि-कोटि-कन्दर्प-दर्पहारी अनिरुद्धके दर्शन कराये। स्वप्न टूटते ही उषा अत्यन्त व्याकुल हो गयी। उसकी अन्यमनस्कता और विषण्णता देखकर सखी चित्रलेखाने कहा—

'कल्याणि! चेत करो। तुम्हारा यह नगर दुर्लङ्घ्य है। इसमें साक्षात् शम्भु और शिवा वास करती हैं; तब भला, तुम्हें यह भयंकर भय कहाँसे उत्पन्न हो गया? सखी! शिव ही मङ्गलोंके वासस्थान हैं; अतः उनका स्मरणमात्र कर लेनेसे सभी अरिष्ट दूर भाग जाते हैं और सर्वत्र मङ्गल ही होता है। दुर्गतिनाशिनी दुर्गाका ध्यान करनेसे

सभी क्लेश नष्ट हो जाते हैं। वे सर्वमङ्गलमङ्गला हैं; अतः ध्यानकर्ताको मङ्गल प्रदान करती हैं।' चित्रलेखाका कथन सुनकर सती उषा फूट-फूटकर रोने लगी और बाण शंकरके निकट ही विषाद करते हुए मूर्च्छित हो गये। यह देखकर शंकर, दुर्गा, कार्तिकेय और गणेश हँसने लगे।

तब गणेश्वर बोले—स्वयं देवी पार्वतीने जाकर स्वप्नमें कामदेव-नन्दन अनिरुद्धको काममत्त बनाया है और इस समय ये शम्भुके वामपार्श्वमें मूक बनी बैठी हैं। भगवान् श्रीहरि तो सर्वज्ञ ही हैं; उन ईश्वरने सारा रहस्य जानकर बाणकन्या उषाको स्वप्नमें सुन्दर-वेषधारी पुरुषका दर्शन कराया है। अतः अब सुयोगिनी चित्रलेखा खेल-ही-खेलमें प्रमत्त अनिरुद्धको लानेके लिये शीघ्र ही द्वारकापुरीको प्रस्थान करे।

ऐसा सुनकर महादेवजीने गणेशसे कहा—बेटा! जिस प्रकार यह शुभ कार्य बाणके

श्रवणगोचर न हो, वैसा ही प्रयत्न तुम्हें करना चाहिये।' इधर चित्रलेखा तुरंत ही द्वारकाको चल पड़ी। श्रीहरिका वह भवन यद्यपि सबके लिये दुर्लङ्घ्य था, तथापि वह अनायास ही उसमें प्रवेश कर गयी। वहाँ अनिरुद्ध नींदमें सो रहे थे। उसने योगबलसे हर्षपूर्वक उस नींदमें मते हुए बालकको उठाकर रथपर बैठा लिया। मुने! भद्रा चित्रलेखा मनके समान वेगशालिनी थी। वह उस बालकको लेकर शङ्खध्वनि करके दो ही घड़ीमें शोणितपुर जा पहुँची। तदनन्तर अनिरुद्धको न देखकर श्रीकृष्णके महलोंमें उदासी छा गयी। तब सर्वतत्त्ववेत्ता सर्वज्ञ श्रीकृष्णने सबको आश्वासन देकर शोणितपुरको सेनासहित प्रयाण किया।

इधर महर्षि दुर्वासाकी शिष्या योगिनी चित्रलेखाने—जो नारियोंमें धन्या, पुण्या, मान्या, शान्ता तथा योगसिद्ध होनेके कारण सिद्धिदायिनी थी, माताका स्मरण करके रोते हुए उस बालकको समझाया। फिर स्नान कराकर उसे पुष्पमाला और चन्दनसे विभूषित किया। इस प्रकार उस बालकका सुन्दर वेष बनाकर वह कन्याके अन्तःपुरमें—जो रक्षकोंद्वारा सुरक्षित था—योगबलसे प्रविष्ट हुई। वहाँ आहारका परित्याग कर देनेसे जिसका उदर सट गया था और जिसे सखियाँ चारों ओरसे घेरे हुए थीं; उस उषाको सुरक्षित देखकर शीघ्र ही उसे जगाया। उस समय उषाको भलीभाँति स्नान कराया गया और वस्त्र, माला, चन्दन तथा माङ्गलिक सिन्दूर-पत्रकोंद्वारा उसका शृङ्गार किया गया। फिर माहेन्द्र नामक शुभ मुहूर्त आनेपर उसने सखियोंकी गोष्ठीमें उन दोनोंका परस्पर वार्तालाप कराया। पतिको देखकर पतिव्रता उषाका कष्ट दूर हो गया और वह उनके साथ विहार करने लगी। तब प्रद्युम्ननन्दन अनिरुद्धने गान्धर्वविवाहकी विधिसे उसका पाणिग्रहण कर लिया। विप्रवर! इस प्रकार जब बहुत दिन बीत गये; तब रक्षकद्वारा राजा बाणासुरको यह समाचार सुननेको मिला।

(अध्याय ११४)

कन्याकी दुःशीलताका समाचार पाकर बाणका युद्धके लिये उद्यत होना; शिव, पार्वती, गणेश, स्कन्द और कोटरीका उसे रोकना; परंतु बाणका स्कन्दको सेनापति बनाकर युद्धके लिये नगरके बाहर निकलना, उषाप्रदत्त रथपर सवार होकर अनिरुद्धका भी युद्धोद्योग करना, बाण और अनिरुद्धका परस्पर वार्तालाप

श्रीनारायण कहते हैं—नारद! तदनन्तर अन्तःपुरके रक्षकोंने भयभीत हो स्कन्द, गणेश और पार्वतीको दण्डकी भाँति भूमिपर लेटकर प्रणाम किया और अपने स्वामी बाणसे सारा वृत्तान्त कह सुनाया। उसे सुनकर बाणको बड़ी लज्जा हुई और वह क्रुद्ध हो उठा। उस समय शम्भु, गणेश, स्कन्द, पार्वती, भैरवी, भद्रकाली, योगिनियाँ, आठों भैरव, एकादश रुद्र, भूत, प्रेत, कूष्माण्ड, बेताल, ब्रह्मराक्षस, योगीन्द्र, सिद्धेन्द्र, रुद्र, चण्ड आदि तथा माताकी भाँति हितैषिणी करोड़ों ग्रामदेवियाँ—ये सभी उसके हितके लिये बराबर मना कर रहे थे; फिर भी उसने युद्ध करनेका ही विचार निश्चित किया। तब शंकरजी अपनेको पण्डित माननेवाले मूर्ख बाणसे हितकारक, सत्य, नीतिशास्त्रसम्मत और परिणाममें सुखदायक वचन बोले।

श्रीमहादेवजीने कहा—बाण! मैं इस पुरातनी कथाका वर्णन करता हूँ, सुनो। स्वयं परमेश्वर पृथ्वीका भार उतारनेके लिये भारतवर्षमें सभी नरेशोंका संहार करके द्वारकामें विराजमान हैं। जिनके रोमोंमें सारे विश्व वर्तमान हैं, उन वासुके भी वे ईश्वर हैं; इसीलिये विद्वान् लोग उन्हें 'वासुदेव' ऐसा कहते हैं। स्वयं भगवान् चक्रपाणि भूतलपर ब्रह्माके भी विधाता हैं। वे ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदिके स्वामी हैं; प्रकृतिसे परे, निर्गुण, इच्छारहित, भक्तानुग्रहमूर्ति, परब्रह्म, परम धाम और देहधारियोंके परमात्मा हैं। जिनके शरीरसे निकल जानेपर जीव शवतुल्य हो जाता है; उनके साथ तुम्हारा संग्राम कैसे सम्भव हो सकता है? अनिरुद्ध उन्हींके पुत्र (पौत्र) हैं। वे महान् बल-पराक्रमसे सम्पन्न हैं और क्षणभरमें अकेले ही तीनों लोकोंका संहार करनेमें समर्थ हैं। जितने महारथी बलवान् देवता और दैत्य हैं, वे सभी अनिरुद्धकी सोलहवीं कलाके भी बराबर नहीं हैं। जिन दो व्यक्तियोंमें समान धन हो और जिनमें बलकी भी समानता हो; उन्हीं दोनोंमें विवाह और मैत्री शोभा देती है। बलवान् और निर्बलका सम्बन्ध उचित नहीं होता। तुम्हारे पिता महारथी बलि दैत्योंके सारभूत और श्रीहरिकी कला थे। उन्हें भी जिसने क्षणभरमें ही सुतल-लोकको भेज दिया; उन्हीं वृन्दावनेश्वर परम पुरुष परिपूर्णतम परमात्मा श्रीकृष्णके सभी जीव अंश-कलाएँ हैं।

पार्वतीजी बोलीं—बाण! ब्रह्मा, महेश, शेष और ध्याननिष्ठ भक्त रात-दिन अपने हृदयकमलमें उन सनातन भगवान्‌का ध्यान करते रहते हैं। सूर्य, गणेश और योगीन्द्रोंके गुरु-के-गुरु शिव उन ऐश्वर्यशाली सनातन परमात्माके ध्यानमें तल्लीन रहते हैं। सनत्कुमार, कपिल, नर तथा नारायण अपने हृदय-कमलमें उन सनातन भगवान्‌का ध्यान लगाते हैं। मनु, मुनीन्द्र, सिद्धेन्द्र और योगीन्द्र ध्यानद्वारा अप्राप्य उन सनातन भगवान्‌के ध्यानमें निमग्न रहते हैं। जो सबके आदि, सबके कारण, सर्वेश्वर और परात्पर हैं; उन सनातन भगवान्‌का सभी ज्ञानी ध्यान करते हैं।

तदनन्तर गणेश और स्कन्दने भी बाणको श्रीकृष्णकी महिमा भलीभाँति समझाकर युद्ध न करके अनिरुद्धके साथ उषाका विवाह कर देनेके लिये अनुरोध किया। अन्तमें कोटरी बोली—'वत्स! धर्मानुसार मैं भी तुम्हारी माता हूँ; अतः जो कुछ

कहती हूँ, उसे श्रवण करो। दुष्ट पुत्रसे भी माता-पिताको पद-पदपर दुःख ही होता है। दूसरेके द्वारा ग्रहण की गयी वह कन्या उषा अब दूसरेको देनेके योग्य नहीं ही है; अतः जो श्रीकृष्णके पौत्र और प्रद्युम्नके पुत्र हैं; उन महान् बलशाली अनिरुद्धको स्वेच्छानुसार अपनी कन्या दान कर दो। इससे तुम भारतवर्षमें अपनी सात पीढ़ियोंके साथ पावन हो जाओगे। फिर भूतलपर महान् यशकी प्राप्तिके लिये अपना सर्वस्व दहेजमें समर्पित कर दो। अन्यथा माधव युद्धस्थलमें सुदर्शन-चक्रद्वारा तुम्हारा वध कर डालेंगे। उस समय कौन तुम्हारी रक्षा कर सकेगा?'

मुने! कोटरीकी बात सुनकर अभिमानी दैत्यश्रेष्ठ बाण कुपित हो उठा। वह रथपर आरूढ़ हो उस स्थानके लिये प्रस्थित हुआ जहाँ श्रीहरिके पौत्र अनिरुद्ध वर्तमान थे। उस समय भक्तवत्सल शंकरकी आज्ञासे स्कन्द सेनापति होकर उसके साथ चले। स्वयं शिव और गणेशने बाणके लिये स्वस्तिवाचन किया। पार्वती तथा कोटरीने उसे शुभाशीर्वाद दिया। आठों भैरव और एकादश रुद्र—ये सभी हाथोंमें शस्त्र धारण करके युद्धके लिये तैयार हुए। इसी बीच एक दूतने, जिसे पार्वती देवी तथा बाणपत्नीने भेजा था, तुरंत ही जाकर अनिरुद्धको भी यह समाचार सूचित कर दिया।

दूत बोला—अनिरुद्ध! उठो और पार्वतीका यह मङ्गल-वचन श्रवण करो। (उन्होंने कहा है—) 'वत्स! कवच धारण कर लो और बाहर निकलकर युद्ध करो।' यह सुनकर उषा भयभीत हो गयी; वह डरके मारे रोती हुई सती पार्वतीका ध्यान करके बोली—'महामाये! मेरे मनोनीत प्राणेश्वरकी रक्षा करो, रक्षा करो। यद्यपि ये निर्भय हैं; तथापि इस महाभयंकर संग्राममें इन्हें अभयदान दो। तुम्हीं जगत्की माता हो; अतः तुम्हारा सबपर समान स्नेह है।'

तत्पश्चात् ऐश्वर्यशाली अनिरुद्धने कवच पहनकर हाथमें शस्त्र धारण किये और उषाद्वारा दिये गये रथको पाकर वे उसपर हर्षपूर्वक आरूढ़ हुए। शिविरसे बाहर निकलकर उन्होंने बाणको देखा, जो कवच पहनकर हाथोंमें शस्त्र धारण किये हुए था। उसके नेत्र क्रोधसे लाल हो रहे थे। अनिरुद्धको देखकर बाण क्रोधसे भर गया। वह उस घोर संग्रामके मध्य प्रज्वलित होता हुआ विषोक्तियाँ उगलने लगा। उसने भाँति-भाँतिसे श्रीकृष्णके चरित्रपर दोषारोपण करके उनकी निन्दा की और अनिरुद्धने उसका विवेकपूर्ण खण्डन करके श्रीकृष्णकी महिमाका वर्णन किया।

(अध्याय ११५)

बाण और अनिरुद्धके संवाद-प्रसङ्गमें अनिरुद्धद्वारा द्रौपदीके पाँच पति होनेका वर्णन, बाणसेनापति सुभद्रका अनिरुद्धके साथ युद्ध और अनिरुद्धद्वारा उसका वध

बाणने कहा—अनिरुद्ध! तुम बड़े बुद्धिमान् हो। तुम्हारा कथन सत्य ही है। शम्भुने भी ऐसा ही बतलाया था। अब तुमने जो यह कहा है कि महाभागा द्रौपदी शंकरजीके वरदानसे पाँच पतियोंकी प्रिया थीं, वह वृत्तान्त विस्तारपूर्वक मुझसे वर्णन करो। साथ ही यह भी बतलाओ कि पहले शम्बरने तुम्हारी माता रतिका किस प्रकार अपहरण किया था? उसने देवताओंको पराजित कैसे किया था? और देवगणोंने किस तरह रतिको उसे प्रदान किया था?

अनिरुद्ध बोले—बाण! एक समयकी बात है। पञ्चवटीमें श्रीरघुनाथजी सीता और लक्ष्मणके साथ सरोवरमें स्नान करके उसके रमणीय तटपर बैठे हुए थे। उस समय हेमन्तका समय था;

अतः उन्होंने सीतासे कहा—'प्रिये! इस समय अत्यन्त स्वादिष्ट निर्मल जल, अन्न, मनोहर व्यञ्जन तथा सारी वस्तुएँ अत्यन्त शीतल हैं।' यों कहकर उन्होंने फल-संग्रह किया और हर्षपूर्वक उन्हें सीताको प्रदान किया। तत्पश्चात् लक्ष्मणको देकर पीछे स्वयं प्रभुने भोग लगाया। लक्ष्मणने वह फल और जल ले तो लिया, परंतु खाया नहीं; क्योंकि वे सीताका उद्धार करनेके लिये मेघनादका वध करना चाहते थे। (उनको यह पता था कि) जो चौदह वर्षतक न तो नींद लेगा और न भोजन करेगा; वही योगी पुरुष उस रावणकुमार मेघनादको मार सकेगा। इसी बीच कमललोचन रामका दर्शन करनेके लिये कृपानिधि अग्नि ब्राह्मणका वेष धारण करके वहाँ आये और कर्णकटु भविष्य-वचन कहने लगे।

अग्निदेव बोले—महाभाग राम! मेरी बात सुनो और सीताकी भलीभाँति रक्षा करो; क्योंकि प्राक्तन कर्मवश दुर्निवार्य एवं दुष्ट राक्षस रावण सात दिनके भीतर ही जानकीको हर ले जायगा। भला, विधाताने जिस प्राक्तन कर्मको लिख दिया है; उसे कौन मिटा सकता है? चारों देवताओंने भी यही कहा है कि दैवसे बढ़कर श्रेष्ठ दूसरा कोई नहीं है।

तब श्रीरामजीने कहा—अग्निदेव! तब तो सीताको आप अपने साथ लेते जाइये और उसकी छाया यहीं रहेगी; क्योंकि पत्नीके बिना किया हुआ कर्म सभीके लिये निन्दित होता है। तब अग्निदेव रोती हुई सीताको साथ लेकर चले गये और सीताके सदृश जो छाया थी; वह रामके संनिकट रहने लगी। पूर्वकालमें रावणने खेल-ही-खेलमें उसी छायाका हरण किया था और श्रीरामने भाई-बन्धुओंसहित उस रावणका वध करके उस छायाका ही उद्धार किया था। अग्नि-परीक्षाके अवसरपर जो छाया अग्निमें प्रविष्ट हुई थी; उस छायाको अपने संरक्षणमें रखकर अग्निने रामको असली जानकी लौटा दी। तब श्रीराम जानकीको लेकर हर्षपूर्वक अपने आश्रमको चले गये और छाया दुःखित हृदयसे अग्निके पास रहने लगी। वही छाया नारायण-सरोवरमें जाकर तप करने लगी। उसने सौ दिव्य वर्षोंतक शंकरजीके लिये घोर तपस्या की; तब शंकरजी प्रकट होकर उससे बोले—'भद्रे! वर माँगो।' वह पतिके दुःखसे दुःखी थी; अतः व्यग्रतापूर्वक शिवजीसे बोली। उसने उस व्यग्रतामें ही त्रिनेत्रधारी शिवजीसे '**पतिं देहि**'—पति दीजिये यों पाँच बार वर माँगा। तब सम्पूर्ण सम्पत्तियोंके प्रदाता शिव प्रसन्न होकर उसे वर देते हुए बोले।

श्रीमहादेवजीने कहा—साध्वि! तुमने व्याकुल होकर '**पतिं देहि**'—पति दीजिये यों पाँच बार कहा है; अतः श्रीहरिके अंशभूत पाँच इन्द्र तुम्हारे पति होंगे। वे ही सभी पाँचों इन्द्र इस समय पाँच पाण्डव हुए हैं और वह छाया द्रौपदी-रूपमें यज्ञकुण्डसे उत्पन्न हुई है। यही छाया कृतयुगमें वेदवती, त्रेतामें जनकनन्दिनी और द्वापरमें द्रौपदी हुई है; इसी कारण यह त्रिहायणी कृष्णा कहलाती है। यह वैष्णवी तथा श्रीकृष्णकी भक्त है; इसलिये भी कृष्णा कही जाती है। वही पीछे चलकर महेन्द्रोंकी स्वर्गलक्ष्मी होगी। राजा द्रुपदने कन्याके स्वयंवरमें उसे अर्जुनको दिया। वीरवर अर्जुनने मातासे पूछा—'माँ! इस समय मुझे एक वस्तु मिली है।' तब माताने अर्जुनसे कहा—'उसे सभी भाइयोंके साथ बाँटकर ग्रहण करो।' इस प्रकार पहले शम्भुका वरदान था ही, पीछे माता कुन्तीकी भी आज्ञा हो गयी—इसी कारण पाँचों पाण्डव द्रौपदीके पति हुए। ये पाँचों पाण्डव चौदह इन्द्रोंमेंसे पाँच इन्द्र हैं।

माताद्वारा भर्त्सना किये जानेपर शंकरजीने मेरी माता रतिको शाप देते हुए कहा—'रति! तुम्हारा पति शंकरकी क्रोधाग्निसे जलकर भस्म हो जायगा। इस समय तुम शापित होकर दैत्यके

अधीन होओगी। शम्बरासुर इन्द्रसहित देवताओंको जीतकर तुम्हें हर ले जायगा।' यों कहकर उन्होंने पुनः वरदान भी दिया—'तुम्हारा सतीत्व नष्ट नहीं होगा। जबतक तुम्हारा पति जीवित नहीं हो जाता, तबतक तुम शम्बरासुरको अपनी छाया देकर उसके घरमें वास करो।' दैत्येन्द्र! इस प्रकार मैंने तुमसे वह सारा पुरातन इतिहास कह सुनाया; अब देवोंके गुप्त चरित्रको श्रवण करो।

इसी समय बाणका प्रधान सेनापति महाबली सुभद्रने, जो कुम्भाण्डका भाई, बलसम्पन्न और महारथी था, शस्त्रोंसे लैस होकर समरभूमिमें बाणकी निर्भर्त्सना करके श्रीकृष्णपौत्र अनिरुद्धपर प्रलयाग्निकी भाँति चमकीला त्रिशूल चलाया; परंतु प्रद्युम्नकुमारने एक अर्धचन्द्रद्वारा उस शूलके टुकड़े-टुकड़े कर दिये। तब सुभद्रने सैकड़ों सूर्योंके समान प्रभावाली शक्ति फेंकी। अनिरुद्धने वैष्णवास्त्रद्वारा उस शक्तिको भी काट गिराया। फिर तो घोर संग्राम आरम्भ हो गया। अनिरुद्धने सुभद्रको मार गिराया। तदनन्तर बाणके साथ भयंकर युद्ध हुआ। जब अनिरुद्ध बाणासुरका वध करनेको उद्यत हुए, तब कार्तिकेयने उसे बचा लिया। फिर कार्तिकेयके साथ उनका महान् संग्राम हुआ।

(अध्याय ११६)

गणेश-शिव-संवाद

श्रीनारायण कहते हैं—नारद! इसी समय गणेशने शिवजीके स्थानपर जाकर उन महेश्वरको नमस्कार किया और बाण-अनिरुद्धका युद्ध, सुभद्रका वध, स्कन्द और अनिरुद्धका युद्ध तथा अनिरुद्धका प्रबल पराक्रम—यह सारा वृत्तान्त क्रमशः पृथक्-पृथक् कह सुनाया। गणेशका कथन सुनकर भगवान् शंकर हँस पड़े और कोमल वाणीद्वारा परम गुप्त एवं वेदसम्मत वचन बोले।

श्रीमहादेवजीने कहा—महाभाग गणेश्वर! मेरा वचन, जो हितकारक, तथ्य, नीतिका साररूप तथा परिणाममें सुखदायक है, उसे श्रवण करो। असंख्य विश्वोंका समुदाय, कृष्णकुमार प्रद्युम्न, अनिरुद्ध तथा जो कार्य और कारणोंका कारण है, वह सब कुछ श्रीकृष्णको ही जानो। गणेश्वर! ब्रह्मासे लेकर तृणपर्यन्त सारा जगत् सनातन भगवान् श्रीकृष्णका स्वरूप है—इसे सत्य समझो। जो गोलोकमें दो भुजाधारी, शान्त, राधाके प्रियतम, मनोहर रूपवाले, शिशुरूप, गोप-वेषधारी, परिपूर्णतम प्रभु हैं; गोपियों, गोपसमुदायों तथा कामधेनुओंसे घिरे रहते हैं; पवित्र रमणीय वृन्दावनके रासमण्डलमें जो हाथमें मुरली लिये विचरते रहते हैं; ब्रह्मा, शिव, शेष जिनकी वन्दना करते हैं; जो शैलराज शतशृङ्गपर वटकी शान्त छायामें तथा भाण्डीरके निकट विरजा नदीके निर्मल तटपर स्थित गोष्ठमें विहार करते हैं; जिनके शरीरका वर्ण नूतन जलधरके समान श्याम है, पीताम्बरद्वारा जिनकी उसी प्रकार शोभा होती है, जैसे मेघोंकी नयी घटा बिजलीसे सुशोभित होती है। उन सबका गोलोकस्थित रासमण्डलमें आविर्भाव होता है। रमणीय गोकुल तथा पुण्य वृन्दावनमें जितने जीव हैं, वे सभी उस परम पुरुषकी अंशकलाएँ हैं; किंतु श्रीकृष्ण स्वयं भगवान् हैं। परिपूर्णतम काम ब्रह्मशापके कारण अपनेको भूल गया है। अनिरुद्ध उसी कामके पुत्र हैं, जो महान् बल-पराक्रमसे सम्पन्न हैं। इस अत्यन्त भयंकर महायुद्धमें मैंने ही स्कन्दको भेजा है। इस संग्राममें बाण मर चुका था; परंतु उस स्कन्दने ही उसे बचा लिया है। गणेश्वर! युद्धमें स्कन्द और अनिरुद्धकी समानता तो है,

किंतु आठों भैरव, एकादश रुद्र, आठ वसु, इन्द्र आदि ये देवगण, द्वादश आदित्य, सभी दैत्यराज, देवताओंके अग्रणी स्कन्द तथा गणसहित बाण—ये सभी संग्राममें अनिरुद्धको पराजित नहीं कर सकते। अनिरुद्ध स्वयं ब्रह्मा, प्रद्युम्न कामदेव, बलदेव स्वयं शेषनाग और श्रीकृष्ण प्रकृतिसे परे हैं। गणेश्वर! इस प्रकार यह सारा रहस्य मैंने तुम्हें बता दिया। तुम तो स्वयं ही शुभस्वरूप और विघ्नोंका विनाश करनेवाले हो; अतः बाणकी रक्षा करो। श्रीहरि अस्त्रश्रेष्ठ सुदर्शनको, जो अमोघ और करोड़ों सूर्योंके समान कान्तिमान् है, लेकर शीघ्र ही आयेंगे। (अध्याय ११७)

मणिभद्रका शिवजीको सेनासहित श्रीकृष्णके पधारनेकी सूचना देना, शिवजीका बाणकी रक्षाके लिये दुर्गासे कहना, दुर्गाका बाणको युद्धसे विरत होनेकी सलाह देना

श्रीनारायण कहते हैं—नारद! इस प्रकार गणेशको समझाकर शिवजी महलके भीतर गये। वहाँ दुर्गतिनाशिनी दुर्गा, भैरवी, भद्रकाली, उग्रचण्डा और कोटरी रमणीय सिंहासनोंपर विराजमान थीं। उन सबने सहसा उठकर जगदीश्वर शिवको नमस्कार किया। तत्पश्चात् गणेश, पराक्रमी कार्तिकेय, बाण, वीरभद्र, स्वयं नन्दी, सुनन्दक, महामन्त्री महाकाल, आठों भैरव, सिद्धेन्द्र, योगीन्द्र और एकादश रुद्र—ये सभी वहाँ आ गये। इसी बीच सिंहद्वारपर पहरा देनेवाला स्वयं मणिभद्र वहाँ आया और उन परमेश्वर शिवसे बोला।

मणिभद्रने कहा—महेश्वर! बलदेव, प्रद्युम्न, साम्ब, सात्यकि, महाराज उग्रसेन, स्वयं भीम, अर्जुन, अक्रूर, उद्धव और शक्रनन्दन जयन्त तथा जो विधिके भी विधाता हैं, जिनकी कान्ति करोड़ों कामदेवोंकी शोभाको छीने लेती है, वनमाला जिनकी शोभा बढ़ा रही है, सात गोप-पार्षद श्वेत चँवरोंद्वारा जिनकी सेवा कर रहे हैं, जो करोड़ों सूर्योंके समान कान्तिमान् अनुपम चक्र धारण करते हैं; वे परमेश्वर भगवान् श्रीकृष्ण बहुमूल्य रत्नोंके सारभागसे निर्मित परम रमणीय उत्तम रथमें कौमोदकी गदा, अमोघ शूल और विश्वसंहारकारी महाशङ्ख पाञ्चजन्य रखकर यादवोंकी असंख्य सेनाओंके साथ पधार गये हैं। प्रभो! बलदेवने हलके द्वारा लाखों मल्लोंका कचूमर निकाल दिया है और उद्यानोंकी चहारदीवारीको तोड़-फोड़ डाला है। वे द्वारपालोंका वध करके महाद्वारमें घुस आये हैं। ऐसा सुनकर महादेवजी उस सुर-समाजमें पार्वती, भद्रकाली, स्कन्द, गणपति, आठों भैरवों, एकादश रुद्रों, वीरभद्र, महाकाल, नन्दी तथा सभी नवों सेनापतियोंसे बोले।

श्रीमहादेवजीने कहा—सेनाध्यक्षो! गोलोक-नाथ भगवान् चक्रपाणि आ गये हैं। वे क्षणभरमें विश्व-समूहका विनाश कर सकते हैं; फिर इस नगरकी तो बात ही क्या है। अतः तुम सब लोग सभी उपायोंद्वारा यत्नपूर्वक बाणकी रक्षा करो। अब बाण लम्बोदर गणेशका स्मरण करके संग्रामभूमिको जाय। उसके दक्षिणभागमें स्कन्द, आगे-आगे गणेश्वर और वामभागमें आठों भैरव, एकादश रुद्र, स्वयं महारथी नन्दी, महाकाल, वीरभद्र तथा अन्यान्य सैनिक उसकी रक्षा करें। ऊर्ध्वभागमें दुर्गा, भद्रकाली, उग्रचण्डा और कोटरीको रहना चाहिये। दुर्गतिनाशिनी दुर्गे! बाणकी रक्षा करो। महाभागे! तुम्हीं श्रीकृष्णकी शक्ति हो; इसीलिये 'नारायणी' कही जाती हो। विष्णुमाये! तुम जगज्जननी तथा सम्पूर्ण मङ्गलोंकी भी मङ्गलस्वरूपा हो; अतः चक्रोंके साररूप

अमोघ सुदर्शनचक्रसे बाणको बचाओ; क्योंकि बाण मुझे गणेश, कार्तिकेय आदि सभीसे भी बढ़कर प्रिय है। अतः बाणके मस्तकपर तुम अपने चरणकमलकी रजके साथ-साथ अपना वरद हस्त स्थापित करो। शिवजीका कथन सुनकर दुर्गतिनाशिनी दुर्गा मुस्करायीं और समयोचित यथार्थ मधुर वचन बोलीं।

पार्वतीजीने कहा—बाण! तुम्हारे पास जो-जो उत्तम मणि, रत्न, मोती, माणिक्य और हीरे आदि हैं, उस सारे धनको तथा रत्नाभरणोंसे विभूषित अपनी कन्या उषाको रत्ननिर्मित आभूषणोंसे विभूषित परम श्रेष्ठ अनिरुद्धको आगे करके परमात्मा श्रीकृष्णको सौंप दो और इस प्रकार अपने राज्यको निष्कण्टक बना लो। भला, जिसके निकल जानेपर इन्द्रियोंसहित सभी प्राण विलीन हो जाते हैं, उस जीवका आत्माके साथ युद्ध कैसा? मैं ही शक्ति हूँ, ब्रह्मा मन हैं और स्वयं शिव ज्ञानस्वरूप हैं। शिवका त्याग करके देह तुरंत ही गिर जाता है और शवरूप हो जाता है। शिवजी! भला, संग्राममें सुदर्शनचक्रके तेजके सामने कौन ठहर सकता है? श्रीकृष्ण सबके परमात्मा, भक्तानुग्रहमूर्ति, नित्य, सत्य, परिपूर्णतम प्रभु हैं। गणेश और कार्तिकेय तथा उन दोनोंसे भी परे आप मेरे लिये प्रिय हैं और किंकरोंमें बाण प्रिय है; किंतु श्रीकृष्णसे बढ़कर प्यारा दूसरा कोई नहीं है। मैं ही वैकुण्ठमें महालक्ष्मी, गोलोकमें स्वयं राधिका, शिवलोकमें शिवा और ब्रह्मलोकमें सरस्वती हूँ। पूर्वकालमें मैं ही दैत्योंका संहार करके दक्षकन्या सती हुई, फिर वही मैं आपकी निन्दाके कारण शरीरका त्याग करके शैलकन्या पार्वती बनी। रक्तबीजके युद्धमें मैंने ही मूर्तिभेदसे कालीका रूप धारण किया था। मैं ही वेदमाता सावित्री, जनकनन्दिनी सीता और भारतभूमिपर द्वारकामें भीष्मक-पुत्री रुक्मिणी हूँ। इस समय दैववश सुदामाके शापसे मैं वृषभानुकी कन्या होकर प्रकट हुई हूँ और पुण्यमय वृन्दावनमें श्रीकृष्णकी धर्मपत्नी हूँ। आप तो स्वयं सर्वज्ञ सनातन भगवान् शिव हैं। भला, मैं आपको क्या समयोचित कर्तव्य बतला सकती हूँ।

(अध्याय ११८)

शिवजीका कन्या देनेके लिये बाणको समझाना, बाणका उसे अस्वीकार करना, बलिका आगमन और सत्कार, बलिका महादेवजीका चरणवन्दन करके श्रीभगवान्‌का स्तवन करना, श्रीभगवान्‌द्वारा बलिको बाणके न मारनेका आश्वासन

श्रीनारायण कहते हैं—नारद! पार्वतीकी बात सुनकर गणेश, कार्तिकेय, काली तथा स्वयं शिव उनकी प्रशंसा करने लगे। तदनन्तर जो परात्परा, ज्योतिःस्वरूपा, परमा, मूलप्रकृति और ईश्वरी हैं; उन जगज्जननी पार्वतीसे भगवान् शम्भु बोले।

श्रीमहादेवजीने कहा—देवेशि! तुमने जो यह कहा है कि परमात्माके साथ युद्ध करना अयुक्त तथा उपहासास्पद है; अतः बाण अपनी कन्या उषाको स्वर्णनिर्मित आभूषणोंसे विभूषित करके श्रीकृष्णको दे दे। यही समस्त कर्मोंमें सामञ्जस्य, यशस्कर और शुभदायक है। तुम्हारा यह सारा कथन वेदसम्मत है; परंतु बाण हिरण्यकशिपुका वंशज है; अतः यदि वह कन्या दे देता है और भयभीत होकर युद्धसे पराङ्मुख हो जाता है तो यह तुम्हारे लिये ही अकीर्तिकर है। इसलिये शिवे! रणशास्त्रविशारद बाण कवच धारण करके आगे चले; तत्पश्चात् हम लोग भी कवचसे सुसज्जित हो उसका अनुगमन करेंगे। पार्वतीसे यों कहकर शंकरजीने बाणसे कन्या

देनेके लिये कहा; किंतु उसने स्वीकार नहीं किया। तब दुर्गा उसे समझाने लगीं; परंतु उनकी उत्तम बात उसकी समझमें न आयी। इसी समय महाबली बलि—जो महान् धर्मात्मा, वैष्णवोंमें अग्रगण्य और परमार्थके ज्ञाता हैं—रत्ननिर्मित रथपर आरूढ़ हो उस मनोरमा सभामें आये। उस समय सात प्रयत्नशील दैत्य श्वेत चँवरोंद्वारा उनकी सेवा कर रहे थे और सात लाख दैत्येन्द्र उन्हें घेरे हुए थे। वे तुरंत ही रथसे उतरकर शिव, पार्वती, गणेश और कार्तिकेयको प्रणाम करके उस सभामें अवस्थित हुए। उन्हें निकट आया देखकर शंकरजीके अतिरिक्त अन्य सभी सभासद् उठ खड़े हुए। तब महादेवजी कुशल-प्रश्नके बाद उनसे मधुर वचन बोले।

श्रीमहादेवजीने कहा—भगवन्! तुम बड़े चतुर तथा सम्पूर्ण सम्पत्तियोंके प्रदाता हो। ऐसे वैष्णवोंके साथ समागम होना ही परम लाभ है; क्योंकि वैष्णवके स्पर्शमात्रसे तीर्थ भी पवित्र हो जाते हैं। पवित्र ब्राह्मण सभी आश्रमोंके लिये पूजनीय होता है। उसमें भी यदि ब्राह्मण वैष्णव हो तो उससे भी अधिक पूज्य माना जाता है। मैं वैष्णव ब्राह्मणसे बढ़कर पवित्र किसीको नहीं देखता। वह पवन, अग्नि और समस्त तीर्थोंसे भी अधिक पावन है। उससे देवता भी डरते हैं। उसके शरीरमें पाप उसी प्रकार नहीं ठहरते; जैसे अग्निमें पड़ा हुआ सूखा घास-फूस।

तब बलि बोले—जगन्नाथ! आप मेरी प्रशंसा क्यों कर रहे हैं? महेश्वर! मैं तो आपका भृत्य हूँ न? नाथ! आपने ही तो मुझे अत्यन्त दुर्लभ परम ऐश्वर्य प्रदान किया है। सुरेश्वर! आप सर्वरूप तथा सर्वत्र वर्तमान हैं। इस समय दैववश आपने वामन-रूप धारण करके मुझ भक्तसे ऐश्वर्य छीनकर इन्द्रको दे दिया है और मुझे सृष्टिके अधोभागमें स्थित सुतल-लोकमें स्थापित कर रखा है। अब मेरे औरस पुत्र बाणको, जिस प्रकार उसका कल्याण हो, शिक्षा दीजिये; क्योंकि आत्माके साथ युद्ध करना देवताओंमें भी निन्दित है। यों कहकर उन्होंने शिवजीको नमस्कार करके उनके चरणोंमें सिर रख दिया। उस समय उनका सारा शरीर पुलकित हो उठा। नेत्रोंमें आँसू छलक आये और वे अत्यन्त व्याकुल हो गये। तदनन्तर शुक्रद्वारा दिये गये एकादशाक्षर-मन्त्रका जप करके वे सामवेदोक्त स्तोत्रद्वारा परमेश्वरकी स्तुति करने लगे।

बलिने कहा—प्रभो! पूर्वकालमें माता अदितिदेवीकी प्रार्थना तथा व्रतके फलस्वरूप आपने वामन-रूप धारण करके मेरी वञ्चना की थी और सम्पत्तिरूपिणी महालक्ष्मीको मुझसे छीनकर मेरे पुण्यवान् भाई इन्द्रको, जो आपके भक्त हैं, दिया था। इस समय मेरा यह पुत्र बाण, जो शंकरजीका किङ्कर है; जिसकी भक्तोंके बन्धु उन शंकरजीने अपने पास रखकर रक्षा की है; माता पार्वतीने जिसका उसी भाँति पालन-पोषण किया है, जैसे माता अपने पुत्रका पालन करती है; उसी बाणकी सती-साध्वी युवती कन्याको (अनिरुद्धने) बलपूर्वक ग्रहण कर लिया

है और वे बाणको भी मारनेके लिये उद्यत थे; परंतु कार्तिकेयने उसे बचा लिया है। फिर आप भी अपने पौत्रका दमन करनेमें समर्थ बाणको मारनेके लिये पधारे हैं। जगदीश्वर! श्रुतिमें तो ऐसा सुना गया है कि आप सर्वात्माका सर्वत्र समभाव रहता है; फिर ऐसा व्यतिक्रम आप क्यों कर रहे हैं? भला, जिसका वध आप करना चाहते हैं, उसकी इस भूतलपर कौन रक्षा कर सकता है? सुदर्शनका तेज करोड़ों सूर्योंके समान परमोत्कृष्ट है। भला, किन देवताओंके अस्त्रसे उसका निवारण हो सकता है? जैसे सुदर्शन अस्त्रोंमें सर्वश्रेष्ठ है; उसी प्रकार आप भी समस्त देवताओंके परमेश्वर हैं। जैसे आप हैं; उसी तरह श्रीकृष्ण भी ब्रह्माके विधाता हैं। विष्णु सत्त्वगुणके आधार, शिव सत्त्वके आश्रयस्थान और स्वयं सृष्टिकर्ता पितामह रजोगुणके विधाता हैं। जो तमोगुणके आश्रय, एकादश रुद्रोंमें सर्वश्रेष्ठ, विश्वके संहार-कर्ता एवं महान् हैं; वे भगवान् कालाग्निरुद्र शंकरके अंश हैं। इनके अतिरिक्त अन्य रुद्रगण शंकरजीकी कलाएँ हैं। उन सबमें आप गुणरहित तथा प्रकृतिसे परे हैं। आप सबके परमात्मा हैं। सभी प्राणधारियोंके प्राण विष्णुके स्वरूप हैं; स्वयं ब्रह्मा मनरूप हैं और स्वयं शिव ज्ञानात्मक हैं। समस्त शक्तियोंमें श्रेष्ठ ईश्वरी प्रकृति बुद्धि है। समस्त देहधारियोंमें जो जीव है, वह आपके ही आत्माका प्रतिबिम्ब है। जीव अपने कर्मोंका भोक्ता है और स्वयं आप उसके साक्षी हैं। आपके चले जानेपर सभी उसी प्रकार आपका अनुगमन करते हैं जैसे राजाके चलनेपर उसके अनुगामी। आपके निकल जानेपर शरीर तुरंत धराशायी हो जाता है और शवरूप होकर अस्पृश्य बन जाता है; परंतु आपकी मायासे वञ्चित होनेके कारण बुद्धिमान् संतलोग इसे नहीं जान पाते। जो संत आपका भजन करते हैं; वे ही इस मायासे तर पाते हैं। त्रिगुणा प्रकृति, दुर्गा, वैष्णवी, सनातनी, परा नारायणी और ईशानी—ये सब आपकी मायाके स्वरूप हैं। इनसे पार पाना अत्यन्त कठिन है। प्रत्येक विश्वमें होनेवाले ब्रह्मा, विष्णु और शिव आपके ही अंश हैं। जैसे विश्वेश्वर श्रीकृष्ण गोकुलमें वास करते हैं; उसी तरह जो समस्त लोकोंके आश्रय हैं, वे महान् विराट् योगबलसे जलमें शयन करते हैं। वे ही भगवान् वासु हैं, जिनके परम देवता आप हैं; इसीसे 'वासुदेव' नामसे विख्यात हैं—ऐसा पुरातत्त्ववेत्ता कहते हैं। आप ही अपनी कलासे सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि, पवन, वरुण, कुबेर, यम, महेन्द्र, धर्म, शेष, ईशान तथा निर्ऋतिके रूपमें विराजमान हैं। मुनिसमुदाय, मनुगण, फलदायक ग्रह और समस्त चराचर जीव आपकी कलाके कलांशसे उत्पन्न हुए हैं। आप ही परम ज्योतिः-स्वरूप ब्रह्म हैं। योगीलोग आपका ही ध्यान करते हैं। आपके भक्तगण अपने अन्तःकरणमें आपका ही आदर करते तथा ध्यान लगाते हैं। (ध्यानका प्रकार यों है—)

जिनके शरीरका वर्ण नूतन जलधरके समान श्याम है, पीताम्बर ही जिनका परिधान है, जिनके प्रसन्नमुखपर मन्द मुस्कानकी छटा छायी हुई है, जो भक्तोंके स्वामी तथा भक्तवत्सल हैं, जिनका सर्वाङ्ग चन्दनसे अनुलिप्त है, जिनके दो भुजाएँ हैं, जो मुरली धारण किये हुए हैं, जिनकी चूड़ामें मयूरपिच्छ शोभा दे रहा है; जो मालतीकी माला, अमूल्य रत्ननिर्मित बाजूबंद और कंकणसे विभूषित हैं, मणियोंके बने हुए दोनों कुण्डलोंसे जिनका गण्डस्थल उद्भासित हो रहा है, जो रत्नोंके सारभागसे बनी हुई अँगूठी और बजती हुई करधनीसे सुसज्जित हैं, जिनकी आभा करोड़ों कामदेवोंका उपहास कर रही है, जिनके नेत्र शारदीय कमलकी शोभाको पराजित कर रहे हैं, जिनकी मुख-छवि शरत्पूर्णिमाके चन्द्रमाकी निन्दा कर रही है और प्रभा करोड़ों चन्द्रमाओंके समान

समुज्ज्वल है; करोड़ों-करोड़ों गोपियाँ मुस्कराती हुई जिनकी ओर निहार रही हैं, समवयस्क गोप-पार्षद श्वेत चँवर डुलाकर जिनकी सेवा कर रहे हैं, जिनका वेष गोपबालकके सदृश है; जो राधाके वक्ष:स्थलपर स्थित एवं ध्यानद्वारा असाध्य और दुराराध्य हैं; ब्रह्मा, शिव और शेष जिनकी वन्दना करते हैं और सिद्धेन्द्र, मुनीन्द्र तथा योगीन्द्र प्रणत होकर जिनका स्तवन करते हैं; जो वेदोंद्वारा अनिर्वचनीय, परस्वेच्छामय और सर्वव्यापक हैं एवं जिनका स्वरूप स्थूलसे स्थूलतम और सूक्ष्मसे सूक्ष्मतम है; जो सत्य, नित्य, प्रशस्त, प्रकृतिसे परे, ईश्वर, निर्लिप्त और निरीह हैं; उन सनातन भगवान्‌का इस प्रकार ध्यान करके वे पवित्र हो जाते हैं और पद्माद्वारा समर्चित चरणकमलोंमें कोमल दूर्वाङ्कुर, अक्षत तथा जल निवेदित करनेके लिये उत्सुक हो उठते हैं। भगवन्! वेद, सरस्वती, शेषनाग, ब्रह्मा, शम्भु, गणेश, सूर्य, चन्द्रमा, महेन्द्र और कुबेर—ये सभी आप परमेश्वरका स्तवन करनेमें समर्थ नहीं हैं; फिर अन्य जडबुद्धि जीवोंकी तो गणना ही क्या है। ऐसी दशामें मैं आप गुणातीत, निरीह, निर्गुण परमेश्वरकी क्या स्तुति कर सकता हूँ? नाथ! यह एक मूर्ख असुर है, सुर नहीं है; अत: आप इसे क्षमा करें। बलिका कथन सुनकर जगदीश्वर परिपूर्णतम भक्तवत्सल भगवान् श्रीहरि अपने उस भक्तसे बोले।

श्रीभगवान्‌ने कहा—वत्स! डरो मत। तुम मेरे द्वारा सुरक्षित अपने गृह सुतल-लोकको जाओ। मेरे वर-प्रसादसे तुम्हारा यह पुत्र भी अजर-अमर होगा। मैं इस मूर्ख अभिमानीके दर्पका ही विनाश करूँगा; क्योंकि मैंने प्रसन्नचित्तसे अपने तपस्वी भक्त प्रह्लादको ऐसा वर दे रखा है कि 'तुम्हारा वंश मेरेद्वारा अवध्य होगा।' मैं तुम्हारे पुत्रको मृत्युञ्जय नामक परम ज्ञान प्रदान करूँगा। तुमने जिस सामवेदोक्त अभीष्ट स्तोत्रद्वारा मेरा स्तवन किया है; इसे पूर्वकालमें ब्रह्माने सूर्य-ग्रहणके अवसरपर प्रशस्त पुण्यतम सिद्धाश्रममें सनत्कुमारको प्रदान किया था। गौरीने मन्दाकिनीके तटपर इसे गौतमको बतलाया था। दयालु शंकरने अपने भक्त शिष्य ब्रह्माको इसका उपदेश किया था। विरजाके तटपर मैंने इसे शिवको प्रदान किया था। पूर्वकालमें बुद्धिमान् सनत्कुमारने इसे महर्षि भृगुको बतलाया था। इस समय तुम इसे बाणको दोगे और बाण इसके द्वारा मेरा स्तवन करेगा। यह स्तोत्र महान् पुण्यदायक है। जो मनुष्य भलीभाँति स्नानसे शुद्ध हो वस्त्र, भूषण और चन्दन आदिसे गुरुका वरण और पूजन करके उनके मुखसे इस स्तोत्रका उपदेश ग्रहणकर नित्य पूजाके समय भक्तिपूर्वक इसका पाठ करेगा, वह अपने करोड़ों जन्मोंके संचित पापसे मुक्त हो जायगा—इसमें तनिक भी संशय नहीं है। यह स्तोत्र विपत्तियोंका विनाशक, समस्त सम्पत्तियोंका कारण, दु:ख-शोकका निवारक, भयंकर भवसागरसे उद्धार करनेवाला, गर्भवासका उच्छेदक, जरा-मृत्युका हरण करनेवाला, बन्धनों और रोगोंका खण्डन करनेवाला तथा भक्तोंके लिये शृङ्गार-स्वरूप है। जो इस स्तोत्रका पाठ करता है, उसने मानो समस्त तीर्थोंमें स्नान कर लिया, सभी यज्ञोंमें दीक्षा ग्रहण कर ली, सभी व्रतोंका अनुष्ठान कर लिया और सभी तपस्याएँ पूर्ण कर लीं। उसे निश्चय ही सम्पूर्ण दानोंका सत्य फल प्राप्त हो जाता है। इस स्तोत्रका एक लाख पाठ करनेसे मनुष्योंको स्तोत्रसिद्धि मिल जाती है। यदि मनुष्य स्तोत्रसिद्ध हो जाय तो उसे सारी सिद्धियाँ सुलभ हो जाती हैं। वह इस लोकमें देवतुल्य होकर अन्तमें श्रीहरिके पदको प्राप्त हो जाता है।

(अध्याय ११९)

बाणका यादवी सेनाके साथ युद्ध, बाणका धराशायी होना, शंकरजीका बाणको उठाकर श्रीकृष्णके चरणोंमें डाल देना, श्रीकृष्णद्वारा बाणको जीवन-दान, बाणका श्रीकृष्णको बहुत-से दहेजके साथ अपनी कन्या समर्पित करना, श्रीकृष्णका पौत्र और पौत्रवधूके साथ द्वारकाको लौट जाना और द्वारकामें महोत्सव

श्रीनारायण कहते हैं—नारद! तदनन्तर भगवान् श्रीकृष्णने उद्धव और बलदेवके साथ शुभ मन्त्रणा करके बाणके पास दूत भेजा। तब उस दूतने—जहाँ शिव, गणपति, दुर्गतिनाशिनी दुर्गा, कार्तिकेय, भद्रकाली, उग्रचण्डा और कोटरी—ये सब विद्यमान थे, वहाँ आकर शिव, शिवा, गणेश और पूजनीय मानवोंको नमस्कार किया और यथोचित वचन कहा।

दूत बोला—महेश्वर! भगवान् श्रीकृष्ण बाणको युद्धके लिये ललकार रहे हैं; अतः वह या तो युद्ध करे अथवा अनिरुद्ध और उषाको लेकर उनके शरणापन्न हो जाय; क्योंकि रणके लिये बुलाये जानेपर जो पुरुष भयभीत होकर सम्मुख युद्धार्थ नहीं जाता है, वह परलोकमें अपने सात पूर्वजोंके साथ नरकगामी होता है। दूतकी बात सुनकर स्वयं पार्वतीदेवी सभाके मध्यमें शंकरजीके संनिकट ही यथोचित वचन बोलीं।

पार्वतीने कहा—महाभाग बाण! तुम अपनी कन्याको लेकर उनके पास जाओ और प्रार्थना करो। फिर अपना सर्वस्व दहेजमें देकर श्रीकृष्णकी शरण ग्रहण करो; क्योंकि वे सबके ईश्वर तथा कारण, समस्त सम्पत्तियोंके दाता, श्रेष्ठ, वरेण्य, आश्रयस्थान, कृपालु और भक्तवत्सल हैं। पार्वतीका वचन सुनकर सभामें उपस्थित सभी सुरेश्वरोंने धन्य-धन्य कहते हुए उनकी प्रशंसा की और बाणसे वैसा करनेके लिये कहा; परंतु बाण क्रोधसे आगबबूला हो उठा, उसका शरीर काँपने लगा और नेत्र लाल हो गये। फिर तो वह असुर सहसा उठ खड़ा हुआ और सबके मना करनेपर भी कवचसे सुसज्जित हो हाथमें धनुष ले शंकरजीको प्रणाम करके करोड़ों कवचधारी महाबली दैत्योंके साथ चल पड़ा। तब कुम्भाण्ड, कूपकर्ण, निकुम्भ और कुम्भ—इन प्रधान सेनापतियोंने भी कवच धारण करके उसका अनुगमन किया। फिर उन्मत्तभैरव, संहारभैरव, असिताङ्गभैरव, रुरुभैरव, महाभैरव, कालभैरव, प्रचण्डभैरव और क्रोधभैरव—ये सभी भी कवच धारण करके शक्तियोंके साथ गये। कवचधारी भगवान् कालाग्निरुद्रने भी रुद्रोंके साथ गमन किया। उग्रचण्डा, प्रचण्डा, चण्डिका, चण्डनायिका, चण्डेश्वरी, चामुण्डा, चण्डी और चण्डक पालिका—ये सभी आठों नायिकाएँ हाथमें खप्पर ले उसके पीछे-पीछे चलीं। शोणितपुरकी ग्रामदेवता कोटरीने भी रत्ननिर्मित रथपर सवार हो प्रस्थान किया। उस समय उसका मुख प्रफुल्लित था और वह खड्ग तथा खप्पर लिये हुए थी। चन्द्राणी, शान्तस्वरूपा वैष्णवी, ब्रह्मवादिनी ब्रह्माणी, कौमारी, नारसिंही, विकट आकारवाली वाराही, महामाया माहेश्वरी और भीमरूपिणी भैरवी—ये सभी आठों शक्तियाँ हर्षपूर्वक रथपर सवार हो नगरसे बाहर निकलीं। जो रक्तवर्णवाली और त्रिनेत्रधारिणी हैं तथा जीभ लपलपानेके कारण जो भयंकर प्रतीत होती हैं, वे भद्रकालिका हाथोंमें शूल, शक्ति, गदा, खड्ग और खप्पर धारण करके बहुमूल्य रत्नोंके सारभागसे बने हुए रथपर सवार होकर चलीं। फिर महेश्वर हाथमें त्रिशूल ले नन्दीश्वरपर चढ़कर तथा धनुर्धर स्कन्द हाथमें शस्त्र ले अपने वाहन मयूरपर सवार होकर चले। इस प्रकार गणेश और पार्वतीको छोड़कर शेष

सभी लोगोंने बाणका अनुगमन किया। इन सबसे युक्त महादेव और भद्रकालिकाको देखकर चक्रपाणि श्रीकृष्णने यथोचितरूपसे सम्भाषण किया। तदनन्तर बाणने शङ्खध्वनि करके पार्वतीश्वर शिवको प्रणाम किया और धनुषकी प्रत्यञ्चा चढ़ाकर उसपर दिव्यास्त्रका संधान किया।

इस प्रकार बाणको युद्धके लिये उद्यत देखकर शत्रु-वीरोंका संहार करनेवाले सात्यकि उपस्थित सभी लोगोंके द्वारा मना किये जानेपर भी कवच धारण करके हर्षपूर्वक आगे बढ़े। नारद! तब बाणने उनपर मञ्छन नामक दिव्यास्त्रका प्रयोग किया। वह अस्त्र अमोघ, ग्रीष्म-ऋतुके मध्याह्नकालिक सूर्यके समान प्रकाशमान तथा अत्यन्त तीखा था। फिर तो घोर युद्ध होने लगा। परस्पर बड़े-बड़े घोर दिव्यास्त्रोंका प्रयोग किया गया। भयानक समर होते-होते जब भगवान् कालाग्नि नामक रुद्रने महाबली हलधर बलदेवजीको बाणासुरका वध करनेके लिये तैयार देखा, तब उन्होंने उनको रोक दिया। इसपर बलदेवजीने क्रुद्ध होकर कालाग्निरुद्रके रथ, घोड़े और सारथिका नाश कर दिया। तब कालाग्निरुद्रने कोपमें भरकर भयंकर ज्वर छोड़ा। इससे श्रीहरिके अतिरिक्त अन्य सभी यादव ज्वरसे आक्रान्त हो गये। उस ज्वरको देखकर भगवान् श्रीकृष्णने वैष्णव-ज्वरकी सृष्टि की और उस रणके मुहानेपर माहेश्वर-ज्वरका विनाश करनेके लिये उसे चला दिया। फिर तो दो घड़ीतक उन दोनों ज्वरोंमें बड़ा भयंकर युद्ध हुआ। अन्तमें उस रणाङ्गणमें वैष्णव-ज्वरसे आक्रान्त होकर माहेश्वर-ज्वर धराशायी हो गया, उसकी सारी चेष्टाएँ शान्त हो गयीं। पुनः चेतनामें आकर वह माधवकी स्तुति करने लगा।

ज्वर बोला—भक्तानुग्रहमूर्तिधारी भगवन्! आप सबके आत्मा और पूर्णपुरुष हैं; सबपर आपका समान प्रेम है, अतः जगन्नाथ! मेरे प्राणोंकी रक्षा कीजिये।

उस ज्वरके विनीत वचनको सुनकर श्रीकृष्णने अपने वैष्णव-ज्वरको लौटा लिया। तब माहेश्वर-ज्वर भयभीत होकर रणभूमिसे भाग खड़ा हुआ।

तत्पश्चात् बाणने पुनः आकर ऐसे हजारों बाण चलाये, जो प्रलयकालीन अग्निकी ज्वालाके समान प्रकाशमान तथा मन्त्रोंद्वारा पावन किये गये थे; परंतु अर्जुनने खेल-ही-खेलमें अपने बाणसमूहोंद्वारा उन्हें रोक दिया। तब बाणने

ग्रीष्मकालीन सूर्यके समान चमकीली शक्ति चलायी, किंतु महाबली अर्जुनने उसे भी अनायास ही काट गिराया। यह देखकर बाणने पाशुपतास्त्रको, जिसकी प्रभा सैकड़ों सूर्योंके समान थी और जो अत्यन्त भयंकर, अमोघ तथा विश्वका संहार करनेवाला था, हाथमें लिया। उसे देखकर चक्रपाणिने अपने भयंकर सुदर्शनचक्रको चला दिया। उस चक्रने रणभूमिमें बाणके हजारों हाथोंको काट डाला और वह भयंकर पाशुपतास्त्र पहाड़ी सिंहकी तरह भूमिपर गिर पड़ा। तदनन्तर जो प्रलयकालीन अग्निकी शिखाके समान प्रकाशमान, लोकमें दारुण तथा अमोघ है; वह पाशुपतास्त्र पशुपति शिवके हाथमें लौट गया। बाणके शरीर-रक्तसे वहाँ भयंकर नदी बह चली और बाण चेष्टारहित होकर भूमिपर गिर पड़ा। उस समय व्यथाके कारण उसकी चेतना नष्ट हो गयी थी। तब जगद्गुरु भगवान् महादेव वहाँ आये और बाणको उठाकर उन्होंने अपनी छातीसे लगा लिया। फिर बाणको लेकर वे वहाँ चले, जहाँ भगवान् जनार्दन विराजमान थे। वहाँ पहुँचकर

उन्होंने पद्याद्वारा समर्चित श्रीकृष्णके चरणकमलोंमें बाणको समर्पित कर दिया। तत्पश्चात् बलिने जिस वेदोक्त स्तोत्रद्वारा उनकी स्तुति की थी, उसी स्तोत्रद्वारा चन्द्रशेखरने शक्तियोंके स्वामी जगदीश्वर श्रीकृष्णका स्तवन किया। तब श्रीहरिने बुद्धिमान् बाणको 'मृत्युञ्जय' नामक ज्ञान प्रदान किया और उसके शरीरपर अपना कर-कमल फिराकर उसे अजर-अमर बना दिया।

तदनन्तर बाणने बलिकृत स्तोत्रद्वारा भक्तिपूर्वक श्रीहरिका स्तवन किया और उसी देवसमाजमें रत्ननिर्मित आभूषणोंसे विभूषित अपनी श्रेष्ठ कन्या उषाको लाकर भक्तिसहित श्रीकृष्णको प्रदान कर दिया। फिर उसने भक्तिपूर्वक कंधे झुकाकर पाँच लाख गजराज, बीस लाख घोड़े, रत्नाभरणोंसे विभूषित एक हजार दासियाँ, सब कुछ प्रदान करनेवाली बछड़ोंसहित एक सहस्र गौएँ, करोड़ों-करोड़ों मनोहर माणिक्य, मोती, रत्न, श्रेष्ठ मणियाँ और हीरे तथा हजारों सुवर्णनिर्मित जलपात्र एवं भोजनपात्र श्रीकृष्णको दहेजमें दिये। नारद! फिर बाणने शंकरजीकी आज्ञासे सभी तरहके अग्निशुद्ध श्रेष्ठ महीन वस्त्र तथा ताम्बूल और उसकी सामग्रियोंके विविध प्रकारके हजारों श्रेष्ठ पूर्णपात्र भक्तिपूर्ण हृदयसे दहेजमें दिये। तत्पश्चात् कन्याको भी श्रीहरिके चरणकमलोंमें समर्पित करके वह ढाह मारकर रो पड़ा। इस प्रकार उसने वह कार्य सम्पन्न किया। तब श्रीकृष्ण बाणको वेदोक्त मधुर वचनोंद्वारा वरदान देकर शंकरजीकी अनुमतिसे द्वारकापुरीको प्रस्थित हुए। वहाँ पहुँचकर स्वयं श्रीहरिने महात्मा बाणकी उस कन्याको नवोढा (नवविवाहिता वधू) समझकर शीघ्र ही देवकी और रुक्मिणीके हाथों सौंप दिया; फिर यत्नपूर्वक मङ्गल-महोत्सव कराया, ब्राह्मणोंको भोजन कराया और उन्हें बहुत-सा धन-दान किया।

(अध्याय १२०)

शृगालोपाख्यान

श्रीनारायण कहते हैं—नारद! एक समयकी बात है। श्रीकृष्ण अपने गणोंके साथ सुधर्मा-सभामें विराजमान थे। उसी समय वहाँ एक ब्राह्मणदेवता आये, जो ब्रह्मतेजसे प्रज्वलित हो रहे थे। वहाँ आकर उन्होंने पुरुषोत्तम श्रीकृष्णका दर्शन किया और भक्तिपूर्वक उनकी स्तुति की। फिर वे शान्त एवं भयभीत हो विनयपूर्वक मधुर वचन बोले।

ब्राह्मणने कहा—प्रभो! वासुदेव शृगाल नामका एक मण्डलेश्वर राजाधिराज है; वह आपकी अत्यन्त निन्दा करता है और कहता है कि 'वैकुण्ठमें चतुर्भुज देवाधिदेव लक्ष्मीपति वासुदेव मैं ही हूँ। मैं ही लोकोंका विधाता और ब्रह्माका पालक हूँ। पृथ्वीका भार उतारनेके लिये ब्रह्माने मेरी प्रार्थना की थी; इसी कारण भारतवर्षमें मेरा आगमन हुआ है। मैंने महाबली दैत्यराज हिरण्यकशिपु, हिरण्याक्ष, मधु और कैटभको मारकर सृष्टिकी रक्षा की है। मैं ही स्वयं ब्रह्मा, मैं ही स्वयं शिव तथा मैं ही लोकोंका पालक एवं दुष्टोंका संहारक विष्णु हूँ। सभी मनुगण तथा मुनिसमुदाय मेरे अंशकलासे उत्पन्न हुए हैं। मैं स्वयं प्रकृतिसे परे निर्गुण नारायण हूँ। भद्र! अबतक मैंने तुम्हें लज्जा तथा कृपाके कारण मित्र-बुद्धिसे क्षमा कर दिया था; किंतु जो बीत गया, सो बीत गया; अब तुम मेरे साथ युद्ध करो। मैंने दूतके मुखसे सुना है कि तुम्हारा अहंकार बहुत बढ़ गया है; अतः उसका दमन करना उचित है। ऊँचे सिर उठानेवालोंको कुचल डालना राजाका परम धर्म है और इस समय मैं ही पृथ्वीका शासक हूँ। मैं स्वयं चतुर्भुजरूप धारण करके शङ्ख-चक्र-गदा-पद्म लेकर सेनासहित युद्धके लिये उस द्वारकाको जाऊँगा। यदि तुम्हारी इच्छा हो तो युद्ध करो; अन्यथा मेरी शरण ग्रहण करो। यदि तुम शरणागत होकर मेरी शरणमें नहीं आ जाओगे तो मैं क्षणभरमें ही द्वारकाको भस्म कर डालूँगा। मैं अकेला ही लीलापूर्वक क्षणभरमें सेना, पुत्र, गण और बन्धु-बान्धवोंसहित तुम्हें जला डालनेमें समर्थ हूँ।'

मुने! यों कहकर वह ब्राह्मण मौन हो गया। उसे सुनकर सदस्योंसहित श्रीकृष्ण ठठाकर हँस पड़े। फिर उन्होंने ब्राह्मणका भलीभाँति आदर-सत्कार करके उन्हें चारों प्रकारके पदार्थ (भक्ष्य, भोज्य, लेह्य, चोष्य) भोजन कराये। शृगालके वाग्बाण उनके मनमें कसक पैदा कर रहे थे; इसलिये बड़े क्षोभसे उन्होंने वह रात बितायी। प्रातःकाल होते ही वे बड़ी उतावलीके साथ हर्षपूर्वक गणोंसहित रथपर सवार हो सहसा वहाँ जा पहुँचे, जहाँ राजा शृगाल था। उनके आनेका समाचार सुनकर राजा शृगाल कृत्रिम-रूपसे चार भुजा धारण करके गणोंसहित युद्धके लिये श्रीहरिके स्थानपर आया। श्रीकृष्णने मित्र-बुद्धिसे उसकी ओर स्नेहभरी दृष्टिसे देखकर मुस्कराते हुए मधुर वचनोंद्वारा लौकिक रीतिसे उससे वार्तालाप किया। राजा शृगालने श्रीकृष्णको निमन्त्रित किया; परंतु उन्होंने उसे स्वीकार नहीं किया। तब वह श्रीकृष्णसे भयभीत हो उनके दर्शनसे दम्भको त्यागकर यों कहने लगा।

शृगाल बोला—प्रभो! आप चक्रद्वारा मेरा शिरश्छेदन करके शीघ्र ही द्वारकाको लौट जाइये, जिससे मेरा यह अनित्य एवं नश्वर पापी शरीर समाप्त हो जाय। भगवन्! जय-विजयकी तरह मैं भी आपका द्वारपाल हूँ। मेरा नाम सुभद्र है। लक्ष्मीके शापसे मैं भ्रष्ट हो गया था; अब मेरा वह समय पूरा हो गया है। सौ वर्षके बाद शापके समाप्त हो जानेपर मैं पुनः आपके भवनको जाऊँगा। सर्वज्ञ! आप तो सब कुछ जानते ही

हैं; अतः विलम्ब मत कीजिये।

श्रीकृष्णने कहा—मित्र! पहले तुम मुझपर प्रहार करो; तत्पश्चात् मैं युद्ध करूँगा। वत्स! मैं सारा रहस्य जानता हूँ; अतः अब तुम सुखपूर्वक वैकुण्ठको जाओ। तब शृगालने माधवपर दस बाणोंसे वार किया; किंतु वे कालरूपी बाण शीघ्र ही श्रीकृष्णको प्रणाम करके आकाशमें विलीन हो गये। फिर राजा शृगालने प्रलयकालीन अग्निकी शिखाके समान चमकीली गदा फेंकी, परंतु वह तत्काल ही श्रीकृष्णके अङ्गस्पर्शमात्रसे टूक-टूक हो गयी। तत्पश्चात् उसने परम दारुण कालरूपी खड्ग और धनुष चलाया, किंतु वह उसी क्षण श्रीकृष्णके अङ्गोंका स्पर्श होते ही छिन्न-भिन्न हो गया। इस प्रकार राजाको अस्त्रहीन देखकर कृपालु श्रीकृष्णने कहा—'मित्र! घर जाकर खूब तीखा अस्त्र ले आओ।'

तब शृगाल बोला—प्रभो! आत्मारूपी आकाश अस्त्रद्वारा बेधा नहीं जा सकता। भला, आत्माके साथ युद्ध कैसा? पृथ्वीका उद्धार करनेमें कारणस्वरूप भगवन्! इस भवसागरसे मेरा उद्धार कीजिये। नाथ! भवसागर बड़ा भयंकर है और विषय-विषसे भी अधिक दारुण हैं; अतः मेरी स्वकर्मजनित माया-मोहरूपी साँकलको छिन्न-भिन्न कर दीजिये। आप कर्मोंके ईश्वर, ब्रह्माके भी विधाता, शुभ फलोंके दाता, समस्त सम्पत्तियोंके प्रदाता, प्राक्तन कर्मोंके कारण और उनके खण्डनमें समर्थ हैं। मैं अपने इस पाञ्चभौतिक प्राकृत नश्वर देहका त्याग करके आपके ही वैकुण्ठके सातवें द्वारपर जाऊँगा; क्योंकि वही मेरा घर है।

इस प्रकारका मित्रका स्तवन और अमृतोपम वचन सुनकर कृपानिधि श्रीकृष्ण कृपापरवश हो वहीं समरभूमिमें स्नेहवश रोने लगे। श्रीकृष्णके नेत्रोंसे गिरे हुए अश्रुबिन्दुओंसे वहाँ सहसा 'बिन्दुसर' नामक एक दिव्य सरोवर प्रकट हो गया; जो तीर्थोंमें परम श्रेष्ठ है। उसके जलके स्पर्शमात्रसे मनुष्य जीवन्मुक्त हो जाता है और अपने सात जन्मोंके संचित पापोंसे छूट जाता है; इसमें जरा भी संदेह नहीं है।

इसके बाद श्रीभगवान्ने पूछा—मित्र! यदि तुम्हारा मन इतना निर्मल है तो फिर तुम्हारी ऐसी युद्ध-बुद्धि कैसे हुई और क्यों तुमने दूतके द्वारा ऐसा दारुण निष्ठुर संदेश कहलवाया?

इसपर शृगालने कहा—नाथ! मैंने तुम्हारे प्रति ऐसे निठुर वाक्योंका प्रयोग किया, तभी तो तुम क्रोधपूर्वक यहाँ आये। नहीं तो, स्वप्नमें भी तुम्हारे दर्शन दुर्लभ हैं। यों कहते-कहते उसने योगावलम्बन करके प्राकृत पाञ्चभौतिक शरीरका त्याग कर दिया और वह श्रीकृष्णके देखते-देखते ही विमानपर सवार होकर दिव्य धामको चला गया। उस समय शृगालके शरीरसे सात ताड़-जितनी लंबी एक महान् ज्योति निकली और वह ब्रह्माजी तथा लक्ष्मीजीके द्वारा पूजित श्रीकृष्णके चरणकमलोंमें प्रणाम करके चली गयी।

तब अपने साथियोंके सहित श्रीमान् कृष्ण इस अद्भुत चरित्रको देखकर प्रफुल्लमुख हो द्वारकाकी ओर चल दिये। द्वारका पहुँचकर उन्होंने पहले माता-पिताको प्रणाम किया। तदनन्तर रुक्मिणीके महलमें जाकर पुष्पशय्यापर शयन किया।

(अध्याय १२१)

गणेशके अग्रपूज्यत्व-वर्णनके प्रसङ्गमें राधाद्वारा गणेशकी अग्रपूजाका कथन

नारदजीने पूछा—मुने! पुराणोंमें जो गणेश-पूजनका दुर्लभ आख्यान वर्णित है, उसे मैंने सामान्यतया ब्रह्माके मुखसे संक्षेपमें सुना है। अब आपसे समस्त पूजनीयोंमें प्रधान गणपतिकी महिमा विस्तारपूर्वक सुननेकी मेरी अभिलाषा है; क्योंकि आप योगीन्द्रोंके गुरुके भी गुरु हैं। पूर्वकालमें स्वर्गवासियोंने सिद्धाश्रममें राधा-माधवकी महापूजा की थी; उसी राधाने सौ वर्षके बीतनेपर जब श्रीदामाका शाप निवृत्त हुआ; तब ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि सुरेन्द्रों, नागराज शेष और अन्यान्य बड़े-बड़े नागों, भूतलपर बहुत-से बलशाली नरेशों और असुरों, अन्यान्य महाबली गन्धर्वों तथा राक्षसोंके रहते हुए सर्वप्रथम गणेशकी पूजा कैसे की? महाभाग! यह वृत्तान्त मुझसे विस्तारपूर्वक वर्णन करनेकी कृपा करें।

श्रीनारायण बोले—नारद! तीनों लोकोंमें पुण्यवती होनेके कारण पृथ्वी धन्य एवं मान्य है। उस पृथ्वीपर भारतवर्ष कर्मोंका शुभ फल देनेवाला है। उस पुण्यक्षेत्र भारतमें सिद्धाश्रम नामक एक महान् पुण्यमय शुभ क्षेत्र है; जो धन्य, यशस्य, पूज्य और मोक्ष-प्रदाता है। भगवान् सनत्कुमार वहीं सिद्ध हुए थे। स्वयं ब्रह्माने भी वहीं तपस्या करके सिद्धि प्राप्त की थी। योगीन्द्र, मुनीन्द्र, कपिल आदि सिद्धेन्द्र और शतक्रतु महेन्द्र वहीं तप करके सिद्धिके भागी हुए हैं। इसी कारण उसे सिद्धाश्रम कहते हैं। वह सभीके लिये दुर्लभ है। मुने! वहाँ गणेश नित्य निवास करते हैं। वहाँ गणेशकी अमूल्य रत्नोंकी बनी हुई एक सुन्दर प्रतिमा है; जिसकी वैशाखी पूर्णिमाके दिन सभी देवता, नाग, मनुष्य, दैत्य, गन्धर्व, राक्षस, सिद्धेन्द्र, मुनीन्द्र, योगीन्द्र और सनकादि महर्षि पूजा करते हैं। उस अवसरपर वहाँ पार्वतीके साथ कल्याणकारी शम्भु, गणोंसहित कार्तिकेय और स्वयं प्रजापति ब्रह्मा पधारे। प्रधान-प्रधान नागोंके साथ शेषनाग भी तुरंत ही वहाँ आ पहुँचे। फिर सभी देवता, मनु और मुनिगण भी वहाँ आये। सभी नरेश प्रसन्नमनसे गणेशकी पूजा करनेके लिये वहाँ उपस्थित हुए। द्वारकावासियोंके साथ भगवान् श्रीकृष्णका भी वहाँ शुभागमन हुआ तथा गोकुलवासियोंके साथ नन्द भी पधारे। तदनन्तर सुरसिका, रासेश्वरी और श्रीकृष्णके प्राणोंकी अधिदेवता सुन्दरी राधा भी सौ वर्ष व्यतीत हो जानेपर गोलोकवासिनी गोपी-सखियोंके साथ पधारीं। वहाँ सुन्दर दाँतोंवाली राधाने भलीभाँति स्नान करके शुद्ध हो धुली हुई साड़ी और कंचुकी धारण की। फिर भुवनपावनी कान्ता राधाने अपने चरणकमलोंका अच्छी तरह प्रक्षालन किया। तत्पश्चात् वे निराहार रहकर इन्द्रियोंको काबूमें करके मणिमण्डपमें गयीं। वहाँ उन्होंने श्रीकृष्ण-प्राप्तिकी कामनासे उत्तम संकल्पका विधान करके भक्तिपूर्वक गङ्गाजलसे गणेशको स्नान कराया। इसके बाद जो चारों वेदों, वसु और लोकोंकी माता, ज्ञानियोंकी परा जननी एवं बुद्धिरूपा हैं; वे भगवती राधा श्वेत पुष्प लेकर सामवेदोक्त प्रकारसे अपने पुत्रभूत गणेशका यों ध्यान करने लगीं।

'जो खर्व (छोटे कदवाले), लम्बोदर (तोंदवाले), स्थूलकाय, ब्रह्मतेजसे उद्भासित, हाथीके-से मुखवाले, अग्निसरीखे कान्तिमान्, एकदन्त और असीम हैं; जो सिद्धों, योगियों और ज्ञानियोंके गुरु-के-गुरु हैं; ब्रह्मा, शिव और शेष आदि देवेन्द्र, मुनीन्द्र, सिद्धेन्द्र, मुनिगण तथा संतलोग जिनका ध्यान करते हैं; जो ऐश्वर्यशाली, सनातन, ब्रह्मस्वरूप, परम मङ्गल, मङ्गलके स्थान, सम्पूर्ण विघ्नोंको हरनेवाले, शान्त, सम्पूर्ण सम्पत्तियोंके दाता, कर्मयोगियोंके लिये भवसागरमें मायारूपी जहाजके कर्णधारस्वरूप, शरणागत-दीन-दुःखीकी रक्षामें तत्पर, ध्यानरूप, साधना

करनेयोग्य, भक्तोंके स्वामी और भक्तवत्सल हैं; उन गणेशका ध्यान करना चाहिये।'

इस प्रकार ध्यान करके सती राधाने उस पुष्पको अपने मस्तकपर रखकर पुनः सर्वाङ्गोंको शुद्ध करनेवाला वेदोक्त न्यास किया। तत्पश्चात् उसी शुभदायक ध्यानद्वारा पुनः ध्यान करके राधाने उन लम्बोदरके चरणकमलमें पुष्पाञ्जलि समर्पित की। फिर गोलोकवासिनी स्वयं श्रीराधिकाजीने सुगन्धित सुशीतल तीर्थजल, दूर्वा, चावल, श्वेत पुष्प, सुगन्धित चन्दनयुक्त अर्घ्य, पारिजात-पुष्पोंकी माला, कस्तूरी-केसरयुक्त चन्दन, सुगन्धित शुक्ल पुष्प, सुगन्धयुक्त उत्तम धूप, घृत-दीपक, सुस्वादु रमणीय नैवेद्य, चतुर्विध अन्न, सुपक्व फल, भाँति-भाँतिके लड्डू, रमणीय सुस्वादु पिष्टक, विविध प्रकारके व्यञ्जन, अमूल्य रत्ननिर्मित सिंहासन, सुन्दर दो वस्त्र, मधुपर्क, सुवासित सुशीतल पवित्र तीर्थजल, ताम्बूल, अमूल्य श्वेत चँवर, मणि-मुक्ता-हीरासे सुसज्जित सुन्दर सूक्ष्मवस्त्रद्वारा सुशोभित शय्या, सवत्सा कामधेनु गौ और पुष्पाञ्जलि अर्पण करके अत्यन्त श्रद्धाके साथ षोडशोपचार समर्पित किया। फिर कालिन्दीकुलवासिनी राधाने '**ॐ गं गौं गणपतये विघ्नविनाशिने स्वाहा**' गणेशके इस षोडशाक्षर-मन्त्रका, जो श्रेष्ठ कल्पतरुके समान है, एक हजार जप किया। इसके बाद वे भक्तिवश कंधा नीचा करके नेत्रोंमें आँसू भरकर पुलकित शरीरसे परम भक्तिके साथ इस स्तोत्रद्वारा स्तवन करने लगीं।

श्रीराधिकाने कहा—जो परम धाम, परब्रह्म, परेश, परमेश्वर, विघ्नोंके विनाशक, शान्त, पुष्ट, मनोहर और अनन्त हैं; प्रधान-प्रधान सुर और असुर जिनका स्तवन करते हैं; जो देवरूपी कमलके लिये सूर्य और मङ्गलोंके आश्रय-स्थान हैं; उन परात्पर गणेशकी मैं स्तुति करती हूँ। यह

उत्तम स्तोत्र महान् पुण्यमय तथा विघ्न और शोकको हरनेवाला है। जो प्रातःकाल उठकर इसका पाठ करता है, वह सम्पूर्ण विघ्नोंसे विमुक्त हो जाता है।

(अध्याय १२२)

गणेशकृत राधा-प्रशंसा, पार्वती-राधा-सम्भाषण, पार्वतीके आदेशसे सखियोंद्वारा राधाका शृङ्गार और उनकी विचित्र झाँकी; ब्रह्मा, शिव, अनन्त आदिके द्वारा राधाकी स्तुति

श्रीनारायण कहते हैं—नारद! सती राधाने गणेशकी विधिपूर्वक भलीभाँति पूजा करके स्तुति की और सर्वाङ्गोंमें पहनने योग्य बहुमूल्य रत्नोंके बने हुए आभूषण प्रदान किये। राधाद्वारा किये गये पूजन और पूजा-सामग्रीको देखकर तथा स्तवन सुनकर शान्तस्वरूप गणेश शान्तस्वभाववाली त्रिलोकजननी राधासे मधुर वचन बोले।

श्रीगणेशने कहा—जगन्मातः! तुम्हारी यह

पूजा लोगोंको शिक्षा देनेके लिये है। शुभे! तुम तो स्वयं ब्रह्मस्वरूपा और श्रीकृष्णके वक्षः-स्थलपर वास करनेवाली हो। ब्रह्मा, शिव और शेष आदि देवगण, सनकादि मुनिवर, जीवन्मुक्त भक्त और कपिल आदि सिद्धशिरोमणि, जिनके अनुपम एवं परम दुर्लभ चरणकमलका निरन्तर ध्यान करते हैं, उन श्रीकृष्णके प्राणोंकी तुम अधिदेवी तथा उनके लिये प्राणोंसे भी बढ़कर परम प्रियतमा हो। श्रीकृष्णके दक्षिणाङ्गसे माधव है और वामाङ्गसे राधा प्रादुर्भूत हुई हैं। जगज्जननी महालक्ष्मी तुम्हारे वामाङ्गसे प्रकट हुई हैं। तुम सबके निवासभूत वसुको जन्म देनेवाली, परमेश्वरी, वेदों और लोकोंकी ईश्वरी मूलप्रकृति हो। मातः! इस सृष्टिमें जितनी प्राकृतिक नारियाँ हैं; वे सभी तुम्हारी विभूतियाँ हैं। सारे विश्व कार्यरूप हैं और तुम उनकी कारणरूपा हो। प्रलयकालमें जब ब्रह्माका तिरोभाव हो जाता है; वह श्रीहरिका एक निमेष कहलाता है। उस समय जो बुद्धिमान् योगी पहले राधा, फिर परात्पर कृष्ण अर्थात् राधा-कृष्णका सम्यक् उच्चारण करता है; वह अनायास ही गोलोकमें चला जाता है। इससे व्यतिक्रम करनेपर वह महापापी निश्चय ही ब्रह्महत्याके पापका भागी होता है। तुम लोकोंकी माता और परमात्मा श्रीहरि पिता हैं; परंतु माता पितासे भी बढ़कर श्रेष्ठ, पूज्य, वन्दनीय और परात्पर होती है। इस पुण्यक्षेत्र भारतवर्षमें यदि कोई मन्दमति पुरुष सबके कारणस्वरूप श्रीकृष्ण अथवा किसी अन्य देवताका भजन करता है और राधिकाकी निन्दा करता है तो वह इस लोकमें दुःख-शोकका भागी होता है और उसका वंशच्छेद हो जाता है तथा परलोकमें सूर्य और चन्द्रमाकी स्थितिपर्यन्त वह घोर नरकमें पचता रहता है। ज्ञानका उद्गीरण करने अर्थात् उगलनेके कारण गुरु कहा जाता है; वह ज्ञान मन्त्र-तन्त्रसे प्राप्त होता है; वह मन्त्र और वह तन्त्र तुम दोनोंकी भक्ति है। जब जीव प्रत्येक जन्ममें देवोंके मन्त्रका सेवन करता है तो उसे दुर्गाके परम दुर्लभ चरणकमलमें भक्ति प्राप्त हो जाती है। जब वह लोकोंके कारणस्वरूप शम्भुके मन्त्रका आश्रय ग्रहण करता है, तब तुम दोनों (राधा-कृष्ण)-के अत्यन्त दुर्लभ चरणकमलको प्राप्त कर लेता है। जिस पुण्यवान् पुरुषको तुम दोनोंके दुष्प्राप्य चरणकमलकी प्राप्ति हो जाती है, वह दैववश क्षणार्ध अथवा उसके षोडशांश कालके लिये भी उसका त्याग नहीं करता। जो मानव इस पुण्यक्षेत्र भारतमें किसी वैष्णवसे तुम दोनोंके मन्त्र, स्तोत्र अथवा कर्ममूलका उच्छेद करनेवाले कवचको ग्रहण करके परमभक्तिके साथ उसका जप करता है; वह अपने साथ-साथ अपनी सहस्रों पीढ़ियोंका उद्धार कर देता है। जो मनुष्य विधिपूर्वक वस्त्र, अलंकार और चन्दनद्वारा गुरुका भलीभाँति पूजन करके तुम्हारे कवचको धारण करता है, वह निश्चय ही विष्णु-तुल्य हो जाता है। मातः! तुमने जो कुछ वस्तु मुझे समर्पित की है, उस सबको सार्थक कर डालो अर्थात् अब मेरी प्रसन्नताके लिये उसे ब्राह्मणको दे दो। तब मैं उसका भोग लगाऊँगा; क्योंकि देवताको देने योग्य जो दान अथवा दक्षिणा होती है, वह सब यदि ब्राह्मणको दे दी जाय तो वह अनन्त हो जाती है। राधे! ब्राह्मणोंका मुख ही देवताओंका प्रधान मुख है; क्योंकि ब्राह्मण जिस पदार्थको खाते हैं, वही देवताओंको मिलता है*। मुने! तब सती राधिकाने वह सारा पदार्थ ब्राह्मणोंको खिला दिया; इससे गणेश तत्काल ही प्रसन्न हो गये।

* ब्राह्मणानां मुखं राधे देवानां मुखमुख्यकम्। विप्रभुक्तं च यद् द्रव्यं प्राप्नुवन्त्येव देवताः॥ (१२३। २३)

इसी समय ब्रह्मा, शिव और शेषनाग आदि देवता देवश्रेष्ठ गणेशका पूजन करनेके लिये उस वट-वृक्षके नीचे आये। तब एक शिव-दूत वहाँ जाकर उन देवताओं तथा देवियोंसे यों कहने लगा।

रक्षक (शिवदूत)-ने कहा—देवगण! वृषभानुसुता राधाने मुझे हटाकर शुभ मुहूर्तमें स्वस्तिवाचन करके सर्वप्रथम गणेशकी पूजा की है। पूजनमें ऐसा कहा जाता है कि जो सर्वप्रथम पूजन करता है, वह अनन्त फलका भागी होता है और मध्यमें पूजा करनेवालेको मध्यम तथा अन्तमें पूजनेवालेको स्वल्प पुण्य प्राप्त होता है। ऐसा दशामें बहुत-से देवशिरोमणियों, मुनिवरों और देवाङ्गनाओंके रहते हुए उस राधाने गोपियोंके साथ देवश्रेष्ठ गणेशकी पूजा की है।

दूतकी बात सुनकर सभी देवताओं, मुनियों, मनुओं और राजाओंका समुदाय तथा देवाङ्गनाएँ हँसने लगीं। वहाँ जो रुक्मिणी आदि महिलाएँ तथा देवियाँ थीं, उन्हें महान् विस्मय हुआ। तत्पश्चात् सावित्री, सरस्वती, परमेश्वरी पार्वती, रोहिणी, सती-संज्ञक स्वाहा आदि देवाङ्गनाएँ तथा सभी पतिव्रता मुनिपत्नियाँ वहाँ आयीं। फिर सभी देवताओं, मुनियों, मनुओं और मनुष्योंका दल, गणसहित श्रीकृष्ण तथा अन्यान्य जो वहाँ उपस्थित थे, उन सभी लोगोंने हर्षपूर्वक पदार्पण किया। तत्पश्चात् उन सबने शुभ मुहूर्तमें बलवान् और दुर्बलके क्रमसे पृथक्-पृथक् विविध द्रव्योंद्वारा गणेशकी पूजा की। इस प्रकार पूजन करके वे सभी सुखासनपर विराजमान हुए। इसी समय पार्वती परम हर्षके साथ राधाके स्थानपर गयीं। पार्वतीको आयी हुई देखकर राधा उतावलीके साथ अपने आसनसे उठ खड़ी हुईं और हर्षमग्न हो उनसे सादर यथायोग्य कुशल-समाचार पूछने लगीं। तत्पश्चात् परस्पर आलिङ्गन और स्नेह-प्रदर्शन किया गया। तब दुर्गा राधाको अपनी छातीसे लगाकर मधुर वचन बोलीं।

पार्वतीने कहा—राधे! मैं तुमसे क्या कुशल-प्रश्न करूँ; क्योंकि तुम तो स्वयं ही मङ्गलोंकी आश्रय-स्थान हो। श्रीदामाके शापसे मुक्त हो जानेपर अब तुम्हारी विरहज्वाला भी शान्त ही हो गयी। जैसे मेरे मन-प्राण तुममें वास करते हैं; वैसे ही तुम्हारे मुझमें लगे रहते हैं। इस प्रकार शक्ति और पुरुषकी भाँति हम दोनोंमें कोई भेद नहीं है। जो मेरे भक्त होकर तुम्हारी और तुम्हारे भक्त होकर मेरी निन्दा करते हैं; वे चन्द्रमा और सूर्यके स्थितिकालपर्यन्त कुम्भीपाकमें पचते रहते हैं। जो नराधम राधा और माधवमें भेद-भाव करते हैं, उनका वंश नष्ट हो जाता है और वे चिरकालतक नरकमें यातना भोगते हैं*। इसके बाद साठ हजार वर्षोंतक वे विष्ठाके कीड़े होते हैं, फिर अपनी सौ पीढ़ियोंसहित सूकरकी योनिमें उत्पन्न होते हैं। सर्वपूज्य पुत्र गणेश्वरकी तुमने ही सर्वप्रथम पूजा की है; मैं वैसा नहीं कर पायी हूँ। यह गणेश जैसे तुम्हारा है, वैसे ही मेरा भी है। देवि! दुग्ध और उसकी धवलताके समान राधा और माधवमें जीवनपर्यन्त कभी विच्छेद नहीं होगा। पुण्यक्षेत्र भारतवर्षमें स्थित इस महातीर्थ सिद्धाश्रममें विघ्नविनाशक गणेशकी भलीभाँति पूजा करके तुम बिना किसी विघ्न-बाधाके गोविन्दको प्राप्त करो। तुम रसिका-रासेश्वरी हो और श्रीकृष्ण रसिकशिरोमणि हैं; अतः तुम नायिकाका रसिक नायकके साथ समागम गुणकारी होगा। सती राधे! सौ वर्षके बाद तुम श्रीदामाके शापसे मुक्त

---

* ये त्वां निन्दन्ति मद्भक्तास्त्वद्भक्ताश्चापि मामपि। कुम्भीपाके च पच्यन्ते यावच्चन्द्रदिवाकरौ॥
राधामाधवयोर्भेदं ये कुर्वन्ति नराधमाः। वंशहानिर्भवेतेषां पच्यन्ते नरके चिरम्॥
(१२३। ४४-४५)

हुई हो; अतः आज मेरे वरदानसे तुम श्रीकृष्णके साथ मिलो। सुन्दरि! मेरी दुर्लभ आज्ञा मानकर तुम अपना उत्तम शृङ्गार करो।

तब पार्वतीकी आज्ञासे प्यारी सखियाँ राधाका शृङ्गार करनेमें जुट गयीं। उन्होंने ईश्वरी राधाको रमणीय रत्नसिंहासनपर बैठाया। फिर तो सखी रत्नमालाने सामनेसे आकर राधाके गलेमें रत्नोंकी माला पहना दी और उनके दाहिने हाथमें मनोहर क्रीड़ा-कमल रख दिया। पद्ममुखीने उनके दोनों चरणकमलोंको महावरसे सुशोभित किया। सुन्दरी गोपीने चन्दनयुक्त सिन्दूरकी परम रुचिर बेंदीसे सीमन्तके अधोभाग—ललाटको सुशोभित किया। सती मालतीने मालतीकी मालाओंसे विभूषित करके ऐसी मनभावनी रमणीय कवरी गूँथकर तैयार की जो मुनियोंके भी मनको मोहे लेती थी। फिर कपोलोंपर कस्तूरी और कुंकुममिश्रित चन्दनसे सुन्दर पत्रभङ्गीकी रचना की। मालावतीने राधाको सुन्दर चम्पाके पुष्पोंकी मनोहर गन्धवाली माला और खिली हुई नवमल्लिका प्रदान की। रति-कार्योंमें रसका ज्ञान रखनेवाली गोपीने परम श्रेष्ठ नायिका राधाको रत्नाभरणोंसे विभूषित करके रति-रसके लिये उत्सुक बनाया। सती ललिताने उनके शरत्कालीन कमल-दलके समान विशाल नेत्रोंको काजलसे आँजकर सुहावनी साड़ी पहननेको दी और महेन्द्रद्वारा दिये गये पारिजातके सुगन्धित पुष्पको उनके हाथमें दिया। सती गोपिका सुशीलाने पतिके पास जाकर किस प्रकार सुशील एवं मधुर यथोचित वचन कहना चाहिये—ऐसी नीतियुक्त शिक्षा दी। राधाकी माता कलावतीने विपत्तिकालमें विस्मृत हुई स्त्रियोंकी षोडश कलाओंका स्मरण कराया। बहिन सुधामुखीने शृङ्गार-विषयसम्बन्धी अमृतोपम वचनकी ओर ध्यान आकर्षित किया। कमलाने शीघ्र ही कमल और चम्पाके चन्दनचर्चित पत्तेपर कोमल रति-शय्या सजायी। स्वयं सती चम्पावतीने चम्पाके सुन्दर पुष्पको चन्दनसे अनुलिप्त करके श्रीकृष्णके लिये दोनेमें सजाकर रखा। फिर उसने श्रीकृष्णकी प्रसन्नताके लिये केलि-कदम्बोंका पुष्प, मनोहर स्तवक (गुलदस्ता) और कदम्ब-पुष्पोंकी माला तैयार की। कृष्णप्रियाने श्रीकृष्णके लिये कपूर आदिसे सुवासित श्रेष्ठ एवं रुचिर पान तथा सुगन्धित जल उपस्थित किया। इसी समय देवताओं तथा मुनियोंने देखा कि जल-स्थलसहित सारा आश्रम गोरोचनके समान उद्भासित हो रहा है। उस समय तीनों लोकोंमें वास करनेवाले सभी लोगोंने राधिकाके दर्शन किये।

जिनके शरीरकी कान्ति श्वेत चम्पकके समान परम मनोहर एवं अनुपम है; जो ऊर्ध्वरेता मुनियोंके भी मनोंको मोहमें डाल देती हैं; जो सुन्दर केशोंवाली, सुन्दरी, षोडशवर्षीया और वटवृक्षके नीचे मण्डलमें वास करनेवाली हैं; जिनका मुख करोड़ों चन्द्रमाओंकी छबिको छीने लेता है; जो सदा मुस्कराती रहती हैं, जिनके दाँत बड़े सुन्दर हैं; जिनके शरत्कालीन कमलके समान विशाल नेत्र कज्जलसे सुशोभित रहते हैं; जो महालक्ष्मी, बीजरूपा, परमाद्या, सनातनी और परमात्मस्वरूप श्रीकृष्णके प्राणोंकी अधिष्ठातृदेवता हैं; परमात्माकी प्राप्तिके लिये जिनकी स्तुति-पूजा की जाती है; जो परा, ब्रह्मस्वरूपा, निर्लिप्ता, नित्यरूपा, निर्गुणा, विश्वके अनुरोधसे प्रकृति, भक्तानुग्रहमूर्ति, सत्यस्वरूपा, शुद्ध, पवित्र, पतित-पावनी, उत्तम तीर्थोंको पावन करनेवाली, सत्कीर्तिसम्पन्ना, ब्रह्माकी भी विधात्री, महाप्रिया, महती, महाविष्णुकी माता, रासेश्वरकी स्वामिनी, सुन्दरी नायिका, रसिकेश्वरी, अग्निशुद्ध वस्त्र धारण करनेवाली, स्वेच्छारूपा और मङ्गलकी आलय हैं; सात गोपियाँ श्वेत चँवर डुलाकर जिनकी निरन्तर सेवा करती रहती हैं, चार प्यारी सखियाँ जिनके चरणकमलकी सेवामें तत्पर रहती हैं, अमूल्य रत्नोंके बने हुए आभूषण जिनकी

शोभा बढ़ा रहे हैं, दोनों मनोहर कुण्डलोंसे जिनके कर्ण और कपोल उद्भासित हो रहे हैं और जिनकी सुन्दर नासिकामें गजमुक्ता लटक रही है, जो गरुड़की चोंचका उपहास करनेवाली है; जिनका शरीर कुंकुम-कस्तूरीमिश्रित सुस्निग्ध चन्दनसे चर्चित है, जिनके कपोल सुन्दर और अङ्ग कोमल हैं; जो कामुकी, गजराजकी-सी चालवाली, कमनीया एवं सुन्दरी नायिका, कामदेवके अस्त्रकी विजयस्वरूपा, कामकी कामनाका लय करनेवाली तथा श्रेष्ठ हैं; जिनके हाथमें प्रफुल्ल क्रीड़ा-कमल, पारिजातका पुष्प और अमूल्य रत्नजटित स्वच्छ दर्पण शोभा पाते हैं; जो नाना प्रकारके रत्नोंकी विचित्रतासे युक्त रत्नसिंहासनपर विराजमान होती हैं, जो परमात्मा श्रीकृष्णके पद्माद्वारा समर्चित मङ्गलरूप चरणकमलका अपने हृदयकमलमें ध्यान करती रहती हैं तथा मन-वचन-कर्मसे स्वप्न अथवा जाग्रत् कालमें श्रीकृष्णकी प्रीति और प्रेम-सौभाग्यका नित्य नूतन रूपमें स्मरण करती रहती हैं; जो प्रगाढ़भावानुरक्त, शुद्धभक्त, पतिव्रता, धन्या, मान्या, गौरवर्णा, निरन्तर श्रीकृष्णके वक्षः-स्थलपर वास करनेवाली, प्रियाओं तथा प्रिय भक्तोंमें परम प्रिय, प्रियवादिनी, श्रीकृष्णके वामाङ्गसे आविर्भूत, गुण और रूपमें अभिन्न, गोलोकमें वास करनेवाली, देवाधिदेवी, सबके ऊपर विराजमान, गोपीश्वरी, गुप्तिरूपा, सिद्धिदा, सिद्धिरूपिणी, ध्यानद्वारा असाध्य, दुराराध्य, सद्भक्तोंद्वारा वन्दित और पुण्यक्षेत्र भारतमें वृषभानु-नन्दिनीके रूपमें प्रकट हुई हैं; उन राधाकी मैं वन्दना करता हूँ। जो ध्यानपरायण मानव समाधि-अवस्थामें ध्याननिष्ठ हो राधाका ध्यान करते हैं; वे इस लोकमें तो जीवन्मुक्त हैं ही, परलोकमें श्रीकृष्णके पार्षद होते हैं। तदनन्तर लोकोंके विधाता स्वयं ब्रह्माने ब्रह्माओंकी जननी परमेश्वरी राधाको देखकर सर्वप्रथम स्तुति करना आरम्भ किया।

ब्रह्मा बोले—परमेश्वरि! मेरा चित्त तुम्हारे पादपद्मके मधुर मधुमें लुब्ध हो गया था; अतः उस मधुव्रतके लोभसे प्रेरित होकर मैंने पुण्यक्षेत्र भारतवर्षमें स्थित पुष्करतीर्थमें जाकर साठ हजार दिव्य वर्षोंतक तपस्या की; तथापि तुम्हारा अभीष्ट चरणकमल मुझे प्राप्त नहीं हुआ। यहाँतक कि मुझे स्वप्नमें भी उसका दर्शन नहीं हुआ। तब उस समय यों आकाशवाणी हुई—'ब्रह्मन्! वाराहकल्पमें भारतवर्षमें वृन्दावन नामक पुण्यवनमें स्थित 'सिद्धाश्रम' में तुम्हें गणेशके चरणकमलका दर्शन होगा। तुम तो विषयी हो, अतः तुम्हें राधा-माधवकी दासता कहाँसे प्राप्त होगी? इसलिये महाभाग! तुम उससे निवृत्त हो जाओ; क्योंकि वह परम दुर्लभ है।' यों सुनकर मेरा मन टूट गया और मैं उस तपस्यासे विरत हो गया। पर उस तपस्याके फलस्वरूप मेरा वह मनोरथ आज परिपूर्ण हो गया।

श्रीमहादेवजीने कहा—देवि! ब्रह्मा आदि देवता, मुनिगण, मनु, सिद्ध, संत और योगीलोग ध्याननिष्ठ हो जिनके चरणकमलका, जो पद्माद्वारा कमल-पुष्पोंसे समर्चित एवं अत्यन्त दुर्लभ है, निरन्तर ध्यान करते रहते हैं; परंतु स्वप्नमें भी उसका दर्शन नहीं कर पाते, तुम उन्हींके वक्षः-स्थलपर वास करनेवाली हो।

अनन्त बोले—सुव्रते! वेद, वेदमाता, पुराण, मैं (शेषनाग), सरस्वती और संतगण तुम्हारी स्तुति करनेमें समर्थ नहीं हैं।

नारद! इस प्रकार वहाँ जितने देव, देवी तथा अन्यान्य मुनि, मनु आदि आये थे, उन सबने विनम्रभावसे राधाका स्तवन किया। यह देखकर रुक्मिणी आदि महिलाओंका मुख लज्जासे झुक गया। उन्होंने अपने शोकोच्छ्वाससे रत्नदर्पणको मलिन कर दिया। निराहारा कृशोदरी सत्यभामा तो मृतक-तुल्य हो गयी, उसके मनका सारा गर्व गल गया। (अध्याय १२३)

वसुदेवजीका शंकरजीसे भव-तरणका उपाय पूछना, शंकरजीका उन्हें ज्ञानोपदेश देकर राजसूय-यज्ञ करनेका आदेश देना, वसुदेवजीद्वारा राजसूय-यज्ञका अनुष्ठान और यज्ञान्तमें सर्वस्व दक्षिणामें देकर उनका द्वारकाको लौटना

नारदजीने पूछा—विभो! गणेशपूजन और राधास्तोत्रसे बढ़कर वहाँ कौन-सी रहस्यमयी घटना घटित हुई; उसका मुझसे विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिये।

श्रीभगवान् बोले—नारद! गणेशपूजन-तीर्थमें जितने देवता, मुनि और योगीन्द्र पधारे हुए थे; वे सभी वटवृक्षके नीचे समासीन थे। उनमेंसे शम्भु, ब्रह्मा, शेषनाग और श्रेष्ठ मुनियोंसे वसुदेव और देवकीने परमादरपूर्वक यों प्रश्न किया—'हे महाभाग! आप लोग दीनोंके बन्धु हैं; अतः शीघ्र ही बताइये कि हम दीनोंके लिये इस भवसागरसे पार करनेवाला कौन-सा उत्तम साधन है? आप लोग भवसागरसे पार करनेवाली नौकाके नाविक हैं; क्योंकि न तो तीर्थ ही केवल जलमय हैं और न देवगण ही केवल मिट्टी और पत्थरकी मूर्तिमात्र होते हैं। जितने यज्ञ, पुण्य, व्रत-उपवास, तप, अनेकविध दान, विप्रों और देवताओंकी अर्चनाएँ हैं; ये सभी चिरकालमें कर्ताको पावन बनाती हैं; परंतु वैष्णवजन दर्शनसे ही पवित्र कर देते हैं। विष्णुभक्त संतोंके पावन चरणकमलोंकी रजके स्पर्शमात्रसे वसुन्धरा तत्काल ही पावन हो जाती है और तीर्थ, समुद्र तथा पर्वत भी पवित्र हो जाते हैं। देवगण भी उन वैष्णवोंके पातकरूपी ईंधनका विनाश कर देनेवाले दर्शनकी अभिलाषा करते हैं। जैसे दूध, दही और रस परम स्वादिष्ट होते हैं; उसी प्रकार ज्ञान परमानन्ददायक होता है। उस ज्ञानको जो ज्ञानीके साहचर्यसे नहीं समझ पाता, वह अज्ञानी है। ज्ञानियोंके गुरुके भी गुरु भगवन्! जैसे मैं श्रीकृष्णका पिता और चिरकालका सङ्गी हूँ; उसी तरह देवकी भी उनकी माता है। वसुदेवजीकी बात सुनकर स्वयं भगवान् शंकर, जो चारों वेदोंके भी जनक एवं गुरु हैं, हँस पड़े और इस-प्रकार बोले।

श्रीमहादेवजीने कहा—अहो! ज्ञानियोंके संनिकट रहना भी उनके अनादरका ही कारण होता है; जैसे गङ्गाके जलसे पवित्र हुए लोग भी (गङ्गाका अनादर करके) सिद्धिके लिये अन्य तीर्थोंमें जाते हैं। वासुदेवके पिता ये वसुदेव स्वयं पण्डित हैं और अपने पिता वसुस्वरूप ज्ञानी कश्यपके अंशसे उत्पन्न हुए हैं। इनकी श्रीकृष्णमें पुत्र-बुद्धि है; इसीलिये ये श्रीकृष्णके अङ्गभूत हम लोगोंसे ज्ञान पूछ रहे हैं।

तदनन्तर श्रीमहादेवजीने सर्वकारणकारण भगवान् श्रीकृष्णकी महिमाका वर्णन करके कहा—'यदुवंशी वसुदेव! सर्वेश्वर श्रीकृष्ण ही सबके मूलरूप हैं; अतः राजसूय-यज्ञका अनुष्ठान करके उसमें अपने पुत्र श्रीकृष्णकी, जो यज्ञके कारण एवं यज्ञेश हैं, समर्चना करो; फिर विधिपूर्वक दक्षिणा देकर भवसागरसे पार हो जाओ।'

मुने! शिवजीका कथन सुनकर जितेन्द्रिय वसुदेवजीने सामग्री जुटाकर शुभ मुहूर्तमें राजसूय-यज्ञका अनुष्ठान किया। उस यज्ञमें साक्षात् यज्ञेश और दक्षिणासहित ये यज्ञ वर्तमान थे; अतः देवताओंने साक्षात् प्रकट होकर वसुदेवजीके हव्यको ग्रहण किया। तदनन्तर जब वसुदेवजी पूर्णाहुति दे चुके; तब श्रीकृष्णकी आज्ञासे भगवान् सनत्कुमारने उनसे सर्वस्व दक्षिणामें देनेके लिये कहा। तब जिनके नेत्र और मुख प्रफुल्लित थे; उन वसुदेवजीने श्रीसनत्कुमारजीके आदेशानुसार ब्राह्मणोंको सर्वस्व दक्षिणारूपमें प्रदान कर दिया और ब्राह्मणोंके शुभ मुखोंद्वारा देवताओंको तृप्त

किया। तत्पश्चात् देवगण और मुनिसमुदाय उस रातमें अपनी पत्नियोंके साथ वहाँ सुखपूर्वक रहे और प्रातःकाल होनेपर वे सभी श्रीकृष्णकी अनुमतिसे अपने-अपने स्थानको चले गये। तब सभी यदुवंशी भी रुक्मिणीकी दृष्टि पड़नेसे अमूल्य रत्नोंसे परिपूर्ण एवं श्रीकृष्णद्वारा सुरक्षित द्वारकाको प्रस्थान कर गये।

(अध्याय १२४)

राधा और श्रीकृष्णका पुनः मिलाप, राधाके पूछनेपर श्रीकृष्णद्वारा अपना तथा राधाका रहस्योद्घाटन

श्रीनारायण कहते हैं—नारद! इस प्रकार माधवने यादवों, देवों, मुनियों तथा अन्यान्य व्यक्तियों और देवियोंके साथ गणेश-पूजनका कार्य सम्पन्न किया। तत्पश्चात् वे अपने एक अंशसे रुक्मिणी आदि देवियोंके साथ रमणीय द्वारकापुरीको चले गये; किंतु स्वयं साक्षात्‌रूपसे सिद्धाश्रममें ही ठहर गये। वहाँ वे गोलोकवासी गोप-सखाओं, नन्द तथा माता यशोदा-गोपीके साथ प्रेमपूर्वक वार्तालाप करके पुनः माता, पिता, गोकुलवासी गोपों तथा बन्धुवर्गोंसे नीतियुक्त यथोचित वचन बोले।

श्रीभगवान्‌ने कहा—पिताजी! अब अपने व्रजको लौट जाओ। परम श्रेष्ठ यशस्विनी माता यशोदे! तुम भी उत्तम गोकुलको जाओ और वहाँ आयुके शेष कालपर्यन्त भोगोंका उपभोग करो। इतना कहकर भगवान् श्रीकृष्ण माता-पिताकी आज्ञा ले राधिकाके स्थानको चले गये तथा नन्दजी गोकुलको प्रस्थित हुए। वहाँ पहुँचकर श्रीकृष्णने मुस्कराती हुई सुन्दरी राधाको देखा। उनकी तरुणता नित्य स्थिर रहनेवाली थी, जिससे उनकी अवस्था द्वादश वर्षकी थी। मोतियोंका हार उनकी शोभा बढ़ा रहा था; वे रत्ननिर्मित ऊँचे आसनपर विराजमान थीं। उस समय मुस्कराती हुई असंख्य गोपियाँ हाथोंमें बेंत लिये उन्हें घेरे हुए थीं।

उधर प्राणवल्लभा राधाने भी दूरसे ही श्रीकृष्णको आते देखा। उनका परम सौन्दर्यशाली सुन्दर बालक-वेष था। वे मन्द-मन्द मुस्करा रहे थे। उनके शरीरकी कान्ति नवीन मेघके समान श्याम थी; वे रेशमी पीताम्बर धारण किये हुए थे; उनका सर्वाङ्ग चन्दनसे अनुलिप्त था; रत्नोंके आभूषण उन्हें सुशोभित कर रहे थे; उनकी शिखामें मयूर-पिच्छ शोभा दे रहा था; वे मालतीकी मालासे विभूषित थे; उनका प्रसन्नमुख मन्द हास्यकी छटा बिखेर रहा था; वे साक्षात् भक्तानुग्रहमूर्ति थे तथा मनोहर प्रफुल्ल क्रीडाकमल लिये हुए थे; उनके एक हाथमें मुरली और दूसरे हाथमें सुप्रशस्त दर्पण शोभा पा रहा था। उन्हें देखकर राधा तुरंत ही गोपियोंके साथ उठ खड़ी हुईं और परम भक्तिपूर्वक उन परमेश्वरको सादर प्रणाम करके उनकी स्तुति करने लगीं।

राधिका बोलीं—नाथ! तुम्हारे मुखचन्द्रको देखकर आज मेरा जन्म लेना सार्थक और जीवन धन्य हो गया तथा मेरे नेत्र और मन परम प्रसन्न हो गये। पाँचों प्राण स्नेहार्द्र और आत्मा हर्षविभोर हो गया; दुर्लभ बन्धुदर्शन दोनों (द्रष्टा और दृश्य)-के हर्षका कारण होता है। विरहाग्निसे जली हुई मैं शोकसागरमें डूब रही थी। तुमने अपनी पीयूषवर्षिणी दृष्टिसे मेरी ओर निहारकर मुझे भलीभाँति अभिषिक्त कर दिया; जिससे मेरा ताप जाता रहा। तुम्हारे साथ रहनेपर मैं शिवा, शिवप्रदा, शिवबीजा और

शिवस्वरूपा हूँ; किंतु तुमसे वियुक्त हो जानेपर मैं अदृष्ट हो जाती हूँ और मेरी सारी चेष्टाएँ नष्ट हो जाती हैं। तुम्हारे समीप स्थित रहनेपर देह शोभासम्पन्न, पवित्र और सर्वशक्तिस्वरूप दीखता है; परंतु तुम्हारे चले जानेपर वह शवरूप हो जाता है। नाथ! स्त्री-पुरुषका सामान्य वियोग भी अत्यन्त दारुण होता है। यहाँ तो परमात्माके वियोगसे पाँचों प्राण शक्तियोंके सहित ही निकल जाते हैं।

यों कहकर देवी राधिकाने परमात्मा श्रीकृष्णको अपने आसनपर बैठाया और हर्षपूर्वक उनके चरणोंकी पूजा की। तत्पश्चात् शोभाशाली श्रीकृष्ण राधाके साथ रत्नसिंहासनपर विराजमान हुए। उस समय गोपियाँ निरन्तर श्वेत चँवर डुलाकर उनकी सेवा कर रही थीं। चन्दनाने श्रीहरिके शरीरमें सुगन्धित चन्दनका अनुलेप किया। मुस्कराती हुई रत्नमालाने श्रीहरिके गलेमें रत्नमाला पहनायी। सती पद्मावतीने पद्माद्वारा कमल-पुष्पोंसे समर्चित चरणकमलमें जल, दूब, पुष्प और चन्दनयुक्त अर्घ्य प्रदान किया। मालतीने श्रीहरिकी चूड़ाको मालतीकी मालासे सुशोभित किया। सती पार्वतीने चम्पाके पुष्पका पुटक समर्पित किया। पारिजाताने हर्षमग्न हो श्रीहरिको पारिजात-पुष्प, कपूरयुक्त ताम्बूल और सुवासित शीतल जल निवेदित किया। कदम्बमालाने कदम्ब-पुष्पोंकी शुभ माला, प्रफुल्लित क्रीड़ा-कमल और अमूल्य रत्नदर्पण समर्पित किया। सुकोमला कमलाने पूर्वकालमें वरुणद्वारा दिये हुए दोनों सुन्दर वस्त्रोंको श्रीहरिके हाथमें ही रख दिया। सुन्दरी वधूने साक्षात् श्रीहरिको गोरोचनकी-सी आभावाले एवं मधुर मधुसे परिपूर्ण मधुपात्र दिया। सुधामुखीने भक्तिपूर्वक अमृतसे लबालब भरा हुआ अमृतपात्र प्रदान किया। किसी दूसरी गोपीने प्रफुल्लित मालती-पुष्पोंके मालाजालसे विभूषित एवं चन्दनचर्चित पुष्पशय्या तैयार की। वह शय्या एक ऐसे परम मनोहर भवनमें सजायी गयी थी, जिसका निर्माण बहुमूल्य रत्नोंके सारभागसे हुआ था; श्रेष्ठ मणि, मोती, माणिक्य और हीरोंके हार जिसकी विशेष शोभा बढ़ा रहे थे; कस्तूरी और कुंकुमयुक्त वायु जिसे सुगन्धित बना रही थी; जलते हुए सैकड़ों रत्नदीपोंसे जो उद्दीप्त हो रहा था और नाना प्रकारकी वस्तुओंसे समन्वित धूपोंद्वारा जो निरन्तर धूपित रहता था। वहाँ रतिकरी शय्याका निर्माण करके गोपियाँ हँसती हुई चली गयीं। तब एकान्तमें मनको आकर्षित करनेवाली उस परम रमणीय शय्याको देखकर राधा-माधव उसपर विराजमान हुए। उस समय सती राधाने माधवके गलेमें माला पहनायी, मुखमें सुवासित ताम्बूलका बीड़ा दिया; फिर श्यामसुन्दरके वक्षःस्थलपर कस्तूरी-कुंकुमयुक्त चन्दनका अनुलेप किया, उनकी शिखामें चम्पाका सुन्दर पुष्प लगाया, हाथमें सहस्रदलयुक्त क्रीड़ा-कमल दिया और उनके हाथसे मुरली छीनकर उसमें रत्नदर्पण पकड़ा दिया तथा उनके आगे पारिजातका खिला हुआ रुचिर पुष्प रख दिया। तत्पश्चात् जो शान्तमूर्ति, कमनीय और नायिकाके मनको हर लेनेवाले हैं तथा मन्द-मन्द मुस्करा रहे थे; उन प्रियतम श्रीकृष्णसे राधा एकान्तमें मुस्कराती हुई मधुर वचन बोलीं।

श्रीराधिकाने कहा—नाथ! जो स्वयं मङ्गलोंका भण्डार, सम्पूर्ण मङ्गलोंका कारण, मङ्गलरूप तथा मङ्गलोंका प्रदाता है, उसके विषयमें कुशल-मङ्गलका प्रश्न करना तो निष्फल ही है; तथापि इस समय कुशल पूछना समयानुसार उचित है; क्योंकि लौकिक व्यवहार वेदोंसे भी बली माना जाता है। इसलिये रुक्मिणीकान्त! सत्यभामाके प्राणपति! इस समय

कुशल तो है न? तदनन्तर श्रीराधाने भगवान् श्रीकृष्णसे उनके स्वरूप तथा अवतार-लीलाके सम्बन्धमें प्रश्न किया।

तब श्रीकृष्ण बोले—राधे! जिसे सुनकर मूर्ख हलवाहा भी तत्काल ही पण्डित हो जाता है, उस सर्वश्रेष्ठ आध्यात्मिक ज्ञानका मैं वर्णन करता हूँ, सुनो। राधे! मैं स्वभावसे ही सब लोकोंका स्वामी हूँ, फिर रुक्मिणी आदि महिलाओंकी तो बात ही क्या है। मैं कार्य-कारणरूपसे पृथक्-पृथक् व्यक्त होता हूँ। मैं स्वयं ज्योतिर्मय हूँ, समस्त विश्वोंका एकमात्र आत्मा हूँ और तृणसे लेकर ब्रह्मापर्यन्त सम्पूर्ण प्राणियोंमें व्याप्त हूँ। गोलोकमें मैं स्वयं परिपूर्णतम श्रीकृष्णरूपसे वर्तमान रहता हूँ और रमणीय क्षेत्र गोकुलके 'वृन्दावन' नामक वनमें मैं ही राधापति हूँ। उस समय मैं द्विभुज होकर गोपवेषमें शिशुरूपसे क्रीडा करता हूँ; ग्वाले, गोपियाँ और गौएँ ही मेरी सहायक होती हैं। वैकुण्ठमें मैं चतुर्भुजरूपसे रहता हूँ; वहाँ मैं ही लक्ष्मी और सरस्वतीका प्रियतम हूँ और सदा शान्तरूपसे वास करता हूँ। इस प्रकार मैं सनातन परमेश्वर ही दो रूपोंमें विभक्त हूँ। भूतलपर, श्वेतद्वीप और क्षीरसागरमें मानसी, सिन्धुकन्या और मर्त्यलक्ष्मीके जो पति हैं, वह भी मैं ही हूँ और वहाँ भी मैं चतुर्भुजरूपसे ही रहता हूँ। मैं स्वयं नारायण ऋषि हूँ और धर्मवक्ता, धर्मिष्ठ तथा धर्म-मार्गके प्रवर्तक सनातन धर्म नर हैं। धर्मिष्ठा तथा पतिव्रता शान्ति लक्ष्मीस्वरूपा है और इस पुण्यक्षेत्र भारतवर्षमें मैं उसका पति हूँ। मैं ही सिद्धेश्वर, सिद्धियोंके दाता और साक्षात् कपिल हूँ। सुन्दरि! इस प्रकार व्यक्तिभेदसे मैं नाना रूप धारण करता हूँ। चतुर्भुजरूपधारी मैं ही सदा द्वारकामें रुक्मिणीका स्वामी होता हूँ, क्षीरसागरमें शयन करनेवाला मैं ही सत्यभामाके शुभ भवनमें वास करता हूँ तथा अन्यान्य रानियोंके महलोंमें मैं ही पृथक्-पृथक् शरीर धारण करके क्रीड़ा करता हूँ। मैं नारायण ऋषि ही इस अर्जुनका सारथि हूँ। अर्जुन नर-ऋषि है, धर्मका पुत्र है, बलवान् है और मेरे अंशसे भूतलपर उत्पन्न हुआ है। उसने पुष्करक्षेत्रमें सारथि-कार्यके लिये तपस्याद्वारा मेरी आराधना की है।

राधे! जैसे तुम गोलोकमें राधिकादेवी हो, उसी तरह गोकुलमें भी हो। तुम्हीं वैकुण्ठमें महालक्ष्मी और सरस्वती हो। क्षीरोदशायीकी प्रियतमा मर्त्यलक्ष्मी तुम्हीं हो। धर्मकी पुत्रवधू लक्ष्मीस्वरूपिणी शान्तिके रूपमें तुम्हीं वर्तमान हो। भारतवर्षमें कपिलकी प्यारी पत्नी सती भारती तुम्हारा ही नाम है। तुम्हीं मिथिलामें सीता नामसे विख्यात हो। सती द्रौपदी तुम्हारी ही छाया है। द्वारकामें महालक्ष्मीके अंशसे प्रकट हुई सती रुक्मिणीके रूपमें तुम्हीं वास करती हो। पाँचों पाण्डवोंकी पत्नी द्रौपदी तुम्हारी कला है। तुम्हीं रामकी पत्नी सीता हो; रावणने तुम्हारा ही अपहरण किया था। सति! जैसे तुम अपनी छाया और कलासे नाना रूपोंमें प्रकट हो, वैसे ही मैं भी अपने अंश और कलासे अनेक रूपोंमें व्यक्त हूँ। मैं ही परिपूर्णतम परात्पर परमात्मा हूँ। सती राधे! इस प्रकार मैंने तुम्हें यह सारा आध्यात्मिक ज्ञान बता दिया। परमेश्वरि! अब तुम मेरे सारे अपराधोंको क्षमा कर दो। श्रीकृष्णका कथन सुनकर राधिका तथा सभी गोपिकाओंको महान् हर्ष हुआ। वे सभी परमेश्वर श्रीकृष्णको प्रणाम करने लगीं। (अध्याय १२५)

श्रीकृष्णका राधाके साथ विभिन्न स्थलोंमें विहार करके पुनः गोकुलमें जाना, वहाँ उनका स्वागत-सत्कार, यशोदाका राधासहित श्रीकृष्णको महलमें ले जाना और मङ्गल-महोत्सव करना

तदनन्तर राधिकाने कहा—महाभाग! अब पुण्यमय वृन्दावनमें स्थित रासमण्डलको चलिये; वहाँ मैं आपके साथ जलमें तथा स्थलपर क्रीड़ा करूँगी। पुनः मलयपर्वत और सुन्दर मणिमन्दिरको चलूँगी। इनके अतिरिक्त जो दूसरे रहस्यमय स्थान हैं, जिन्हें मैंने जन्मसे लेकर आजतक सुना ही नहीं है; उन-उन स्थानोंमें भी आपके साथ चलूँगी—ऐसी मेरी उत्कृष्ट लालसा है।

यों परस्पर वार्तालाप करते ही वह मङ्गलमयी रात्रि व्यतीत हो गयी। अरुणोदय बेला आ पहुँची तथापि सती राधाने माधवको छोड़ना नहीं चाहा। तब श्रीकृष्णने युक्तिपूर्वक प्रेमभरे वचनोंसे राधाको समझाया। तदनन्तर शरत्कालीन कमलके-से विशाल नेत्रोंवाले श्रीहरि प्रातःकृत्य समाप्त करके राधा तथा गोपियोंके साथ एक ऐसे रथपर सवार हुए, जो गोलोकसे आया था। वह मनोहर तथा मनके समान वेगशाली रथ एक योजन लंबा-चौड़ा था, उसमें सहस्रों पहिये लगे थे, बहुमूल्य मणियोंके बने हुए तीन सौ करोड़ चमकीले गृहोंसे वह सुशोभित था, तीन करोड़ मणिस्तम्भों और रत्नोंकी झालरोंसे उसकी विशेष शोभा हो रही थी; मुक्ता, माणिक्य और उत्तम हीरेके हारोंसे वह परम सुहावना लग रहा था; वह नाना प्रकारकी विचित्र चित्रकारियों, श्वेत चँवर और दर्पणों, अग्निशुद्ध चमकीले वस्त्रों और मालासमूहोंसे विभूषित था; उसमें रत्नोंकी बनी हुई पुष्पचन्दनचर्चित अनेकों शय्याएँ शोभा दे रही थीं, समान रूप और वेषवाली लाखों गोपियोंसे वह समावृत था और उसे एक हजार घोड़े खींच रहे थे। उस रथसे भगवान् पुनः वृन्दावनमें गये। वहाँ पहुँचकर उन्होंने रात्रिके समय जलस्थलपर विहार किया और राधिकाको वहाँके सभी पदार्थोंको इस रूपमें दिखलाया, मानो सभी नवीन प्रकट हुए हों।

पुनः सुन्दर शृङ्गार करके वनों और उपवनोंमें, विस्यन्दक, सुरसन, माहेन्द्र और नन्दनवनमें, सुमेरुकी चोटी तथा रमणीय गन्धमादन पर्वतपर, सुन्दर-सुन्दर पर्वत, कन्दरा और वनमें, अत्यन्त गुप्त पुष्पोद्यानोंमें, प्रत्येक नदियों और नदोंके जलमें, समुद्रके तटपर, पारिजात-वृक्षोंके मनोहर वनमें सुभद्र, पुष्पभद्र और नारायण सरोवरपर, पवनके आवासस्थान तथा देवताओंकी निवासभूमि मलय पर्वतपर, त्रिकूट, भद्रकूट, पञ्चकूट और सुकूटपर, देवोंकी स्वर्णमयी कमनीय भूमिपर, प्रत्येक समुद्रपर तथा मनोहर द्वीपमें, श्रेष्ठ स्वर्गलोकमें, पुण्यमय रुचिर चन्द्रसरोवरपर और मुनियोंके आश्रमोंके आस-पास उन्होंने राधाके साथ विहार किया। पुनः शीघ्र ही पुण्यप्रद जम्बूद्वीपमें आकर द्वारका तथा रैवतक पर्वतको दिखलाया। फिर गोप और गो-समूहसे व्याप्त गोकुलमें आये। वहाँ भाण्डीरवटको देखकर वे पुण्यमय वृन्दावनमें गये।

श्रीकृष्णका आगमन सुनकर नन्द, यशोदा और बूढ़े गोप तथा गोपियोंकी आकुलता जाती रही और उनके नेत्रोंमें हर्षके आँसू छलक आये। फिर तो उन्होंने गजराज, नटी, नट, नर्तक, पति-पुत्रवती साध्वी ब्राह्मणी और ब्राह्मणोंको आगे करके उनका उसी प्रकार स्वागत किया, जैसे देवगण अग्निका करते हैं। तब माधव नन्द तथा माता यशोदाको देखकर राधाके साथ बालकृष्ण-रूपमें उनके निकट आये। फिर मधुसूदन हँसकर माताकी गोदमें जा बैठे। तब यशोदासहित नन्द उनका मुख-कमल चूमने लगे और स्नेहवश छातीसे लगाकर नेत्रोंके अश्रुजलसे उन्हें सींचने

लगे। उधर स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण यशोदाका स्तनपान करनेमें जुट गये। उस समय सभी लोगोंने श्रीकृष्णको उसी रूपमें देखा, जिस रूपमें वे मथुरा गये थे। उनके हाथमें मुरली शोभा पा रही थी, वे रत्नोंके आभूषणोंसे विभूषित थे, उनकी ग्यारह वर्षकी किशोर अवस्था थी, पीताम्बर उनकी शोभा बढ़ा रहा था, शिखामें मयूरपिच्छकी निराली छटा थी और वे मालतीकी मालाओंसे सुसज्जित थे। तत्पश्चात् यशोदा राधासहित माधवको महलके भीतर लिवा ले गयीं। वहाँ उन्होंने माङ्गलिक कार्य सम्पन्न करके ब्राह्मणोंको भोजन कराया और गोपियोंका उसी प्रकार पूजन किया जैसे लोग मुनियोंका करते हैं। फिर आनन्दमग्न हो ब्राह्मणोंको मणि, रत्न, मूँगा, उत्तम सुवर्ण, मोती, माणिक्य, हीरा, गजरत्न, गोरत्न, मनोहर अश्वरत्न, धान्य, फसल लगी हुई खेती और वस्त्र दान किये। राधाके साथ माधवको अपूर्व वस्तुका दर्शन कराया। नारद! फिर गोपियोंको भी आदरपूर्वक मिष्टान्नका भोजन कराया, दुन्दुभियाँ बजवायीं, मङ्गल कराया और देवगणोंको आनन्दपूर्वक मनोहर पदार्थोंका भोग समर्पित किया।

(अध्याय १२६)

श्रीकृष्णद्वारा नन्दको ज्ञानोपदेश और राधा-कलावती आदि गोपियोंका गोलोक-गमन

श्रीनारायण कहते हैं—नारद! जहाँ पहले ब्राह्मणपत्नियोंने श्रीकृष्णको अन्न दिया था; उस भाण्डीर-वटकी छायामें श्रीकृष्ण स्वयं विराजमान हुए और वहीं समस्त गोपोंको बुलवा भेजा। श्रीहरिके वामभागमें राधिकादेवी, दक्षिणभागमें यशोदासहित नन्द, नन्दके दाहिने वृषभानु और वृषभानुके बायें कलावती तथा अन्यान्य गोप, गोपी, भाई-बन्धु तथा मित्रोंने आसन ग्रहण किया। तब गोविन्दने उन सबसे समयोचित यथार्थ वचन कहा।

श्रीभगवान् बोले—नन्द! इस समय जो समयोचित, सत्य, परमार्थ और परलोकमें सुखदायक है; उसका वर्णन करता हूँ, सुनो। ब्रह्मासे लेकर स्तम्बपर्यन्त सभी पदार्थ बिजलीकी चमक, जलके ऊपर की हुई रेखा और पानीके बुलबुलेके समान भ्रमरूप ही हैं—ऐसा जानो। मैंने मथुरामें तुम्हें सब कुछ बतला दिया था, कुछ भी उठा नहीं रखा था। उसी प्रकार कदलीवनमें राधिकाने यशोदाको समझाया था। वही परम सत्य भ्रमरूपी अन्धकारका विनाश करनेके लिये दीपक है; इसलिये तुम मिथ्या मायाको छोड़कर उसी परम पदका स्मरण करो। वह पद जन्म-मृत्यु-जरा-व्याधिका विनाशक, महान् हर्षदायक, शोक-संतापका निवारक और कर्ममूलका उच्छेदक है। मुझ परम ब्रह्म सनातन भगवान्‌का बारंबार ध्यान करके तुम उस परम पदको प्राप्त करो। अब कर्मकी जड़ काट देनेवाले कलियुगका आगमन संनिकट है; अतः तुम शीघ्र ही गोकुलवासियोंके साथ गोलोकको चले जाओ। तदनन्तर भगवान्‌ने कलियुगके धर्म तथा लक्षणोंका वर्णन किया।

विप्रवर! इसी बीच वहाँ व्रजमें लोगोंने सहसा गोलोकसे आये हुए एक मनोहर रथको देखा। वह रथ चार योजन विस्तृत और पाँच योजन ऊँचा था; बहुमूल्य रत्नोंके सारभागसे उसका निर्माण हुआ था। वह शुद्ध स्फटिकके समान उद्भासित हो रहा था; विकसित पारिजात-पुष्पोंकी मालाओंसे उसकी विशेष शोभा हो रही थी; वह कौस्तुभमणियोंके आभूषणोंसे विभूषित था; उसके ऊपर अमूल्य रत्नकलश चमक रहा था; उसमें हीरेके हार लटक रहे थे; वह सहस्रों

करोड़ मनोहर मन्दिरोंसे व्याप्त था; उसमें दो हजार पहिये लगे थे और दो हजार घोड़े उसका भार वहन कर रहे थे तथा उसपर सूक्ष्म वस्त्रका आवरण पड़ा हुआ था एवं वह करोड़ों गोपियोंसे समावृत था। नारद! राधा और धन्यवादकी पात्र कलावती देवीका जन्म किसीके गर्भसे नहीं हुआ था। यहाँतक कि गोलोकसे जितनी गोपियाँ आयी थीं; वे सभी अयोनिजा थीं। उनके रूपमें श्रुतिपत्नियाँ ही अपने शरीरसे प्रकट हुई थीं। वे सभी श्रीकृष्णकी आज्ञासे अपने नश्वर शरीरका त्याग करके उस रथपर सवार हो उत्तम गोलोकको चली गयीं। साथ ही राधा भी गोकुलवासियोंके साथ गोलोकको प्रस्थित हुईं।

ब्रह्मन्! मार्गमें उन्हें विरजा नदीका मनोहर तट दीख पड़ा, जो नाना प्रकारके रत्नोंसे विभूषित था। उसे पार करके वे शतशृङ्ग पर्वतपर गयीं। वहाँ उन्होंने अनेक प्रकारके मणिसमूहोंसे व्याप्त सुसज्जित रासमण्डलको देखा। उससे कुछ दूर आगे जानेपर पुण्यमय वृन्दावन मिला। आगे बढ़नेपर अक्षयवट दिखायी दिया, उसकी करोड़ों शाखाएँ चारों ओर फैली हुई थीं। वह सौ योजन विस्तारवाला और तीन सौ योजन ऊँचा था और लाल रंगके बड़े-बड़े फलसमूह उसकी शोभा बढ़ा रहे थे। उसके नीचे मनोहर वृन्दा हजारों-करोड़ों गोपियोंके साथ विराजमान थीं। उसे देखकर राधा तुरंत ही रथसे उतरकर आदरसहित मुस्कराती हुई उसके निकट गयीं। वृन्दाने राधाको नमस्कार किया। तत्पश्चात् रासेश्वरी राधासे वार्तालाप करके वह उन्हें अपने महलके भीतर लिवा ले गयी। वहाँ वृन्दाने राधाको हीरेके हारोंसे समन्वित एक रमणीय रत्नसिंहासनपर बैठाया और स्वयं उनकी चरणसेवामें जुट गयी। सात सखियाँ श्वेत चँवर डुलाकर उनकी सेवा करने लगीं। इतनेमें परमेश्वरी राधाको देखनेके लिये सभी गोपियाँ वहाँ आ पहुँचीं। तब राधाने नन्द आदिके लिये पृथक्-पृथक् आवासस्थानकी व्यवस्था की। तदनन्तर परमानन्दरूपा गोपिका राधा परमानन्दपूर्वक सबके साथ अपने परम रुचिर भवनको प्रस्थित हुईं। (अध्याय १२७)

श्रीकृष्णके गोलोकगमनका वर्णन

श्रीनारायण कहते हैं—नारद! परिपूर्णतम प्रभु भगवान् श्रीकृष्ण वहाँ तत्काल ही गोकुलवासियोंके सालोक्य मोक्षको देखकर भाण्डीरवनमें वटवृक्षके नीचे पाँच गोपोंके साथ ठहर गये। वहाँ उन्होंने देखा कि सारा गोकुल तथा गो-समुदाय व्याकुल है। रक्षकोंके न रहनेसे वृन्दावन शून्य तथा अस्त-व्यस्त हो गया है। तब उन कृपासागरको दया आ गयी। फिर तो, उन्होंने योगधारणाद्वारा अमृतकी वर्षा करके वृन्दावनको मनोहर, सुरम्य और गोपों तथा गोपियोंसे परिपूर्ण कर दिया। साथ ही गोकुलवासी गोपोंको ढाढस भी बँधाया। तत्पश्चात् वे हितकर नीतियुक्त दुर्लभ मधुर वचन बोले।

श्रीभगवान्‌ने कहा—हे गोपगण! हे बन्धो! तुम लोग सुखका उपभोग करते हुए शान्तिपूर्वक यहाँ वास करो; क्योंकि प्रियाके साथ विहार, सुरम्य रासमण्डल और वृन्दावन नामक पुण्यवनमें श्रीकृष्णका निरन्तर निवास तबतक रहेगा, जबतक सूर्य और चन्द्रमाकी स्थिति रहेगी। तत्पश्चात् लोकोंके विधाता ब्रह्मा भी भाण्डीरवनमें आये। उनके पीछे स्वयं शेष, धर्म, भवानीके साथ स्वयं शंकर, सूर्य, महेन्द्र, चन्द्र, अग्नि, कुबेर, वरुण, पवन, यम, ईशान आदि देव, आठों वसु, सभी ग्रह, रुद्र, मुनि तथा मनु—ये सभी शीघ्रतापूर्वक वहाँ आ पहुँचे, जहाँ सामर्थ्यशाली भगवान् श्रीकृष्ण

विराजमान थे। तब स्वयं ब्रह्माने दण्डकी भाँति भूमिपर लेटकर उन्हें प्रणाम किया और यों कहा।

ब्रह्मा बोले—भगवन्! आप परिपूर्णतम ब्रह्मस्वरूप, नित्य विग्रहधारी, ज्योतिःस्वरूप, परमब्रह्म और प्रकृतिसे परे हैं, आपको मेरा नमस्कार प्राप्त हो। परमात्मन्! आप परम निर्लिप्त, निराकार, ध्यानके लिये साकार, स्वेच्छामय और परमधाम हैं; आपको प्रणाम है। सर्वेश! आप सम्पूर्ण कार्यस्वरूपोंके स्वामी, कारणोंके कारण और ब्रह्मा, शिव, शेष आदि देवोंके अधिपति हैं, आपको बारंबार अभिवादन है। परात्पर! आप सरस्वती, पद्मा, पार्वती, सावित्री और राधाके स्वामी हैं; रासेश्वर! आपको मेरा प्रणाम स्वीकार हो। सृष्टिरूप! आप सबके आदिभूत, सर्वरूप, सर्वेश्वर, सबके पालक और संहारक हैं; आपको नमस्कार प्राप्त हो। हे नाथ! आपके चरणकमलकी रजसे वसुन्धरा पावन तथा धन्य हुई है; आपके परमपद चले जानेपर यह शून्य हो जायगी। इसपर क्रीड़ा करते आपके एक सौ पचीस वर्ष बीत गये। अब आप इस विरहातुरा रोती हुई पृथ्वीको छोड़कर अपने धामको पधार रहे हैं।

श्रीमहादेवजीने कहा—विभो! आप ब्रह्माकी प्रार्थनासे भूतलपर अवतीर्ण हो पृथ्वीका भार हरण करके अपने पदको जा रहे हैं। आपके चरणोंसे अङ्कित हुई भूमि तुरंत ही पावन और तीनों लोकोंमें धन्य हो गयी। आपके चरणकमलका साक्षात् दर्शन करके हम लोग और मुनिगण धन्य हो गये। जो ऊर्ध्वरेता मुनियोंके लिये ध्यानद्वारा असाध्य, दुराराध्य और निष्पाप हैं; वे ही परमेश्वर इस समय भूतलपर हम लोगोंके दृष्टिगोचर हुए हैं। जिनके रोमकूपोंमें विश्वोंका निवास है, उन सर्वनिवास प्रभुको वासु कहते हैं। उन वासु-स्वरूप महाविष्णुके जो देव हैं, वे भूतलपर 'वासुदेव' नामसे विख्यात हैं। जिनके अनुपम एवं परम दुर्लभ पादपद्म सिद्धेन्द्रोंके चिरकालतक तपस्या करनेपर उपलब्ध होते हैं; वे ही आज सब लोगोंके नेत्रोंके विषय हुए हैं।

अनन्त बोले—नाथ! ऐश्वर्यशाली अनन्त तो आप ही हैं, मैं नहीं हूँ। मैं तो आपका कलांश हूँ। विश्वके एकमात्र आधार उस क्षुद्र कूर्मकी पीठपर मैं उसी तरह दिखायी देता हूँ, जैसे हाथीके ऊपर मच्छर। ब्रह्मा, विष्णु और शिवात्मक असंख्यों शेष और कूर्म हैं तथा विश्व भी असंख्य हैं। उन सबके स्वामी स्वयं आप हैं। नाथ! हम लोगोंका ऐसा सुदिन कहाँ होगा कि स्वप्नमें भी जिनका दर्शन दुर्लभ है, वे ही ईश्वर समस्त जीवोंके दृष्टिगोचर हो रहे हैं। नाथ! आपने ही वसुन्धराको पावन बनाया है। अब शोकसागरमें डूबती एवं रोती हुई उस पृथ्वीको अनाथ करके आप गोलोक पधार रहे हैं।

देवताओंने कहा—भगवन्! देवगण तथा ब्रह्मा और ईशान आदि देवता जिनकी स्तुति करनेमें समर्थ नहीं हैं; उनका स्तवन भला, हम लोग क्या कर सकते हैं; अतः आपको नमस्कार है।

मुने! इतना कहकर वे सभी देवता हर्षमग्न हो द्वारकावासी भगवान्‌का दर्शन करनेके लिये शीघ्र ही द्वारकापुरीको प्रयाण कर गये। उनमें जितने ग्वाले थे, वे सभी उत्तम गोलोकको चले गये। पृथ्वी भयभीत हो काँपने लगी। सातों समुद्र मर्यादारहित हो गये। ब्रह्मशापसे द्वारकाकी शोभा नष्ट हो गयी। तब राधिकापति श्रीकृष्ण उसे त्यागकर कदम्बमूलस्थित मूर्तिमें समा गये। उन सभी यदुवंशियोंका एरकायुद्धमें विनाश हो गया तथा उनकी पत्नियाँ चितामें जलकर अपने-अपने पतियोंकी अनुगामिनी बन गयीं। अर्जुनने हस्तिनापुर जाकर यह समाचार युधिष्ठिरसे कह सुनाया। तब राजा युधिष्ठिर भी पत्नी तथा भाइयोंके साथ स्वर्गको चले गये।

तदनन्तर जो परम आत्मबलसे सम्पन्न, देवाधिदेव, नारायण, प्रभु, श्यामसुन्दर, किशोर

अवस्थावाले और रत्ननिर्मित आभूषणोंसे सुशोभित थे; अग्निशुद्ध वस्त्र जिनका परिधान था; वनमाला जिनकी शोभा बढ़ा रही थी; जो अत्यन्त सुन्दर, शान्त और मनोहर थे; जिनके पद्म आदिद्वारा वन्दित चरणकमलमें व्याधद्वारा छोड़ा हुआ अस्त्र चुभा हुआ था; उन लक्ष्मीकान्त परमेश्वरको कदम्बके नीचे स्थित देखकर ब्रह्मा आदि सभी देवताओंने भक्तिपूर्वक उन्हें प्रणाम किया और फिर उनकी स्तुति की। तब श्रीकृष्णने उन ब्रह्मा आदि देवोंकी ओर मुस्कराते हुए देखकर उन्हें अभयदान दिया। पृथ्वी प्रेमविह्वल हो रो रही थी; उसे पूर्णरूपसे आश्वासन दिया और व्याधको अपने उत्तम परम पदको भेज दिया। तत्पश्चात् बलदेवजीका परम अद्भुत तेज शेषनागमें, प्रद्युम्नका कामदेवमें और अनिरुद्धका ब्रह्मामें प्रविष्ट हो गया। नारद! देवी रुक्मिणी, जो अयोनिजा तथा साक्षात् महालक्ष्मी थीं; अपने उसी शरीरसे वैकुण्ठको चली गयीं। कमलालया सत्यभामा पृथ्वीमें तथा स्वयं जाम्बवतीदेवी जगज्जननी पार्वतीमें प्रवेश कर गयीं। इस प्रकार भूतलपर जो-जो देवियाँ जिन-जिनके अंशसे प्रकट हुई थीं; वे सभी पृथक्-पृथक् अपने अंशीमें विलीन हो गयीं। साम्बका अत्यन्त निराला तेज स्कन्दमें, वसुदेव कश्यपमें और देवकी अदितिमें समा गयीं। विकसित मुख और नेत्रोंवाले समुद्रने रुक्मिणीके महलको छोड़कर शेष सारी द्वारकापुरीको अपने अंदर समेट लिया। इसके बाद क्षीरसागरने आकर पुरुषोत्तम श्रीकृष्णका स्तवन किया। उस समय उनके वियोगके कारण उसके नेत्र अश्रुपूर्ण हो गये और वह व्याकुल होकर रोने लगा। मुने! तत्पश्चात् गङ्गा, सरस्वती, पद्मावती, यमुना, गोदावरी, स्वर्णरेखा, कावेरी, नर्मदा, शरावती, बाहुदा और पुण्यदायिनी कृतमाला—ये सभी सरिताएँ भी वहाँ आ पहुँचीं और सभीने परमेश्वर श्रीकृष्णको नमस्कार किया। उनमें जह्नुतनया गङ्गादेवी विरह-वेदनासे कातर तथा अत्यन्त दीन हो रही थीं। उनके नेत्रोंमें आँसू उमड़ आये थे। वे रोती हुई परमेश्वर श्रीकृष्णसे बोलीं।

भागीरथीने कहा—नाथ! रमणश्रेष्ठ! आप तो उत्तम गोलोकको पधार रहे हैं; किंतु इस कलियुगमें हम लोगोंकी क्या गति होगी?

तब श्रीभगवान् बोले—जाह्नवि! पापी लोग तुम्हारे जलमें स्नान करनेसे तुम्हें जिन पापोंको देंगे; वे सभी मेरे मन्त्रकी उपासना करनेवाले वैष्णवके स्पर्श, दर्शन और स्नानसे तत्काल ही भस्म हो जायँगे। जहाँ हरि-नामसंकीर्तन और पुराणोंकी कथा होगी; वहाँ तुम इन सरिताओंके साथ जाकर सावधानतया श्रवण करोगी। उस पुराण-श्रवण तथा हरि-नाम-संकीर्तनसे ब्रह्महत्या आदि महापातक जलकर राख हो जाते हैं। वे ही पाप वैष्णवके आलिङ्गनसे भी दग्ध हो जाते हैं। जैसे अग्नि सूखी लकड़ी और घास-फूसको जला डालती है; उसी प्रकार जगत्में वैष्णवलोग पापियोंके पापोंको भी नष्ट कर देते हैं। गङ्गे! भूतलपर जितने पुण्यमय तीर्थ हैं; वे सभी मेरे भक्तोंके पावन शरीरोंमें सदा निवास करते हैं। मेरे भक्तोंकी चरण-रजसे वसुन्धरा तत्काल पावन हो जाती है, तीर्थ पवित्र हो जाते हैं तथा जगत् शुद्ध हो जाता है। जो ब्राह्मण मेरे मन्त्रके उपासक हैं, मुझे अर्पित करनेके बाद मेरा प्रसाद भोजन करते हैं और नित्य मेरे ही ध्यानमें तल्लीन रहते हैं; वे मुझे प्राणोंसे भी अधिक प्रिय हैं। उनके स्पर्शमात्रसे वायु और अग्नि पवित्र हो जाते हैं। मेरे भक्तोंके चले जानेपर सभी वर्ण एक हो जायँगे और मेरे भक्तोंसे शून्य हुई पृथ्वीपर कलियुगका पूरा साम्राज्य हो जायगा।

इसी अवसरपर वहाँ श्रीकृष्णके शरीरसे एक चार-भुजाधारी पुरुष प्रकट हुआ। उसकी प्रभा सैकड़ों चन्द्रमाओंको लज्जित कर रही थी। वह श्रीवत्स-चिह्नसे विभूषित था और उसके हाथोंमें

शङ्ख, चक्र, गदा और पद्म शोभा पा रहे थे। वह एक सुन्दर रथपर सवार होकर क्षीरसागरको चला गया। तब स्वयं मूर्तिमती सिन्धुकन्या भी उनके पीछे चली गयीं। जगत्के पालनकर्ता विष्णुके श्वेतद्वीप चले जानेपर श्रीकृष्णके मनसे उत्पन्न हुई मनोहरा मर्त्यलक्ष्मीने भी उनका अनुगमन किया। इस प्रकार उस शुद्ध सत्त्वस्वरूपके दो रूप हो गये। उनमें दक्षिणाङ्ग दो भुजाधारी गोप-बालकके रूपमें प्रकट हुआ। वह नूतन जलधरके समान श्याम और पीताम्बरसे शोभित था; उसके मुखसे सुन्दर वंशी लगी हुई थी; नेत्र कमलके समान विशाल थे; वह शोभासम्पन्न तथा मन्द मुस्कानसे युक्त था। वह सौ करोड़ चन्द्रमाओंके समान सौन्दर्यशाली, सौ करोड़ कामदेवोंकी-सी प्रभावाला, परमानन्दस्वरूप, परिपूर्णतम, प्रभु, परमधाम, परब्रह्मस्वरूप, निर्गुण, सबका परमात्मा, भक्तानुग्रहमूर्ति, अविनाशी शरीरवाला, प्रकृतिसे पर और ऐश्वर्यशाली ईश्वर था। योगीलोग जिसे सनातन ज्योतिरूप जानते हैं और उस ज्योतिके भीतर जिसके नित्य रूपको भक्तिके सहारे समझ पाते हैं। विचक्षण वेद जिसे सत्य, नित्य और आद्य बतलाते हैं, सभी देवता जिसे स्वेच्छामय परम प्रभु कहते हैं, सारे सिद्धशिरोमणि तथा मुनिवर जिसे सर्वरूप कहकर पुकारते हैं, योगिराज शंकर जिसका नाम अनिर्वचनीय रखते हैं, स्वयं ब्रह्मा जिसे कारणके कारणरूपसे प्रख्यात करते हैं और शेषनाग जिस नौ प्रकारके रूप धारण करनेवाले ईश्वरको अनन्त कहते हैं; छः प्रकारके धर्म ही उनके छः रूप हैं, फिर एक रूप वैष्णवोंका, एक रूप वेदोंका और एक रूप पुराणोंका है; इसीलिये वे नौ प्रकारके कहे जाते हैं। जो मत शंकरका है, उसी मतका आश्रय ले न्यायशास्त्र जिसे अनिर्वचनीय रूपसे निरूपण करता है, दीर्घदर्शी वैशेषिक जिसे नित्य बतलाते हैं; सांख्य उन देवको सनातन ज्योतिरूप, मेरा अंशभूत वेदान्त सर्वरूप और सर्वकारण, पतञ्जलिमतानुयायी अनन्त, वेदगण सत्यस्वरूप, पुराण स्वेच्छामय और भक्तगण नित्यविग्रह कहते हैं; वे ही ये गोलोकनाथ श्रीकृष्ण गोकुलमें वृन्दावन नामक पुण्यवनमें गोपवेष धारण करके नन्दके पुत्ररूपसे अवतीर्ण हुए हैं। ये राधाके प्राणपति हैं। ये ही वैकुण्ठमें चार-भुजाधारी महालक्ष्मीपति स्वयं भगवान् नारायण हैं; जिनका नाम मुक्ति-प्राप्तिका कारण है।

नारद! जो मनुष्य एक बार भी 'नारायण' नामका उच्चारण कर लेता है; वह तीन सौ कल्पोंतक गङ्गा आदि सभी तीर्थोंमें स्नान करनेका फल पा लेता है। तदनन्तर जो शङ्ख, चक्र, गदा और पद्म धारण करते हैं; जिनके वक्षःस्थलमें श्रीवत्सका चिह्न शोभा देता है; मणिश्रेष्ठ कौस्तुभ और वनमालासे जो सुशोभित होते हैं; वेद जिनकी स्तुति करते हैं; वे भगवान् नारायण सुनन्द, नन्द और कुमुद आदि पार्षदोंके साथ विमानद्वारा अपने स्थान वैकुण्ठको चले गये। उन वैकुण्ठनाथके चले जानेपर राधाके स्वामी स्वयं श्रीकृष्णने अपनी वंशी बजायी, जिसका सुरीला शब्द त्रिलोकीको मोहमें डालनेवाला था। नारद! उस शब्दको सुनते ही पार्वतीके अतिरिक्त सभी देवतागण और मुनिगण मूर्च्छित हो गये और उनकी चेतना लुप्त हो गयी। तब जो भगवती विष्णुमाया, सर्वरूपा, सनातनी, परब्रह्मस्वरूपा, परमात्मस्वरूपिणी सगुणा, निर्गुणा, परा और स्वेच्छामयी हैं; वे सती-साध्वी देवी पार्वती सनातन भगवान् श्रीकृष्णसे बोलीं।

पार्वतीने कहा—प्रभो! गोलोकस्थित रासमण्डलमें मैं ही अपने एक राधिकारूपसे रहती हूँ। इस समय गोलोक रासशून्य हो गया है; अतः आप मुक्ता और माणिक्यसे विभूषित रथपर आरूढ़ हो वहाँ जाइये और उसे परिपूर्ण कीजिये। आपके वक्षःस्थलपर वास करनेवाली परिपूर्णतमा देवी मैं ही हूँ। आपकी आज्ञासे वैकुण्ठमें वास

करनेवाली महालक्ष्मी मैं ही हूँ। वहीं श्रीहरिके वामभागमें स्थित रहनेवाली सरस्वती भी मैं ही हूँ। मैं आपकी आज्ञासे आपके मनसे उत्पन्न हुई सिन्धुकन्या हूँ। ब्रह्माके संनिकट रहनेवाली अपनी कलासे प्रकट हुई वेदमाता सावित्री मेरा ही नाम है। पहले सत्ययुगमें आपकी आज्ञासे मैंने समस्त देवताओंके तेजोंमें अपना वासस्थान बनाया और उससे प्रकट होकर देवीका शरीर धारण किया। उसी शरीरसे मेरेद्वारा लीलापूर्वक शुम्भ आदि दैत्य मारे गये। मैं ही दुर्गासुरका वध करके 'दुर्गा', त्रिपुरका संहार करनेपर 'त्रिपुरा' और रक्तबीजको मारकर 'रक्तबीजविनाशिनी' कहलाती हूँ। आपकी आज्ञासे मैं सत्यस्वरूपिणी दक्षकन्या 'सती' हुई। वहाँ योगधारणद्वारा शरीरका त्याग करके आपके ही आदेशसे पुनः गिरिराजनन्दिनी 'पार्वती' हुई; जिसे आपने गोलोकस्थित रासमण्डलमें शंकरको दे दिया था। मैं सदा विष्णुभक्तिमें रत रहती हूँ; इसी कारण मुझे वैष्णवी और विष्णुमाया कहा जाता है। नारायणकी माया होनेके कारण मुझे लोग नारायणी कहते हैं। मैं श्रीकृष्णकी प्राणप्रिया, उनके प्राणोंकी अधिष्ठात्री देवी और वासुस्वरूप महाविष्णुकी जननी स्वयं राधिका हूँ। आपके आदेशसे मैंने अपनेको पाँच रूपोंमें विभक्त कर दिया; जिससे पाँचों प्रकृति मेरा ही रूप हैं। मैं ही घर-घरमें कला और कलांशसे प्रकट हुई वेदपत्नियोंके रूपमें वर्तमान हूँ। महाभाग! वहाँ गोलोकमें मैं विरहसे आतुर हो गोपियोंके साथ सदा अपने आवासस्थानमें चारों ओर चक्कर काटती रहती हूँ; अतः आप शीघ्र ही वहाँ पधारिये।

नारद! पार्वतीके वचन सुनकर रसिकेश्वर श्रीकृष्ण हँसे और रत्ननिर्मित विमानपर सवार हो उत्तम गोलोकको चले गये। तब सनातनी विष्णुमाया स्वयं पार्वतीने मायारूपिणी वंशीके नादसे आच्छन्न हुए देवगणको जगाया। वे सभी हरिनामोच्चारण करके विस्मयाविष्ट हो अपने-अपने स्थानको चले गये। श्रीदुर्गा भी हर्षमग्न हो शिवके साथ अपने नगरको चली गयीं।

तदनन्तर सर्वज्ञा राधा हर्षविभोर हो आते हुए प्राणवल्लभ श्रीकृष्णके स्वागतार्थ गोपियोंके साथ आगे आयीं। श्रीकृष्णको समीप आते देखकर सती राधिका रथसे उतर पड़ीं और सखियोंके साथ आगे बढ़कर उन्होंने उन जगदीश्वरके चरणोंमें सिर झुकाकर प्रणाम किया। ग्वालों और गोपियोंके मनमें सदा श्रीकृष्णके आगमनकी लालसा बनी रहती थी; अतः उन्हें आया देखकर वे आनन्दमग्न हो गये। उनके नेत्र और मुख हर्षसे खिल उठे। फिर तो वे दुन्दुभियाँ बजाने लगे।

उधर विरजा नदीको पार करके जगत्पति श्रीकृष्णकी दृष्टि ज्यों ही राधापर पड़ी, त्यों ही वे रथसे उतर पड़े और राधिकाके हाथको अपने हाथमें लेकर शतशृङ्ग पर्वतपर घूमने चले गये। वहाँ सुरम्य रासमण्डल, अक्षयवट और पुण्यमय वृन्दावनको देखते हुए तुलसी-काननमें जा पहुँचे। वहाँसे मालतीवनको चले गये। फिर श्रीकृष्णने कुन्दवन तथा माधवी-काननको बायें करके मनोरम चम्पकारण्यको दाहिने छोड़ा। पुनः सुरुचिर चन्दनकाननको पीछे करके आगे बढ़े तो सामने राधिकाका परम रमणीय भवन दीख पड़ा। वहाँ जाकर वे राधाके साथ श्रेष्ठ रत्नसिंहासनपर विराजमान हुए। फिर उन्होंने सुवासित जल पिया तथा कपूरयुक्त पानका बीड़ा ग्रहण किया। तत्पश्चात् वे सुगन्धित चन्दनसे चर्चित पुष्पशय्यापर सोये और रस-सागरमें निमग्न हो सुन्दरी राधाके साथ बिहार करने लगे।

नारद! इस प्रकार मैंने रमणीय गोलोकारोहणके विषयमें अपने पिता धर्मके मुखसे जो कुछ सुना था, वह सब तुम्हें बता दिया। अब पुनः और क्या सुनना चाहते हो? (अध्याय १२८)

नारायणके आदेशसे नारदका विवाहके लिये उद्यत हो ब्रह्मलोकमें जाना, ब्रह्माका दल-बलके साथ राजा सृंजयके पास आना, सृंजय-कन्या और नारदका विवाह, सनत्कुमारद्वारा नारदको श्रीकृष्ण-मन्त्रोपदेश, महादेवजीका उन्हें श्रीकृष्णका ध्यान और जप-विधि बतलाना, तपके अन्तमें नारदका शरीर त्यागकर श्रीहरिके पादपद्ममें लीन होना

नारदने कहा—महाभाग! मेरी जो कुछ सुननेकी लालसा थी; वह सब कुछ सुन लिया। अब कुछ भी अवशिष्ट नहीं है। कामनाकी पूर्ति करनेवाला यह ब्रह्मवैवर्तपुराण कैसा अद्भुत है! जगद्गुरो! मैं तप करनेके लिये हिमालयपर जाना चाहता हूँ, इसके लिये मुझे आज्ञा दीजिये। अथवा अब मैं क्या करूँ, वह मुझे बतलानेकी कृपा करें।

श्रीनारायण बोले—नारद! इस समय तो तुम ब्रह्माके पुत्र हो; परंतु पूर्वजन्ममें तुम उपबर्हण नामक गन्धर्व थे। तुम्हारे पचास पत्नियाँ थीं। उनमेंसे एक सती-साध्वी सुन्दरी कामिनीने तपस्याद्वारा भगवान् शंकरकी आराधना की और वररूपमें नारदको अपना मनोनीत पति प्राप्त किया। वही राजा सृंजयकी कन्या होकर पैदा हुई है। उसका नाम स्वर्णवी (स्वर्णष्ठीवी) है। वह इच्छाकी सहोदरा बहिन है। वह सुन्दरियोंमें परम सुन्दरी, कोमलाङ्गी, लक्ष्मीकी कला, पतिव्रता, महाभागा, मनोहरा, अत्यन्त प्रिय बोलनेवाली, कामुकी, कमनीया और सदा सुस्थिर यौवनवाली है। तुम उसके साथ विवाह कर लो; क्योंकि शंकरकी आज्ञा व्यर्थ कैसे हो सकती है? ब्रह्माने जो प्राक्तन कर्म लिख दिया है; उसे कौन मिटा सकता है? अपना किया हुआ शुभ अथवा अशुभ कर्म अवश्य ही भोगना पड़ता है; चाहे सौ करोड़ कल्प बीत जायँ तो भी बिना भोग किये कर्मका नाश नहीं होता।

सूतजी कहते हैं—शौनक! नारायणका कथन सुनकर नारदका मन खिन्न हो गया। वे नारायणको प्रणाम करके शीघ्र ही राजा सृंजयकी राजधानीकी ओर चल दिये।

शौनकने कहा—महाभाग सूतजी! अहो, यह कैसा परम अद्भुत, पुरातन, सरस, अपूर्व रहस्य है! इसे तो मैंने सुन लिया। अब मैं नारदका विवाह-वृत्तान्त सुनना चाहता हूँ; क्योंकि नारदमुनि तो अतीन्द्रिय और ब्रह्माके पुत्र थे।

सूतजी कहते हैं—शौनक! नारदपर मोहने अपना अधिकार जमा लिया था; अतः वे विष्णु-व्रतपरायणा महाभागा तपस्विनी सृंजय-कन्याको देखकर ब्रह्माजीकी रमणीय सभामें गये। वह सभा सभी देवताओंसे खचाखच भरी थी। वहाँ उन्होंने पिता ब्रह्माको प्रणाम करके उनसे सारा रहस्य कह सुनाया। उस शुभ समाचारको सुनकर ब्रह्माका मुख प्रसन्नतासे खिल उठा। फिर तो जगत्पति ब्रह्मा अपने तपस्वी पुत्र नारदसे बातचीत करके शुभ मुहूर्तमें देवताओंके साथ पुत्रको आगे करके रत्ननिर्मित विमानद्वारा सृंजयके महलको चल पड़े। उस समाचारको सुनकर राजा सृंजयने अपनी रत्ननिर्मित आभूषणोंसे विभूषित सुन्दरी कन्याको लेकर हर्षपूर्वक नारदको सौंप दिया। साथ ही अपना सारा मणिमुक्ता आदि दहेजमें दिया। फिर हाथ जोड़कर उन्होंने वह सारा कार्य सम्पन्न किया। तत्पश्चात् योगिश्रेष्ठ राजा सृंजय अपनी कन्या ब्रह्माको समर्पित करके 'वत्से! वत्से!' यों कहकर फूट-फूटकर रोते हुए कहने लगे—'कमललोचने! तुम मेरे घरको सूना करके कहाँ जा रही हो। बेटी! तुम्हें त्यागकर तो मैं जीते-जी मृतक-तुल्य हो गया हूँ; अतः मैं घोर

वनमें चला जाऊँगा।' तब वह कन्या रोते हुए पिता और रोती हुई माताको प्रणाम करके स्वयं भी रोती हुई ब्रह्माके रथपर सवार हुई। ब्रह्मा हर्षमग्न हो भार्यासहित पुत्रको लेकर देवेन्द्रों और मुनियोंके साथ ब्रह्मलोकको प्रस्थित हुए। वहाँ पहुँचकर उन्होंने दुन्दुभिका घोष कराया और ब्राह्मणों, देवताओं तथा सिद्धोंको भोजनसे तृप्त किया। मुनिश्रेष्ठ नारद तो अपने पूर्वकर्मसे बाधित थे; क्योंकि विप्रवर! जिसका जो प्राक्तन कर्म होता है; उसका उल्लङ्घन करना दुष्कर है। उसे भला कौन हटा सकता है?

इस प्रकार विवाह करके उससे विरत हो मुनिश्रेष्ठ नारद ब्रह्मलोकमें मनोहर वटवृक्षके नीचे बैठे हुए थे। उसी समय वहाँ साक्षात् भगवान् सनत्कुमार आ पहुँचे। बालककी तरह उनका नग्न-वेष था। वे ब्रह्मतेजसे प्रज्वलित हो रहे थे। सृष्टिके पूर्वमें उनकी जो आयु थी, वही पाँच वर्षकी अवस्था अब भी थी। उनका चूडाकर्म और उपनयन-संस्कार नहीं हुआ था तथा वे वेदाध्ययन और संध्यासे रहित थे। उनके नारायण गुरु हैं। वे अनन्त कल्पोंसे तीनों भाइयोंके साथ कृष्ण-मन्त्रका जप कर रहे थे। वे वैष्णवोंके अग्रणी, ईश्वर और ज्ञानियोंके गुरु थे। सत्पुरुषोंमें श्रेष्ठ अपने भाई सनत्कुमारको सहसा निकट आया देखकर नारद दण्डकी भाँति भूमिपर लेट गये और चरणोंमें सिर रखकर उन्हें प्रणाम किया। तब बालकरूप सनत्कुमारजी हँसकर नारदसे पारमार्थिक वचन बोले।

सनत्कुमारजीने कहा—अरे भाई! क्या कर रहे हो? युवतीपते! कुशल तो है न? स्त्री-पुरुषका प्रेम सदा बढ़ता रहता है और वह नित्य नूतन ही होता है। वह ज्ञानमार्गकी साँकल, भक्तिद्वारका किवाड़, मोक्षमार्गका व्यवधान और चिरकालिक बन्धनका कारण है; फिर भी पापी नराधम अमृत-बुद्धिसे उस विषको पीते हैं। जिसका मन परम पुरुष नारायणको छोड़कर विषयमें रचा-पचा रहता है, उसे मानो मायाने ठग लिया है; जिससे वह अमृतका त्याग करके विषका सेवन करता है। अतः भाई! इस मायामयी प्रियतमा पत्नीको छोड़ो और तपके लिये निकल जाओ। परम पुण्यमय भारतवर्षमें जाकर तपस्याद्वारा माधवका भजन करो। अपना पद प्रदान करनेवाले अपने स्वामी परम पुरुष नारायणके स्थित रहते जो विषयी पुरुष विषयोंमें मत्त रहता है; उसे निश्चय ही मायाने ठग लिया है। अब तुम मेरे 'कृष्ण' इस दो अक्षरवाले मन्त्रको ग्रहण करो। यह मन्त्र सभी मन्त्रोंका सार तथा परात्पर है। सभी पुराणों, चारों वेदों, धर्मशास्त्रों और तन्त्रोंमें इससे उत्तम दूसरा मन्त्र नहीं है। इसे नारायणने मुझे सूर्यग्रहणके अवसरपर पुष्करक्षेत्रमें प्रदान किया था। असंख्यों कल्पोंसे इसका जप करके मैं सर्वपूजित हो भ्रमण करता रहता हूँ। यों कहकर उन्होंने नारदको स्नान कराया और फिर उन्हें उस परमोत्कृष्ट मन्त्रका उपदेश दिया, जिसे वे मणियोंकी पावन मालापर रात-दिन जपते रहते हैं।

इस प्रकार वैष्णवोंके अग्रणी सनत्कुमारजी नारदको वह मन्त्र और शुभाशीर्वाद देकर सनातन भगवान् श्रीकृष्णका दर्शन करनेके लिये गोलोकको चले गये। इधर जब नारदको वह सर्वसिद्धिप्रद श्रीकृष्णमें निश्चल भक्ति प्रदान करनेवाला तथा कर्मोंका उच्छेदक श्रेष्ठ मन्त्र प्राप्त हो गया; तब वे अपनी मायामयी भार्याका त्याग करके तपस्या करनेके लिये भारतवर्षमें आये। यहाँ उन्हें कृतमाला नदीके तटपर भगवान् शंकरके दर्शन हुए। सहसा उन्हें देखकर नारदमुनिने शिवजीके चरणोंमें सिर झुकाकर प्रणाम किया। तब भक्तवत्सल जगदीश्वर शिव अपने भक्त नारदसे बोले।

श्रीमहादेवजीने कहा—अहो नारद! अपने तेजसे उद्भासित होते हुए तुम्हें देखकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई है; क्योंकि जिस दिन भक्तोंका दर्शन

प्राप्त हो जाय, वह शरीरधारियोंके लिये उत्तम दिन माना जाता है। भक्तोंके साथ समागम होना प्राणियोंके लिये परम लाभ है। जिसे वैष्णवका दर्शन प्राप्त हो गया, उसने मानो समस्त तीर्थोंमें स्नान कर लिया। जो समस्त तन्त्रोंमें परम दुर्लभ है, वह 'कृष्ण' रूप महामन्त्र क्या तुम्हें प्राप्त हो गया? इस मन्त्रको मैंने अपने पुत्र गणेश और स्कन्दको दिया था। श्रीकृष्णने इसे गोलोकस्थित रासमण्डलमें मुझे, ब्रह्मा और धर्मको बतलाया था। धर्मने नारायणको तथा ब्रह्माने सनत्कुमारको इसका उपदेश दिया था। वही मन्त्र सनत्कुमारने तुम्हें प्रदान किया है। इस मन्त्रके ग्रहणमात्रसे ही मनुष्य नारायणस्वरूप हो जाता है। इसके जपके लिये शुभ-अशुभ समय-असमयका कोई विचार नहीं है। पाँच लाख जपसे ही इसका पुरश्चरण पूर्ण हो जाता है। इसका ध्यान पापनाशक तथा कर्ममूलका उच्छेदक है। शास्त्रमें उसका वर्णन किया गया है, उसी ढंगसे वैष्णवको श्रीकृष्णका ध्यान करना चाहिये। (वह ध्यान यों है—)

'नूतन जलधरके समान जिनका श्यामवर्ण है, जिनकी किशोर-अवस्था है, जो पीताम्बरसे सुशोभित हैं, सौ करोड़ चन्द्रमाओंके समान परम अनुपम सौन्दर्य धारण किये हुए हैं, अमूल्य रत्नोंके बने हुए भूषणसमूह जिनकी शोभा बढ़ा रहे हैं, जिनके सर्वाङ्गमें चन्दनका अनुलेप हुआ है, कौस्तुभमणिद्वारा जिनकी विशेष शोभा हो रही है, जिनकी मालतीकी मालाओंसे मण्डित शिखामें लगे हुए मयूरपिच्छकी निराली छबि हो रही है, जिनके प्रसन्नमुखपर मन्द मुस्कानकी छटा छायी हुई है, शिव आदि देवगण जिनकी नित्य उपासना करते रहते हैं तथा जो ध्यानद्वारा असाध्य, दुराराध्य, निर्गुण, प्रकृतिसे पर, सबके परमात्मा, भक्तानुग्रहमूर्ति, वेदोंद्वारा अनिर्वचनीय और सर्वेश्वर हैं; उन श्रेष्ठ श्रीकृष्णका मैं भजन करता हूँ।'

नारद! जो परमानन्द, सत्य, नित्य और परात्पर हैं, उन सनातन भगवान् श्रीकृष्णका इस ध्यान-विधिसे ध्यान करके भजन करो। इतना कहकर परमेश्वर शम्भु अपने स्थानको चले गये। तब नारदने उन जगन्नाथको प्रणाम करके तपस्यामें मन लगाया। तत्पश्चात् नारद श्रीहरिका स्मरण करके योगधारणाद्वारा शरीरको त्यागकर पद्माद्वारा समर्चित श्रीहरिके चरणकमलमें विलीन हो गये। (अध्याय १२९)

पुराणोंके लक्षण और उनकी श्लोक-संख्याका निरूपण, ब्रह्मवैवर्तपुराणके पठन-श्रवणके माहात्म्यका वर्णन करके सूतजीका सिद्धाश्रमको प्रयाण

तदनन्तर अग्नि तथा स्वर्णकी उत्पत्तिका प्रसङ्ग सुनाकर शौनकजीके पूछनेपर सूतजीने ब्रह्मवैवर्तपुराणके समस्त विषयोंकी अनुक्रमणिका सुनायी।

फिर शौनकजीने कहा—वत्स! ब्रह्मवैवर्त-पुराणमें जिस फलका निरूपण हुआ है, वह निर्विघ्नतापूर्वक मोक्षका कारण है। उसे सुनकर आज मेरा जन्म लेना सफल हो गया और जीवन सुजीवन बन गया। तात! अभी मुझे कुछ और निवेदन करना है; यदि मुझे अभयदान दो तो मैं उसे प्रकट करूँ।

तब सूतजी बोले—महाभाग शौनकजी! भय छोड़ दीजिये और आपकी जो इच्छा हो, उसे पूछिये। मैं जो-जो भी मनोहर गोपनीय विषय होगा, सब आपसे वर्णन करूँगा।

शौनकने कहा—पुत्रक! अब मेरी पुराणोंके लक्षण, उनकी श्लोक-संख्या और उनके श्रवणका फल सुननेकी अभिलाषा है।

सूतजी कहते हैं—शौनकजी! मैं अपनी बुद्धिके अनुसार विस्तृत पुराणों, इतिहासों, संहिताओं और पाञ्चरात्रोंका वर्णन करता हूँ, सुनिये। विप्रवर! सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मन्वन्तर और वंशानुचरित—इन पाँचों लक्षणोंसे जो युक्त हो, उसे पुराण कहते हैं। विद्वान् लोग उपपुराणोंका भी यही लक्षण बतलाते हैं। अब प्रधान पुराणोंका लक्षण आपको बतलाता हूँ—सृष्टि, विसृष्टि, स्थिति, उनका पालन, कर्मोंकी वासना-वार्ता, मनुओंका क्रम, प्रलयोंका वर्णन, मोक्षका निरूपण, श्रीहरिका गुण-गान तथा देवताओंका पृथक्-पृथक् वर्णन—प्रधान पुराणोंके ये दस लक्षण और बतलाये जाते हैं। अब इन पुराणोंकी श्लोक-संख्याका वर्णन करता हूँ, सुनिये।

शौनकजी! परमोत्कृष्ट ब्रह्मपुराणकी श्लोक-संख्या दस हजार और पद्मपुराणकी पचपन हजार कही गयी है। विद्वान् लोग विष्णुपुराणको तेईस हजार श्लोकोंवाला बतलाते हैं। शिवपुराणमें चौबीस हजार श्लोक बतलाये जाते हैं। श्रीमद्भागवतपुराण अठारह हजार श्लोकोंमें ग्रथित है। नारदपुराणकी श्लोक-संख्या पचीस हजार बतलायी गयी है। पण्डितलोग मार्कण्डेयपुराणमें नौ हजार श्लोक बतलाते हैं। परम रुचिर अग्निपुराण पंद्रह हजार चार सौ श्लोकोंवाला कहा गया है। पुराणप्रवर भविष्यमें चौदह सहस्र पाँच सौ श्लोक बतलाये जाते हैं। ब्रह्मवैवर्तपुराणमें अठारह हजार श्लोक हैं। विद्वज्जन इसे सभी पुराणोंका सार बतलाते हैं। श्रेष्ठ लिङ्गपुराण ग्यारह हजार श्लोकोंका है। वाराहपुराणकी श्लोक-संख्या चौबीस हजार कही गयी है। सज्जनोंने उत्तम स्कन्दपुराणको ग्यारह हजार एक सौ अथवा इक्यासी हजार एक सौ श्लोकोंवाला निरूपित किया है। पण्डितोंने वामनपुराणकी दस हजार, कूर्मपुराणकी सतरह हजार और मत्स्यपुराणकी चौदह हजार श्लोक-संख्या बतलायी है। गरुड़पुराण उन्नीस हजार और उत्तम ब्रह्माण्डपुराण बारह हजार श्लोकोंवाला कहा गया है। इस प्रकार सभी पुराणोंकी श्लोक-संख्या चार लाख बतलायी जाती है। इस प्रकार पुराणवेत्ता लोग अठारह पुराण ही बतलाते हैं। इसी तरह उपपुराणोंकी भी संख्या अठारह ही कही गयी है।

महाभारतको इतिहास कहते हैं। वाल्मीकीय रामायण काव्य है और श्रीकृष्णके माहात्म्यसे परिपूर्ण पञ्चरात्रोंकी संख्या पाँच है। वासिष्ठ, नारदीय, कापिल, गौतमीय और सनत्कुमारीय—ये ही पाँचों श्रेष्ठ पञ्चरात्र हैं। संहिताएँ भी पाँच बतलायी जाती हैं; जो सभी श्रीकृष्णकी भक्तिसे ओतप्रोत हैं। इनके नाम हैं—ब्रह्मसंहिता, शिवसंहिता, प्रह्लादसंहिता, गौतमसंहिता और कुमारसंहिता। शौनकजी! इस प्रकार शास्त्रका भण्डार तो बहुत बड़ा है, तथापि मैंने अपनी जानकारीके अनुसार आपको क्रमशः पृथक्-पृथक् सब बतला दिया है।

मुने! साक्षात् भगवान् श्रीविष्णुने गोलोकस्थित रासमण्डलमें अपने भक्त ब्रह्माको यह पुराण बतलाया था। फिर ब्रह्माने धर्मात्मा धर्मको, धर्मने नारायणमुनिको, नारायणने नारदको और नारदने मुझ भक्तको इसका उपदेश किया। मुनिवर! वही श्रेष्ठ पुराण इस समय मैं आपसे वर्णन कर रहा हूँ। यह अभीप्सित ब्रह्मवैवर्तपुराण परम दुर्लभ है। जो विश्वसमूहका वरण करता है, जीवधारियोंका परमात्मस्वरूप है; वही ब्रह्म कर्मनिष्ठोंके कर्मोंका साक्षीरूप है। उस ब्रह्मका तथा उसकी अनुपम विभूतिका जिसमें विवरण किया गया है; इसी कारण विद्वान् लोग इसे 'ब्रह्मवैवर्त' कहते हैं। यह पुराण पुण्यप्रद, मङ्गलस्वरूप और मङ्गलोंका दाता है। इसमें नये-नये अत्यन्त गोपनीय रमणीय रहस्य भरे पड़े हैं। यह हरिभक्तिप्रद, दुर्लभ हरिदास्यका दाता, सुखद, ब्रह्मकी प्राप्ति करनेवाला, साररूप और शोक-संतापका नाशक है।

जैसे सरिताओंमें शुभकारिणी गङ्गा तत्क्षण ही मुक्ति प्रदान करनेवाली हैं, तीर्थोंमें पुष्कर और पुरियोंमें काशी जैसे शुद्ध है, सभी वर्षोंमें जैसे भारतवर्ष शुभ और तत्काल मुक्तिप्रद है, जैसे पर्वतोंमें सुमेरु, पुष्पोंमें पारिजात-पुष्प, पत्रोंमें तुलसी-पत्र, व्रतोंमें एकादशीव्रत, वृक्षोंमें कल्पवृक्ष, देवताओंमें श्रीकृष्ण, ज्ञानिशिरोमणियोंमें महादेव, योगीन्द्रोंमें गणेश्वर, सिद्धेन्द्रोंमें एकमात्र कपिल, तेजस्वियोंमें सूर्य, वैष्णवोंमें अग्रगण्य भगवान् सनत्कुमार, राजाओंमें श्रीराम, धनुर्धारियोंमें लक्ष्मण, देवियोंमें महापुण्यवती सती दुर्गा, श्रीकृष्णकी प्रेयसियोंमें प्राणाधिका राधा, ईश्वरियोंमें लक्ष्मी तथा पण्डितोंमें सरस्वती सर्वश्रेष्ठ हैं; उसी प्रकार सभी पुराणोंमें ब्रह्मवैवर्त श्रेष्ठ है। इससे विशिष्ट, सुखद, मधुर, उत्तम पुण्यका दाता और संदेहनाशक दूसरा कोई पुराण नहीं है। यह इस लोकमें सुखद, सम्पूर्ण सम्पत्तियोंका उत्तम दाता, शुभद, पुण्यद, विघ्नविनाशक और उत्तम हरि-दास्य प्रदान करनेवाला है तथा परलोकमें प्रभूत आनन्द देनेवाला है।

पुत्रक! सम्पूर्ण यज्ञों, तीर्थों, व्रतों और तपस्याओंका तथा समूची पृथ्वीकी प्रदक्षिणाका भी फल इसके फलकी समतामें नगण्य है। चारों वेदोंके पाठसे भी इसका फल श्रेष्ठ है। जो संयत-चित्त होकर इस पुराणको श्रवण करता है; उसे गुणवान् विद्वान् वैष्णव पुत्र प्राप्त होता है। यदि कोई दुर्भगा नारी इसे सुनती है तो उसे पतिके सौभाग्यकी प्राप्ति होती है। इस पुराणके श्रवणसे मृतवत्सा, काकवन्ध्या आदि पापिनी स्त्रियोंको भी चिरजीवी पुत्र सुलभ हो जाता है। अपुत्रको पुत्र, भार्यारहितको पत्नी और कीर्तिहीनको उत्तम यश मिल जाता है। मूर्ख पण्डित हो जाता है। रोगी रोगसे, बँधा हुआ बन्धनसे, भयभीत भयसे और आपत्तिग्रस्त आपत्तिसे मुक्त हो जाता है। अरण्यमें, निर्जन मार्गमें अथवा दावाग्निमें फँसकर भयभीत हुआ मनुष्य इसके श्रवणसे निश्चय ही उस भयसे छूट जाता है। इसके श्रवणसे पुण्यवान् पुरुषपर कुष्ठरोग, दरिद्रता, व्याधि और दारुण शोकका प्रभाव नहीं पड़ता। ये सभी पुण्यहीनोंपर ही प्रभाव डालते हैं। जो मनुष्य अत्यन्त दत्तचित्त हो इसका आधा श्लोक अथवा चौथाई श्लोक सुनता है, उसे बहुसंख्यक गोदानका पुण्य प्राप्त होता है—इसमें संशय नहीं है। जो मनुष्य शुद्ध समयमें जितेन्द्रिय होकर संकल्पपूर्वक वक्ताको दक्षिणा देकर भक्ति-भावसहित इस चार खण्डोंवाले पुराणको सुनता है, वह अपने असंख्य जन्मोंके बचपन, कौमार, युवा और वृद्धावस्थाके संचित पापसे निःसंदेह मुक्त हो जाता है तथा श्रीकृष्णका रूप धारण करके रत्ननिर्मित विमानद्वारा अविनाशी गोलोकमें जा पहुँचता है। वहाँ उसे श्रीकृष्णकी दासता प्राप्त हो जाती है, यह ध्रुव है। असंख्य ब्रह्माओंका विनाश होनेपर भी उसका पतन नहीं होता। वह श्रीकृष्णके समीप पार्षद होकर चिरकालतक उनकी सेवा करता है।

मुने! भलीभाँति स्नान करके शुद्ध हो तथा इन्द्रियोंको वशमें करके 'ब्रह्मखण्ड' की कथा सुननेके पश्चात् श्रोताको चाहिये कि वह वाचकको खीर-पूड़ी और फलका भोजन कराये, पानका बीड़ा समर्पित करे और सुवर्णकी दक्षिणा दे। फिर चन्दन, श्वेत पुष्पोंकी माला और मनोहर महीन वस्त्र श्रीकृष्णको निवेदित करके वाचकको प्रदान करे। अमृतोपम सुन्दर कथाओंसे युक्त 'प्रकृतिखण्ड' को सुनकर वक्ताको दधियुक्त अन्न खिलाकर स्वर्णकी दक्षिणा देनी चाहिये और फिर भक्तिपूर्वक सुन्दर सवत्सा गौका दान देना चाहिये। विघ्न-नाशके लिये 'गणपतिखण्ड' को सुनकर जितेन्द्रिय श्रोताको उचित है कि वह वाचकको सोनेका यज्ञोपवीत, श्वेत अश्व, छाता, पुष्पमाला, स्वस्तिकके आकारकी मिठाई, तिलके लड्डू और काल-देशानुसार उपलब्ध होनेवाले

पके फल प्रदान करे। भक्तिपूर्वक 'श्रीकृष्ण-जन्मखण्ड' को श्रवण करके भक्तको चाहिये कि वाचकको रत्नकी सुन्दर अँगूठी दान करे और फिर महीन वस्त्र, हार, उत्तम स्वर्णकुण्डल, माला, सुन्दर पालकी, पके हुए फल, दूध और अपना सर्वस्व दक्षिणामें देकर उनकी स्तुति करे। इसके बाद सौ ब्राह्मणोंको परम आदरके साथ भोजन कराना चाहिये। जो विष्णुभक्त, शास्त्रपटु, पण्डित और शुद्धाचारी हो, ऐसे ही श्रेष्ठ ब्राह्मणको वाचक बनाना चाहिये। जो श्रीकृष्णसे विमुख, दुराचारी और उपदेश देनेमें अकुशल हो, ऐसे ब्राह्मणसे कथा नहीं सुननी चाहिये। नहीं तो, पुराण-श्रवण निष्फल हो जाता है। जो श्रीकृष्णकी भक्तिसे युक्त हो इस पुराणको सुनता है, वह श्रीहरिकी भक्ति और पुण्यका भागी होता है तथा उसके पूर्वजन्मके पाप नष्ट हो जाते हैं।

विप्रवर! इस प्रकार मैंने अपने गुरुजीके श्रीमुखसे जो कुछ सुना था, वह सब आपसे वर्णन कर दिया। अब मुझे जानेकी आज्ञा दीजिये; मैं नारायणाश्रमको जाना चाहता हूँ। यहाँ इस विप्र-समाजको देखकर नमस्कार करनेके लिये आ गया था; फिर आप लोगोंकी आज्ञा होनेसे उत्तम ब्रह्मवैवर्तपुराण भी सुना दिया। आप ब्राह्मणोंको मेरा नमस्कार प्राप्त हो। परमात्मा श्रीकृष्ण, शिव, ब्रह्मा और गणेशको नित्यशः बारंबार नमस्कार है। शौनकजी! जो सत्यस्वरूप, राधाके प्राणेश और तीनों गुणोंसे परे हैं; उन परब्रह्म श्रीकृष्णका आप मन-वचन-शरीरसे परमभक्तिपूर्वक रात-दिन भजन कीजिये। सरस्वती-देवीको नमस्कार है। पुराणगुरु व्यासजीको अभिवादन है। सम्पूर्ण विघ्नोंका विनाश करनेवाली दुर्गादेवीको अनेकशः प्रणाम है। शौनकजी! आप लोगोंके पुण्यमय चरणकमलोंका दर्शन करके आज मैं उस सिद्धाश्रमको जाना चाहता हूँ, जहाँ भगवान् गणेश विराजमान हैं।

(अध्याय १३०-१३१)

॥ श्रीकृष्णजन्मखण्ड सम्पूर्ण॥

॥ ब्रह्मवैवर्तपुराण समाप्त॥